पौराणिक आख्यानों का विकासात्मक अध्ययन

क० मुंशी हिन्दी तथा भाषा विज्ञान विद्यापीठ के तत्त्वावधान में
आगरा विश्वविद्यालय, आगरा की पी एच० डी० उपाधि
के लिए स्वीकृत शोध प्रबन्ध 'मध्ययुगीन सूफी
प्रेमाख्यानक काव्य में पौराणिक आख्यान'
का उत्तरार्द्ध



पौराणिक आख्यानों
का
विकासात्मक अध्ययन

डॉ० उमापति राय चन्देल
एम० ए०, पी एच० डी०

कोणार्क प्रकाशन
दिल्ली-११०००७

मूल्य तीस रुपये

प्रथम सस्करण १९७५

प्रकाशक कोणाक प्रकाशन
६१ एफ कमलानगर दिल्ली ११०००७

मुद्रक गजेन्द्र प्रिंटिंग प्रेस
नवीन शाहदरा दिल्ली ११००३२

PAURANIK AKHYANON KA VIKASATMAK ADHYAYAN

By

Dr UMAPATI RAI CHANDEL

पुण्यशीला

'माई

बिहसी देवी

की

पावन स्मति मे

प्राक्कथन

कन्हैयालाल मुंशी हिन्दी तथा भाषा विज्ञान विद्यापीठ, आगरा के तत्त्वावधान में, आगरा विश्वविद्यालय की पी एच० डी० उपाधि के लिए 'मध्ययुगीन हिन्दी सूफी प्रेमाख्यानक काव्य मे पौराणिक आख्यान' विषय पर कार्य करते समय मुझे लगा कि सूफियो द्वारा अपने काव्यो मे जिन भारतीय पौराणिक आख्यानो एव उपाख्यानो का प्रतीकात्मक दाष्टान्तिक आलकारिक उल्लेखात्मक, दार्शनिक और कथानक रूढिगत रूप मे प्रयोग किया गया है, उनका मूल स्रोत और विकास क्रम जानने का प्रयत्न किया जाना चाहिए।

जब मैंने इस दिशा मे कार्य आरम्भ किया, तब पहली कठिनाई सामने आयी किसी ऐसे सदर्भ ग्रन्थ की प्राप्ति मे जिससे यह पता चल सके कि कोई आख्यान सर्व प्रथम किस ग्रन्थ मे उल्लिखित है और बाद मे किन किन ग्रन्थो मे, कहा कहा आया है। हिन्दी मे सदर्भ-ग्रन्थो का नितान्त अभाव है। पुराण-कथाओ के सदर्भ कोश तो न के बराबर है—कम से कम जून १९६५ ई० तक तो जब मैंने अपना शोध प्रबन्ध प्रस्तुत किया, यही दशा थी। अग्रेजी मे डा० रामचन्द्र दीक्षितार द्वारा सपादित 'पुराण इन्डेक्स' (३ जिल्दो मे) और श्री मैक्डॉनेल के 'वैदिक इन्डेक्स' से ही कथाओ के स्रोत-सन्धान मे थोडी सहायता मिल सकी। 'वैदिक इन्डेक्स' मेरे लिए अधिक उपयोगी नही रहा क्योकि सूफियो द्वारा प्रयुक्त पौराणिक आख्यानो मे वैदिक स्रोत के आख्यानो की सख्या इनी गिनी ही है। 'पुराण इन्डेक्स' मे भी अधिक सहायता न मिल पायी, क्योकि उसमे 'ब्रह्म पुराण', 'विष्णु पुराण', 'भागवत पुराण' और 'मत्स्य पुराण' आदि चार-पाँच पुराणो की ही अनुक्रमणिका दी गयी है—सो भी पाद क्रम से, कथा क्रम से नही। ऐसी स्थिति मे, सभी पुराणो और उपपुराणो तथा रामायण महाभारत आदि ग्रन्थो मे अपने काम की कथाओ को मुझे खोजना पडा। अच्छे सदर्भ-ग्रन्थ उपलब्ध होते तो मेरा बहुत-सा श्रम बच जाता।

पुराणो की रचना का उद्देश्य सामान्य जन को रोचक एव रूपकात्मक शैली मे अध्यात्म धर्मशास्त्र, नीति शास्त्र, सृष्टि विज्ञान, इतिहास एव खगोल आदि का ज्ञान कराना है। इसलिए उनमे सकलित आख्यानो का अनेक दृष्टियो से अध्ययन किया जाना आवश्यक है। उनको कपोल-कल्पित, अप्रामाणिक मिथ्या और निरी गप्प मान बैठना अपने अज्ञान का ही परिचय देना है। पुराण-कथाओं के बाह्य आवरण का भेदकर उनके मूल तत्त्व तक पहुँचना निश्चय ही कोई आसान काम नहीं है। उसके लिए अनुसंधाता का चतुर होना आवश्यक है। प० माधवाचार्य के 'पुराण दिग्दर्शन' तथा श्री कालूराम

शास्त्री के 'पुराण-वम' म इस दिशा मे कुछ प्रयत्न हुआ ह परन्तु अभी बहुत-कुछ किया जाना शेष है।

हिन्दी का मध्यकालीन साहित्य तो अधिकाशत पुराणा का उपजीव्य है ही, परन्तु आधुनिक साहित्य भी पौराणिक आख्याना तथा पात्रा को नयी अथवत्ता और भगिमा प्रदान कर उनका प्रतीकात्मक या अन्य प्रकार स उपयोग कर रहा है। आधुनिक युग म बौद्धिक चेतना की प्रबलता के कारण पौराणिक आख्याना के विवेकीकरण का प्रयास दिखायी देता है। अलौकिकता अतिमानवीयता के स्थान पर पौराणिक चरित्रा को लौकिकता मानवीयता प्रदान करने की चेष्टा हुई है। अब आख्याना का प्रयोग केवल आख्यान-कथन के लिए नही वरन सोद्देश्य हो रहा है। चाहे मध्ययुगीन साहित्य की सदभगर्भिता को उदघाटित करने का प्रश्न हो या आधुनिक साहित्य की प्रतीकात्मक एव व्यग्यात्मक अभिव्यजना को समझने का पौराणिक आख्याना स परिचित होना किसी भी साहित्य अध्येता के लिए आवश्यक है। किसी आख्यान को उसके समस्त विकास क्रम के साथ जानना उसको सामान्य रूप स जानने की अपेक्षा निश्चय ही अधिक उपादेय है। प्रस्तुत प्रबन्ध मे आख्याना को उनके क्रमिक विकास के साथ प्रस्तुत करने का एक विनम्र प्रयास किया गया है।

या तो किसी एक ग्रन्थ विशेष म आगत पौराणिक अतकथाओ का विकासात्मक अध्ययन करने का प्रयत्न डा० वागीशदत्त पाण्डेय अपने शोध प्रबन्ध 'रामचरित मानस की अतकथाओं का आलोचनात्मक अध्ययन' म कर चुके हैं परन्तु लगभग चार सौ वर्षों (१४ वी से १८ वी शती ईस्वी) की कालावधि मे परिव्याप्त एक विशिष्ट काव्य धारा (सूफी प्रेमाख्यान काव्य) के कवियो द्वारा प्रयुक्त पौराणिक आख्याना के विकास क्रम का अनुसधान करने का काय मेरे इस ग्रन्थ के द्वारा पहली बार हो रहा है। सूफी कवियो ने कुछ ऐसे पौराणिक आख्याना का सन्दभ के रूप मे तथा अन्य प्रकार स उपयोग अवश्य किया है जिनका प्रयोग गोस्वामी तुलसीदास भी अपने 'रामचरितमानस' म कर चुके हैं परन्तु ऐसे आख्याना की सख्या दस ग्यारह स अधिक नही है। इन कुछ आख्याना के विकास क्रम को जानने म मुझे डा० पाण्डेय के शोध प्रबन्ध से जिसे मैंने उसके अप्रकाशित रूप म ही देखा था बहुत सहायता मिली। मैं इसके लिए उनके प्रति आभारी हू।

मैंने मुल्ला दाऊद के 'चदायन' से लेकर शेख निसार के 'यूसुफ-जुलखा' तक के सूफी प्रेमाख्यानक काव्यो को पौराणिक आख्याना के प्रयोग की दृष्टि से अपने अध्ययन का विषय बनाया था। यो तो उनम आगत छोटे-बडे आख्याना की सख्या ८५ तक है किन्तु मैंने प्रस्तुत प्रबन्ध मे केवल ५५ प्रमुख आख्याना को लिया है।

प्रस्तुत प्रबन्ध म यत्र-तत्र आख्याना के रूपकात्मक और प्रतीकात्मक अथ को समझाने का प्रयत्न भी हुआ है परन्तु मैंने इस दृष्टि स पुराण-कथाओ का अध्ययन एक अन्य ग्रन्थ म किया है जो शीघ्र ही प्रकाशित होगा।

पौराणिक आख्याना के विशाल भण्डार को देखते हुए कुछ आख्याना के

विकासात्मक अध्ययन का मेरा यह काय एक लघु प्रयाम ही है। सभी पौराणिक आख्याना के विकास क्रम को निरूपित करना अपन आपम एक बहत काय है। हिन्दी काव्या म आधार-कथा तथा अतकथा आदि के रूप म आगत पौराणिक आख्याना का विकास इतिहास जानना भी कुछ कम छाटा काम नही है। अनुसधाताआ का ध्यान इधर जाना चाहिए। मैं अपनी सीमित शक्ति स चष्टारत हू इस काय को सम्पन्न करन म।

वस्तुत यह ग्रथ मेर शाध प्रवध **मध्ययुगीन सूफी प्रेमाख्यानक काव्य मे पौराणिक आख्यान'** का उत्तराद्ध है। सिवाय इस बात के कि इसम जिन आख्याना का अध्ययन किया गया है व किसी न किसी रूप म सूफी प्रमाख्याना मे आ चुके है, इसका अपन वतमान रूप मे मूल शोध प्रवध स कोई प्रत्यक्ष सम्बध नही रह गया है। अध्याया की पुनर्व्यवस्था करके और यथावश्यक सशोधन सपादन करके मैंने इसको स्वतत्र रूप द दिया है।

इस ग्रथ म वर्णित आख्याना म बहुत से आख्यान तो एसे हैं जिनका स्रात केवल पुराण हैं किन्तु कुछ ऐस भी है जिनका मूल स्रोत वदिक साहित्य वाल्मीकि रामायण तथा महाभारत म मिलता है। लेकिन आख्याना का वर्गीकरण इस दाष्ट स न करके उन्ह इस ग्रथ म अकारादि क्रम म दिया गया है ताकि इच्छित आख्यान को ढूढन म पाठक को सुविधा हो सके।

अपन गुरुवर डा० सत्यन्द्र के प्रति मैं श्रद्धावनत हू जिन्हाने इस विषय पर काय करन के लिए मुझे प्रेरित किया और मेरा माग दशन किया। उनका आदश, निष्कलक जीवन मेरे लिए सदव प्रेरणा का स्रात रहा है। अपनी जीवन सगिनी उषा चदल के प्रति जा गहस्थी की झझटा स मुझे मुक्त रखकर अध्ययन के लिए अवकाश और सुविधा देती रही है मैं किन शब्दा म अपने हृदय की भावना को व्यक्त करूँ ? सामग्री सकलन मे आयुष्मान अवधेशकुमार सिंह चदल ने जा सहयाग दिया उसके लिए मैं उसे अपना स्नेह ही दे सकता हू।

हिन्दी साहित्य के अध्यताआ को मेरी यह पुस्तक यदि कुछ भी लाभान्वित कर सकी तो मैं अपन परिश्रम को साथक समझूगा।

गगा दशहरा,
स० २०३२ वि०

—उमापति राय चन्देल

हिन्दी विभाग,
पत्राचार पाठ्यक्रम एव
अनुवर्ती शिक्षा विद्यालय,
दिल्ली विश्वविद्यालय

अनुक्रमणिका

: १ : पुराण-साहित्य : एक परिचय

पौराणिक आख्यान उन्ही आख्यानो को कहेंगे जो पुराणा से लिये गये हैं। इन आख्याना के स्वरूप को समझन के लिए पुराणो का सामान्य परिचय अपेक्षित है।

अठारह पुराण

पुराणो या महापुराणो की सख्या अठारह मानी जाती है।[1] ये कृष्ण द्वैपायन या व्यास रचित अथवा सपादित माने जाते हैं। वस्तुत व्यास रचित पुराणो की सख्या बीस है।[2] विविध पुराणो मे अठारह पुराणो का उल्लेख जिस क्रम से किया गया है, उसमे अन्तर पाया जाता है, किन्तु अधिकाश पुराण[3] जिस क्रम से सहमत हैं, वह यह है —

(१) ब्रह्म (२) पदम (३) विष्णु (४) शिव या वायु
(५) भागवत (६) नारदीय[4] (७) माकण्डेय (८) अग्नि
(९) भविष्यत (१०) ब्रह्मवैवत्त (११) लिंग (१२) वाराह

---

१ विष्णु पुराण ३।६ भागवत पु० १२।७, १३, पद्म पु० १।८६ ६३ वाराह पु० ११२ मत्स्य पु० ५३ अग्नि पु० २७२ और मार्कण्डेय पुराण १३४, लिंग पु० १३९ भविष्य पु० १।१, शिव पु० ७।१ स्कद पुराण १।४ आदि में अठारह पुराणों की नाम-गणना करायी गयी है।

२ जिन पुराणों में पुराणों की नामावलि और सख्या दी गयी है उनमें सख्या के सबध में तो कोई मतभेद नहीं है परन्तु (१) शिव और वायु० पु० तथा (२) भागवत और देवी भागवत के युग्मों मे से एक को महापुराण और दूसरे को उपपुराण मानने की प्रवृत्ति है। कुल मिलाकर सख्या को अठारह ही रखने की चेष्टा की गई है। इस प्रकार विभिन्न पुराणों में दी गयी पुराणों की नामावलि में अन्तर मिलता है। वष्णव सम्प्रदाय की पुष्टि करने वाले पुराण देवी भागवत को पुराण न मानकर उपपुराण मानते हैं। पद्मपुराण (पातालखण्ड अ० ११५।८६ ९३) ब्रह्मवर्त्त पु० (४।९३१।१ २१) भविष्य पुराण १।१ भागवत पु १२।१३।३ ८ माकण्डय पुराण १३४, लिंग पुराण १३६ विष्णु पु० ३।६।२० २४ शिव पु० ७।१ तथा स्कद पु० १।४ में अठारह पुराणों में वाय को महापुराण न मानकर शिव पुराण को महापुराण माना गया है। आजकल लोग शिव और वाय पुराण को एक मान लेते हैं और भागवत तथा देवीभागवत में से प्रथम को महापुराण मानकर अठारह पुराणों की सख्या पूरा कर लेते हैं। किन्तु ये दोनों ही बातें भ्रामक हैं। न तो शिव पुराण और वायु पुराण ही एक हैं और न ही देवी भागवत उपपुराण है। इसलिए पुराणों की सख्या को बीस मानकर चलना उचित जान पड़ता है। ये सभी व्यास रचित कहे जाते हैं।

३ विष्णु भागवत (१२।१३) पद्म वाराह मत्स्य अग्नि और माकण्डय आदि।

४ नारदीय और बृहन्नारदीय दो पुराण मिलते हैं जिनमें से एक को उपपुराण तथा दूसरे का महापुराण कहा जाता है। नारदीय पुराण से अपनी महत्ता सूचित करने के लिए बृहन्नारदीय को 'बृहत' विशेषण लगाना पड़ा। हमने बृहन्नारदीय को ही महापुराण माना है। इस सम्बन्ध में और भी दे० ए हिस्ट्री ऑव इण्डियन लिटरेचर' डा० विटरनित्ज जिल्द १ पृ० ५५७

(११) स्कन्द (१४) वामन (१५) कूर्म (१६) मत्स्य,
(१७) गरुड (१८) ब्रह्माण्ड ।

विष्णु पदम, भागवत, मार्कण्डेय ब्रह्मवैवर्त्त आदि पुराणो मे ब्रह्म पुराण को प्रथम और ब्रह्माण्ड पुराण को अंतिम पुराण माना गया है।

'पदम पुराण'[1] मे अठारह पुराणो का वर्गीकरण सत रज और तम गुणो के आधार पर किया गया है और उनको किसी न किसी देवता से सम्बद्ध कर दिया गया है। सात्विक पुराणो मे विष्णु नारदीय, भागवत गरुड पदम और वाराह पुराणो की गणना की गयी है और उनको पुराण कहा गया है। ब्रह्म ब्रह्मवैवर्त्त मार्कण्डेय, भविष्यत वामन और ब्रह्माण्ड पुराणो को रजोगुणी तथा ब्रह्मा से सम्बन्धित माना गया है। मत्स्य, कूर्म लिंग, शिव वायु स्कन्द और अग्नि पुराणो को तमोगुणी तथा शिव से सम्बन्धित बताया गया है। किन्तु ये पुराण जिस रूप मे आज उपलब्ध हैं उनमे उनका यह साम्प्रदायिक रूप सुरक्षित नही रह सका है। मत्स्य को तमोगुणी पुराणो की श्रेणी मे रखा गया है पर उसमे विष्णु और शिव दोनो का प्रभाव वर्णित है। ब्रह्मवैवर्त्त मे ब्रह्मा के बजाय कृष्ण का अधिक वर्णन है। ब्रह्म पुराण मे विष्णु और शिव की पूजा के साथ साथ सूर्य पूजा का भी प्रतिपादन किया गया है। मार्कण्डेय और भविष्यत पुराण का दृष्टिकोण साम्प्रदायिक बिल्कुल नही है[2]।

अठारह उपपुराण

इन अठारह पुराणो या महापुराणो के अतिरिक्त अठारह ही उपपुराण माने जाते हैं। ऐसी धारणा है कि उनकी रचना महापुराणो के बाद मे हुई होगी। विषय वस्तु की दृष्टि से उपपुराणो का अधिक महत्त्व नही है। उनमे देवताओ तीर्थों एव व्रतो के माहात्म्य का ही अधिक वर्णन है तथा अतिरंजना की प्रवृत्ति है। उनमे जो आख्यान या उपाख्यान हैं वे भी एक या दूसरे प्राचीन पुराण से सम्बन्धित हैं। उनके नामो के विषय मे भी मतैक्य नही है। अलग-अलग पुराणो मे उनकी अलग अलग सूची दी गयी है। फिर भी प्रमुख उपपुराण ये हैं—

विष्णुधर्मोत्तर कल्कि नारदीय कापिल कालिका सनत्कुमार नृसिंह औशनस वारुण माहेश्वर साम्ब सौर, पाराशर मारीच भागव दुर्वासस शिवधर्म आदित्य मानव, कौमार आदि[3]।

पुराणो की वर्ण्य वस्तु 'पंच लक्षण'

शास्त्रीय दृष्टि से पुराणो मे पाँच विषयों का जिन्हे पंचलक्षण कहा गया है, वर्णन होना चाहिए।[4] ये पाच लक्षण या विषय हैं—

---

१ पद्म पुराण उत्तर खण्ड अ० २६३

२ ए हिस्ट्री आव इण्डियन लिटरेचर डा विन्टरनित्ज जिल्द १ पृ० ५३२

३ पदम पुराण पाताल खण्ड ११५।६४ ६७ और गरुड पुराण ३२३।१८ २ में उपपुराणो की सूची

(१) 'सर्ग' या सृष्टि उत्पत्ति का वर्णन।
(२) 'प्रतिसर्ग' या प्रलय के पश्चात सृष्टि की पुनर्रचना का वर्णन।
(३) 'वंश' या देवताओं आदि की वंश परम्परा (जीनिओलॉजी) का अन्वेषण।
(४) 'मन्वन्तर' या आदि मनु से प्रारम्भ होने वाले चौदह मनुओं के समय का वर्णन।
(५) वंशानुचरित' या सूर्य और चन्द्रवंशों में उत्पन्न राजपुरुषों का इतिहास।

विष्णु पुराण में इन पंचलक्षणों का सबसे अच्छा निरूपण हुआ है। नारद तथा वामन आदि कुछ पुराणों में इन लक्षणों का निर्वाह अच्छा नहीं हो सका है। बहुत कम पुराण ऐसे हैं जिनमें उक्त पंचलक्षणों का सम्यक निर्वाह हुआ है। अधिकांश पुराणों में जाति और आश्रम के धर्म कर्म तथा व्रत-तीर्थ आदि के माहात्म्य का वर्णन मिलता है। पुराणों का प्रिय विषय इतिहास और आख्यान भी है। पुराणों में ऐसे आख्यानों का पल्लवित और रूपान्तरित स्वरूप मिलता है जो वैदिक साहित्य में केवल बीज रूप में मिलते हैं। बहुत सी लोककथाओं को पौराणिक और ऐतिहासिक रंग देकर इनमें समाविष्ट कर लिया गया है। पुराणों में राजवंशों का इतिहास जिस रूप में दिया गया है उसमें आलंकारिकता अधिक है। तथ्य और कपोल कल्पना का जाल इस प्रकार बुना गया है कि कल्पना के कुहासे को हटाकर तथ्य दर्शन कर लेना दुष्कर कार्य हो गया है। फिर भी कुछ विद्वानों ने पुराणों में वर्णित ऐतिहासिक तथ्यों की छानबीन की है और उनमें से बहुत काम की सामग्री प्राप्त की है। डा० काशीप्रसाद जायसवाल तथा वी० ए० स्मिथ महोदय ने इस दिशा में अच्छा कार्य किया है। स्मिथ महोदय ने विष्णु पुराण को मौर्य वंश (३२६ १८५ ई० पू०), मत्स्य पुराण को आन्ध्र वंश (२२५ ई० तक) और वायु पुराण को चन्द्रगुप्त प्रथम (लगभग ३२० ३३० ई०) के शासन काल के प्रामाणिक वृत्तान्त का स्रोत बताया है।[१] पुराणों में सांख्य और योग दर्शन की भी बहुत-सी बातें बिखरी पड़ी हैं।

पुराणों की अविश्वसनीयता

पुराण वार्ता के सामान्य पाठक को उसकी आलंकारिक शैली में कही हुई बातें कभी कभी बड़ी विचित्र और अविश्वसनीय लगती हैं। फलत बहुत से लोग, जिनमें देशी विदेशी दोनों हैं, पुराण वार्त्ता को बेसिर पर की गप्प कहकर उसकी उपेक्षा कर देते हैं। पुराणों की रचना का मुख्य प्रयोजन सामान्य जन को धर्मशास्त्र सृष्टि विज्ञान, इतिहास एवं खगोल शास्त्र आदि का ज्ञान कराना जान पड़ता है। पुराणों में तथ्यों को कल्पना के मिश्रण से मनोरंजक बनाया गया है और आख्यान के आवरण में उन्हें सामान्य जन के लिए ग्राह्य बनाने की चेष्टा की गयी है। प्राचीन काल में पुराणों को सुनने-सुनाने का माहात्म्य कदाचित इसीलिए अधिक माना जाता था क्योंकि ये ज्ञान विज्ञान

विष्णु पुराण ६।८।२ ब्रह्मवैवर्त्त पुराण १३१।७ और मत्स्य पुराण ५३।६४

१ द० ए हिस्ट्री आव इण्डियन लिटरेचर डा० विंटरनित्ज जिल्द २ प्रका० कलकत्ता विश्व विद्यालय १९२७ पृ० ५२४

के प्रसारण के उपयुक्त साधन थ। किसी अधिकारी विद्वान की सहायता से पुराणा का अध्ययन करना इसलिए आवश्यक है ताकि उनके निहिताथ को भली प्रकार समझा जा सके। पुराणों की कथा शली को न समझकर उनके प्रति अश्रद्धा प्रकट करने की प्रवत्ति आजकल विशेष है। प्राचीन सस्कृत-वाड मय म इतिहास और पुराण दो अलग विद्याओं के नाम थे जिनका अध्ययन और अनुशीलन नित्य प्रति करना आवश्यक माना जाता था[1]। पुराणा को अविश्वसनीय कहते समय लोग यह भूल जाते हैं कि पुराणा के वश और वशानुचरिता मे मानव सभ्यता के जिस इतिहास का वणन है वह ऐतिहासिक होते हुए भी पौराणिक है और इसीलिए उसम तथ्यान्वषण करते समय तनिक सावधानी की आवश्यकता है। पुराण सृष्टि विद्या का नाम है और उसम मानव इतिहास के साथ साथ ग्रह नक्षत्रा का वणन तथा विविध प्राकृतिक व्यापारा का आलकारिक शली म निरूपण भी पाया जाता है। पुराण कथाओ म अचेतन ग्रह नक्षत्रा तथा चेतन मानव की भावनाओ का मानवीकरण करने के साथ साथ सत्कर्मों म प्रवत्ति और दुष्कर्मों से विरक्ति उत्पन्न करने के लिए भी रोचक और अद्भुत कहानियो का सकलन किया गया है[2]। यदि पुराणा के उपमित कथा रूप को समझा जा सके तो उनकी बहुत सी कथाओ और वत्ता क पीछे सृष्टि विज्ञान मानव स्वभाव आचार शास्त्र और मानव इतिहास के उपयोगी तथ्यो का सयोजन मिलगा। किंतु आज उचित शिक्षण के अभाव म यह सब सम्भव नही रह गया है इसीलिए पुराणा की उपेक्षा हो रही है और उनके प्रति अश्रद्धा का प्रदशन मिलता है।

अहल्या और इन्द्र के जार चन्द्रमा द्वारा गुरु पत्नी तारा के अपहरण और अपनी पुत्री सरस्वती से ब्रह्मा के बलात्कार की कथाएँ सामाजिक जीवन की कुत्सा की अभिव्यजनाएँ मात्र नहीं हैं अपितु उनके द्वारा सामाजिक ज्योतिष्कीय और राजनीतिक तत्त्वो का अकथान भी हुआ है। दक्षिणगामी अगस्त्य की प्रतीक्षा करता हुआ विन्ध्याचल एक अविश्वसनीय कल्पना नही, वरन भूगभ शास्त्र के एक तथ्य का कथात्मक निरूपण मात्र है। अगस्त्य का दक्षिण, अर्थात पथ्वी के और निचले स्तर सुतल म चले जाना पवता के ऊच बढने की समाप्ति का सूचक है।[3]

पुराणों की कथाओ तथा इतिहास के पौराणिक प्रस्तुतीकरण म पाठक का जो सबसे अधिक अविश्वसनीय वस्तु लगती है वह है वर्षों की गणना। किसी की आयु, राजत्वकाल या तपस्या काल को कई सहस्र और लक्ष वर्षों म विस्तृत कर देना अपने आप मे एक मखौल बन जाता है। जिस उवशी को ऋग्वेद म पुरूरवा के साथ केवल चार वष तक सहवास सुख भोगते बतलाया जाता है[4] वही विष्णु पुराण मे ६१ सहस्र वर्षों

---

१ इतिहासपुराणमित्यहरह स्वाध्यायमधीते । शतपथ ब्राह्मण ११।५।७।६

२ पुराण कथा कौमुदी प० रघनाथदत्त बघु प्रका० नेशनल पब्लिशिंग हाउस दिल्ली प्र स १९६२ भूमिका प ण ।

३ वही भूमिका प ट ।

४ ऋग्वद १ ।९५।

तक सुखोपभोग करती पायी जाती है[1]। इसका क्या अर्थ ? वस्तुत पुराणो म आगत सहस्र शब्द सख्यावाचक न होकर पूर्णायक है। ग्रह नक्षत्रो की आयु के विषय मे आये सहस्र लक्ष तथा कोटि शब्द का वही अर्थ है जो साधारणत ग्रहण किया जाता है, किन्तु यदि पुराण मे किसी मनुष्य की आयु आदि के लिए इन शब्दो का प्रयोग हो तो वहाँ सहस्र का अर्थ पूरा लक्ष का अर्थ उसके साथ आयी सख्या से कुछ मास या दिन कम, तथा कोटि का अर्थ जिस सख्या के साथ वह आये उससे कुछ मास या दिन अधिक होगा[2]। इससे आयु की अतिरजना की समस्या एक हद तक सुलझ जायेगी। उदाहरण के लिए उर्वशी और पुरूरवा का साथ, विष्णु पुराण के अनुसार पूरे ६१ वर्ष मानना होगा। ऐसे ही जब वाल्मीकि रामायण[3] म दशरथ की आयु साठ सहस्र वर्ष होने पर राम के जन्म की बात कही जाती है, तो उसका अर्थ पूरे साठ वर्ष की आयु लगाना होगा। फिर भी यह गुर सर्वत्र फलदायी होगा, ऐसा कहना ठीक नही है। पुराणो म बहुत सी ऐसी बातें कही गयी हैं जिनकी तर्क सगति बठानी कठिन है और उन पर सिर खपाना व्यर्थ होगा।

पुराणों का रचना-काल और उनका 'पुराणत्व'

पुराणो की रचना कब कब हुई, इस पर विद्वानो म मतक्य नहीं हो पाया है। कुछ अन्त साक्ष्यो के आधार पर कतिपय पुराणो का रचना काल निर्धारित करने की चेष्टा हुई है परन्तु वे निष्कर्ष सवमान्य नही हैं। पुराणो का रचना काल निर्धारण करते समय दो अतियो का सामना करना पडता है—एक ओर तो भारत की धर्मप्राण जनता का परम्परा गत विश्वास है जो वेदों के साथ साथ पुराणो का नाम लेता है और उसे उनका किसी तिथि परिधि म घेरा जाना सह्य नही है दूसरी ओर, कुछ पाश्चात्य भारत विद्याविद हैं जो पुराणो का एक हजार वर्ष पहले से पूर्व की रचना मानने को तयार नही हैं। एच० एच० विलसन महोदय ऐसे ही विद्वानों म हैं[4]। प्रो० विलसन विष्णु भागवत और वाराह—इन तीन पुराणो को १२ वी शती का, ब्रह्म को १४ वी शती का पद्म को १५ १६ वी शती का और नारदीय पुराण को १६ १७ वी शती ईस्वी का रचित मानते हैं[5]।

पाश्चात्य विद्वानो म पार्जिटर और विटरनित्ज महोदय ने पुराणो के काल-निर्धारण की दिशा मे महत्त्वपूर्ण प्रयास किया है भारतीय विद्वानो मे लोकमान्य बाल गगाधर तिलक डा० रामचन्द्र दीक्षितार डा० काशीप्रसाद जायसवाल, डा० हजारा तथा डा० वासुदेवशरण अग्रवाल आदि के प्रयास भी महत्त्वपूर्ण हैं।

पुराणो के रचयिता कृष्ण द्वैपायन या व्यास कहे जाते हैं और उनको तथा वेदो

---

१ विष्णु पुराण अश ४ अध्याय ६ श्लोक ४८

२ 'पुराण कथा कौमुदी' भूमिका प० न'

३ वाल्मीकि रामायण बालकाण्ड २१।१०

४ दे० 'ए हिस्ट्री ऑफ इण्डियन लिटरेचर' जिल्द १ डा विटरनित्ज १९२७ पष्ठ ५२६ पर उद्धृत श्री विल्सन का मत।

५ हिन्दी विश्वकोश श्री नागेन्द्रनाथ वसु। देखिए पुराण शब्द पर टिप्पणी।

की ऋचाओ का सकलन सपादन करने वाले वेदव्यास को एक ही मान लिया जाता है। यही कृष्ण द्व पायन व्यास महाभारत के भी रचयिता माने जाते हैं। किसी भी एक व्यास' के लिए सपूण वदिक सहिता महाभारत और अष्टादश पुराण की रचना करना मानवीय शक्ति सीमा को ध्यान म रखते हुए सम्भव नहीं लगता फिर इन सभी ग्र था का रचना काल एक नही है। ऐसी दशा मे यह विचार अधिक तकसगत लगता है कि वदो का सक्लन सपादन करने वाले वेद यास कोई और होगे और 'महाभारत तथा पुराणा के रचयिता कृष्ण द्व पायन यास कोई और। पुराणो का आदि रूप भी कुछ और रहा होगा नाम यही होगा पर उनकी वस्तु सवाश म यही न रही होगी। यह भी सभव है कि प्रारम्भ मे उनकी सख्या भी अठारह न रही हो। कुछ अश तो बहुत प्राचीन परम्परा की विच्छिन्न कडी के रूप म सुरक्षित हैं और कुछ अश बहुत बाद के जान पडते हैं। विटरनित्ज महोदय के मतानुसार प्रारम्भिक पुराणो की रचना सातवी शती के पूव ही हो गयी होगी[1]।

काल निणय की समस्या 'महाभारत रामायण और अष्टादश पुराणा क सदभ म एक जसी उलझी हुई है। जिस प्रकार कृष्ण द्व पायन व्यास महाभारत के रचयिता और महाभारत-युद्ध के द्रष्टा दोनो बताय जाते हैं उसी प्रकार वाल्मीकि भी रामायण महाका य के रचयिता होने के साथ साथ राम जीवन के साक्षी भी कहे जाते हैं। इसलिए इन काव्या की रचना का समय कुरु -वश और इक्ष्वाकु वश के काल निणय के साथ नत्थी हो जाता है। पुराणो के काल निणय मे भी ऐसी ही अनेक कठिनाइयाँ हैं।

इस ऊहापोह मे जिसका ओर छोर इतिहासना और भारत विद्याविदो (इडालाजिस्टस) को काफी तक वितक क पश्चात भी नही मिल पाया है न पडकर एक अ य दष्टिकोण से इस समस्या पर विचार करना अधिक समीचीन होगा।

पुराण का नाम वदिक सहिता[2] ब्राह्मण[3] आरण्यक[4] उपनिषद[5], धमसूत्र[6] रामायण[7] महाभारत[8] निरुक्त[9] अष्टाध्यायी[10] अथशास्त्र (चाणक्य)[11] और चरक सहिता[12] म आता है इससे यह तो सिद्ध हो ही जाता है कि पुराण का

---

१ ए हिस्ट्री आव इण्डियन लिटरेचर जिल्द १ प ५२५

२ अथववेद ११ ७।२४

३ शतपथ ब्राह्मण १ ।४।३१।१२ और ११।५।७।६

४ तत्तिरीय आरण्यक २।६

५ छान्दोग्य उपनिषद ७।६१।१ और बहदारण्यक उपनिषद २।४।१

६ आपस्तम्ब धमसूत्र २।२४।३।१ और ६।१६।१३

७ वाल्मीकि रामायण बा का स्ग ६।१

८ महाभारत आदि पव ५।२ स्वर्गारोहण पव ६।६७

६ निरुक्त ३।१।२४

१० अष्टाध्यायी ४।३।१ ५

११ अथशास्त्र ५।२।५१।५

१२ चरक सहिता शरीर स्थान ४।४४

अस्तित्व बहुत पुराकाल से है। परन्तु आज पुराण जिस रूप मे मिलते हैं, क्या उन्ही का उल्लेख इन प्राचीन आय ग्रथो में पुराण' नाम से हुआ है ? निश्चय ही नहीं। हमारा ध्यान इस बात पर जाना चाहिए कि सस्कृत का वदिक साहित्य (वेद, ब्राह्मण, आरण्यक और उपनिषद) कभी 'श्रुति रहा था, अर्थात लिखित रूप मे आने से पूव कई शती तक यह सारा साहित्य गुरु शिष्य परम्परा से प्राप्त ज्ञान रहा। इसी प्रकार महाभारत और रामायण की कथा कहने की श्रोता-वक्ता पद्धति इनके लोक गाथात्मक स्वरूप की ओर सकेत करती है। 'रामायण' के विषय म तो प्रसिद्ध ही है कि उसको समग्र रूप म वाल्मीकि ने लव-कुश को कठाग्र करा दिया था और व उसे सस्वर गाते फिरते थे। गाथा गायन की इस परम्परा ने ही आगे चलकर उन घुमक्कड गायको को जन्म दिया जिनको बाद क साहित्य मे 'कुशीलव' जाति का कह कर पुकारा जाता है। मध्यकालीन भाट चारणो के ये पूवज ही वस्तुत रामायण, महाभारत तथा पुराणो के आदिगायक रहे हैं। रामायण, महाभारत तथा पुराणो मे जो बहुत से आख्यान हैं, व कभी लोक-वार्त्ता के रूप मे रहे होंगे और हमारे चारण भाटो के पूवजो ने सदियो तक इन गाथाओ को गा गाकर लोकरजन किया होगा। 'पदम पुराण'[1] के एक आख्यान मे मकर नामक दत्य द्वारा ब्रह्मा के पास से वेदों को चुरा कर समुद्र मे जा छिपने और उसमे बहुत सी अन्यान्य बातो का मिश्रण कर देने तथा विष्णु द्वारा मत्स्यावतार मे वेदो का उद्धार कर व्यास के रूप म उनको परिमार्जित करने का उल्लेख आता है। यह कथा रूपक लोक और शिष्ट साहित्य के परस्पर आगम निगम का सूचक है। कष्ण द्वपायन व्यास स पूव किन्ही व्यासो द्वारा २७ बार पुराण साहित्य का सकलन सपादन होना[2] भी इसी तथ्य को प्रमाणित करता है कि पुराण अनक बार लोक से साहित्य म और साहित्य स लाक म आते जाते रहे। यही स्थिति रामायण और महाभारत के आख्यानो की भी रही होगी, जब तक कि अतिम रूप से उन्हें शिष्ट साहित्य का रूप न दे दिया गया होगा। वदिक साहित्य से लेकर रामायण, महाभारत तथा पुराण आदि तक म कुछ कथाओं तथा कुछ श्लोको का समान रूप म किंचित परिवतन के साथ प्राप्त होना भी यही सूचित करता है कि चाहे वेद हो या रामायण महाभारत या पुराण आदि—इन सबने जिस मूल स्रोत से उत्स ग्रहण किया, वह एक था और निस्सदेह वह लोक था।

मूलत इनका स्रोत लोक वार्त्ता है जो सही अर्थों म पुराण' या प्राचीन कही जा सकती है। उसी को वेद, रामायण, महाभारत तथा पुराणो ने अपने-अपने दृष्टिकोण क अनुसार ग्रहण कर लिया। हिन्दू जन और बौद्ध पुराणो मे से भी कौन कम प्राचीन है और कौन अधिक, इस विवाद म न पडकर यह निर्विकल्प रूप से कहा जा सकता है कि इन सबका स्रोत एक था। समान स्रोत से प्राप्त सामग्री को सबने अपने विशिष्ट

---

१ पदम पुराण उत्तर खड २३०।११ १२।

२ अतीतास्तु तथा व्यासा सप्तविंशतिरेव च। पुराणसहितास्तस्तु कथितास्त युगे युगे॥

—भागवत पुराण १।३।२४

दृष्टिकोण से ग्रहण किया और विशिष्ट प्रयोजन की सिद्धि के लिए उनका उपयोग किया। डा० सत्येन्द्र का यह कथन विचारणीय है कि 'वेदो की लोक भूमि ही आगे चलकर पौराणिक स्वरूप प्राप्त कर सकी। पुराणों के समय तक वदिक कालीन लोक कितनी ही परिस्थितियो से जटिल होता चला गया था। फलत लोकवार्त्ता, लोक-तत्त्व अथवा लोकाभिव्यक्ति की लोक भूमि पर समस्त पुराण साहित्य निर्मित हुआ।'[1] 'आज तक की समस्त साहित्यिक अभिव्यक्ति का एक मात्र आन्तरिक आधार यह पुराण वार्ता है जो वस्तुत लोकवार्त्ता है'[2]।

इस प्रसग म डा० सुनीतिकुमार चाटुर्ज्या के उस मत का उल्लेख करना आवश्यक है जिसम वे वद पूव की इस लोकवार्त्ता का, जिससे कई पौराणिक आख्यान निस्सत हुए सम्बन्ध द्राविड़परम्परा से जोड़ते हैं। उनका कथन है कि पौराणिक परम्पराओ का पूर्वीय काल के अनाय द्रविड (तथा दक्षिण देशीय) राजाओ और वशो स सम्बधित होना केवल सम्भव ही नही नितान्त विश्वसनीय हो सकता है। इस परम्परा की कथाओ तथा उपाख्यानो का कालान्तर म आर्यीकरण हो गया। मतलब यह कि जिन जनो म से ये विकसित हुई थी, उनके आर्यीकरण होने पर य कथाए भी आय भाषा प्राकृत एव सस्कृत म अनूदित कर ली गयी। इस प्रकार के सम्मिश्रण म एक भाषा द्वारा एकीकृत दानो जातियो की दन्तकथाएँ भी अविच्छेद्य रूप से सम्मिलित हो गयी[3]। और 'इस दृष्टि से सूयवश और चन्द्रवश की अधिकाश पौराणिक कथाए प्राग आय सम्भूत किन्तु उत्तरकाल मे आय बनी हुई दन्तकथाए मात्र मानी जा सकती हैं। डा० चाटुर्ज्या क इस कथन से यह भ्रम उत्पन्न हो सकता है कि भारतीय इतिहास आर्यों और अनार्यों के सघष का इतिहास है और उसी का एक रूप पुराणो म प्राप्त होता है। वस्तुत पुराणो के सम्बन्ध में आय अनाय मिश्रण का प्रश्न उठाना उचित नहीं है। पुराणो मे सुर और असुर का जो भेद किया गया है वह जातिवाचक न होकर गुणवाचक है। एक ही पिता कश्यप की दो पत्नियो से उत्पन्न देव और दत्य आध्यात्मिक और भौतिक शक्तियो के रूपक हो तो हो पर आय अनाय के रूपक कदापि नही हो सकते।

पुराणो का वर्तमान रूप

मूलत पुराण-ग्रन्थ न इतने भारी भरकम रहे होंगे न विशृखलित और न सकीण साम्प्रदायिक। हिन्दू कम-काण्डों अनुष्ठानो और आचारो म जसे-जसे वद्धि होती गयी और जसे जसे उनको लेकर अलग सम्प्रदाय स्थापित होते गये वस-वस इस बात की आवश्यकता अनुभव की जाने लगी कि प्रत्येक सम्प्रदाय अपने मतवाद

---

१ मध्ययुगीन हिन्दी साहित्य का लोकतात्त्विक अध्ययन' डा० सत्ये द्र प्रकाशक विनोद पुस्तक मन्दिर आगरा प्र स पृष्ठ ६२

२ वही पृष्ठ ६३

३ भारतीय आय भाषा और हिन्दी डा सुनीतिकुमार चाटर्ज्या प्रकाशक राजकमल प्रकाशन दिल्ली प्रथम हिन्दी सस्करण १९५४ पृष्ठ ५७

४ वही पृष्ठ ५८

के समर्थन के लिए सामान्य जनता के सम्मुख जो प्रारम्भ से ही धर्म भीरु और आप्तवाक्य को प्रमाण मानकर चलने वाली रही है, पुराणो को साक्ष्य के रूप मे उपस्थित करे और उनका धर्मशास्त्रो की तरह प्रामाणिक रूप दे सके। बस, इसी आवश्यकता ने पुराणो म प्रक्षेप प्रक्रिया को स्फुरण प्रदान किया। पुराणो के साथ एकाधिक बार छेडछाड की गई और ऐसे लोगो के द्वारा उनके मूल रूप मे पर्याप्त सशोधन और परिवद्ध न कर दिया गया जो शिव और विष्णु के आराधक होने के साथ साथ वेदो, स्मृतियों या धर्मशास्त्रो, विशेषत वर्णाश्रम धर्म म भी अत्यधिक अनुरक्त थे और जो अपने नये सम्प्रदाय के निमित्त अपनी प्राचीन आस्थाओ को एकबारगी छोडने के लिए प्रस्तुत न थे। इस प्रकार एक नये प्रकार के साम्प्रदायिको की श्रेणी का उदय हुआ जिनको स्मार्त्त शव या स्मार्त्त वैष्णव कहा जा सकता है। ऐसे ही लोगो ने वर्तमान हिन्दू धर्म को जन्म दिया। ऐसी श्रेणिया या सम्प्रदायो मे वद्धि होने के साथ-साथ पुराण-वस्तु म भी काट छाँट और अभिवृद्धि होने लगी[1]। अत यह कहना बहुत कठिन है कि जिस रूप म पुराण आज हम प्राप्त हैं, वे कब लिखे गए। व अलग अलग काला म लिखे गये बस इतना ही कहा जा सकता है। हाँ, कुछ एक पुराणो के रचना काल पर उनके अन्त साक्ष्य के आधार पर किंचित् प्रकाश पडता है। विष्णु पुराण मार्कण्डेय पुराण ब्रह्माण्ड पुराण वायु पुराण, भागवत पुराण और मत्स्य पुराण कदाचित् अन्य पुराणो से प्राचीनतर हैं। विष्णु पुराण वायु पुराण और ब्रह्माण्ड पुराण म अन्य राजवंशो के साथ साथ गुप्तवशी सम्राटो का भी उल्लेख मिलता है इससे यह अनुमान किया जा सकता है कि उनकी पूर्णता की प्रक्रिया चौथी शताब्दी ईस्वी तक समाप्त नही हुई थी। वायु पुराण का उल्लेख बाण रचित हर्षचरित मे आता है इसलिए कहा जा सकता है कि सातवी शती ईस्वी के पूर्व भी उसका अस्तित्व था। मार्कण्डेय पुराण के विषय म भी यही कहा जा सकता है क्योकि बाण ने जो 'चण्डीशतक' लिखा और भवभूति ने मालती माधव, उनमे मार्कण्डेय पुराण के उस अश की, जो देवी या चण्डी-माहात्म्य अथवा दुर्गासप्तशती के नाम से प्रसिद्ध है प्रेरणा खोजी जा सकती है। मार्कण्डेय पुराण म गुप्त काल की समृद्ध स्वर्णयुगीन सस्कृति की छवि भी अकित मिलती है[2]। परन्तु बहुत-से पुराणो मे पृथ्वीराज रासो की तरह इतने अन्तर्विरोध मिलते है जिनके कारण उनका काल निर्धारण किसी के लिए भी टेढी खीर हो गया है। जो ग्रथ पुराणो के नाम के अतर्गत आज मिलते हैं, वे अपने मूल रूप से पर्याप्त भिन्न हैं उनके कुछ अश जो प्रकीर्ण रूप म हैं अवश्य मूल रूप मे या उसके सन्निकट हैं परन्तु उनका अधिकाश विभिन्न सूतो और पुरोहितो की उर्वर कल्पना के द्वारा तोडा मरोडा हुआ है। उनके इसी रूप के लिए विंटरनित्ज महोदय ने पुराणो को पुरानी बोतल

---

१ दे० 'द हिस्ट्री एण्ड कल्चर आव द इण्डियन पीपुल द क्लासिकल एज' श्री आर० सी० मजूमदार जिल्द २ अध्याय १५ पृ० २६७

२ डा वासुदेवशरण अग्रवाल का लेख—भारत की स्वर्णयुगीन सस्कृति का परिचायक मार्कण्डेय पुराण, साप्ताहिक हिन्दुस्तान ५ जनवरी १९५८

में नयी शराब' की उपमा दी है।

क्या 'रामायण' और 'महाभारत' पुराण हैं ?

रामायण' और 'महाभारत' की गणना पुराणा म नही होती ये महाकाव्य हैं। फिर भी, पौराणिक आख्यानो का स्रोत अनुसधान करने की दृष्टि से इनका बडा महत्त्व है। 'महाभारत' तो अपन वतमान रूप म अधिकाशत, और उसका परिशिष्ट या खिल' कहा जाने वाला 'हरिवश तो पूणत पुराण क अतिरिक्त और कुछ है ही नही। 'रामायण' के प्रथम और सप्तम अध्याय तथा उसके कुछ अय अश भी अपन पौराणिक स्वरूप का साक्ष्य देते हैं।[1]

पुराणो की रचना शैली की विशेषताएँ

पुराणो का अध्ययन करने पर उनकी रचना शली की कुछ विशेषताएँ हमारे सामने स्पष्ट हो जाती हैं। वे य हैं —

(१) पुराणों की रचना वक्ता श्रोता पद्धति पर हुई है—सूत शौनक सवाद के रूप मे अधिकाश पुराण लिख गये हैं। कथा की परम्परा बतान तथा शका समाधान के रूप म कथा कही गयी है।

(२) पुराणो म अलौकिक, अतिमानवीय और अतिप्राकृत तत्त्वो और उनके अतिशयोक्तिपूण कथन का आधिक्य है।

(३) पुराणों की रचना म प्रबन्ध काव्य और धमगाथा (माइथालाजी) की शलियो का समन्वय किया गया है।

(४) बहुत-से आख्यान कई पुराणो मे एक जसे मिलते हैं। प्रत्येक पुराण म कुछ ऐसे आख्यान हैं जो दूसरा म नही मिलते और कुछ आख्यान किंचित परिवतन के साथ कई पुराणो मे ग्रहण कर लिये गये हैं।

(५) जो पुराण जिस देव सम्प्रदाय स विशेषत सम्बन्धित हैं उनम उसी के इष्ट देव का माहात्म्य और गौरव वर्णित है।

(६) दान, व्रत उपवास आदि धार्मिक क यो तीर्थों तथा पुराण-श्रवण की महिमा का वणन अधिकाश पुराणो का मुख्य विषय बन गया है यहाँ तक कि इनके आगे पचलक्षणा के निष्ठापूवक निर्वाह की भी अवहलना कर दी गयी है।

(७) पुराणो के आख्याना का गठन किसी योजना और क्रम को लिये हुए नही हैं। इस दृष्टि स उनकी कथा वस्तु शिथिल है और उनम अवान्तर प्रसगो का आधिक्य है।

---

१ दे० ए हिस्ट्री आव इण्डियन लिटरेचर' आ विटरनित्ज पृ ४५४ ५१८ तथा हरिवश पुराण एक सास्कतिक अध्ययन' वीणापाणि पाण्डे प्रकाशन शाखा सूचना विभाग उत्तर प्रदेश लखनऊ प्र० स० १९६० पृ० ६

प्रस्तुत ग्रन्थ मे पुराणो का उपयोग

प्रस्तुत ग्रन्थ मे पौराणिक आख्यानो का विकास इतिहास देखने के लिए हमने पुराणों के लिए उसी क्रम को स्वीकार कर लिया है जो विष्णु पुराण मे दिया है और जिसका उल्लेख ऊपर हो चुका है। वायु के बाद शिव का और भागवत के बाद देवी भागवत का क्रम हमने सुविधा की दृष्टि से स्थापित कर लिया है। इसके अतिरिक्त महाभारत के खिल भाग एव पुराण-लक्षण से सम्पन्न हरिवश पुराण को हमने महाभारत के साथ, उसके पश्चात् ही लिया है। इस प्रकार प्रस्तुत प्रबन्ध म कथा स्रोत एव कथा विकास का अध्ययन करने म वदिक साहित्य, रामायण, महाभारत और हरिवश के साथ २० पुराणो और विष्णुधर्मोत्तर, नारदीय कल्कि और सौर आदि प्रमुख उपपुराणा का उपयोग किया है। साथ ही 'अध्यात्म रामायण', 'अद्भुत रामायण', 'आनन्द रामायण, 'रघुवश और रामचरित मानस' आदि राम-कथा काव्या का भी यथास्थान उपयोग किया गया है। जन पुराणो और बौद्ध जातको से भी कुछ कथाओ का विकास जानने मे सहायता ली गई है।

२ . पौराणिक आख्यान . परिभाषा

पहल कहा जा चुका है कि साहित्य के रूप म नहीं अपितु लोकवार्ता क रूप म वेदा स भी पहले पौराणिक आख्याना का अस्तित्व था। मत्स्य पुराण म लिखा है कि ब्रह्मा न पहल पुराण को स्मरण किया, फिर वदा का प्रकाश किया[1]। पद्मपुराण म भी कथन है कि सभी शास्त्रा क निर्माण स पूव ब्रह्मा ने पुराण का स्मरण किया[2]। वायु पुराण म भी ऐसा ही कथन है[3]। विष्णु पुराण म पुराण की परिभाषा दत हुए कहा गया है— यस्मात् पुरा हि अनति इदम् पुराणम्[4]—अर्थात जो बहुत प्राचीन काल स चला आ रहा है वह पुराण है। इन कथना का भी यही आशय है कि कुछ पौराणिक आख्यान लोकानुश्रुति क रूप म वदिक साहित्य की रचना क पूव भी उपस्थित थे। उनम स कुछ को सांकेतिक रूप स वेदा म ग्रहण कर लिया गया होगा। यह स्वाभाविक लगता है कि प्राकृतिक शक्तिया के प्रति श्रद्धा या भय की भावना को धार्मिक विश्वासा क रूप म वदा म सग्रह कर चुकने के उपरा त उस काल की मनीषा न प्राचीन लोका चार सम्बन्धी कथाआ का पुराणा म सग्रह कर दिया होगा। भागवत पुराण मे कहा है कि ब्रह्मा न अपने अलग अलग चार मुखा स चार वेदो की (पूव मुख से ऋग्वेद की पश्चिम मुख से सामवद की दक्षिण मुख से यजुर्वेद की और उत्तर मुख स अथववेद की) रचना की। फिर अपने चारो मुखा स इतिहास पुराण रूप पाचवें वेद का सजन किया[5]। पुराण साहित्य की पचम वद के रूप म प्रसिद्धि[6] भी इस बात की सूचक है कि साहित्य के रूप म पुराणो का रचना वेदो के बाद हुई परन्तु लोकवार्ता क रूप म व किसी न किसी रूप म वदो की रचना स पूव भी लोकमानस म जी रहे थे यह निस्सन्देह है।

पौराणिक आख्यान और विश्वास के लिए अग्रजी म मिथ या माइथालाजी शब्द प्रचलित है। मिथ शब्द का अथ जहाँ देवताओ एव वीरा की प्राचीन परम्परागत गाथा है जो किसी तथ्य या प्राकतिक सिद्धा त की व्याख्या प्रस्तुत करती है वहा उसका

---

१ पुराण सवशास्त्राणां प्रथम ब्रह्मणास्मृतम्। अनन्तर च वक्त्रभ्यो वेदास्तस्य विनिसृता ॥
—मत्स्यपराण अध्याय ५३ श्लोक ३

२ पराण सवशास्त्राणा प्रथम ब्रह्मणास्मतम्। पद्म पराण सष्टि खण्ड १।४५

३ वायपुराण अध्याय १ श्लोक ५४

४ विष्णुपराण अध्याय १ श्लोक २०३

५ श्रीमद्भागवत पुराण स्कध ३ अध्याय १२ श्लोक ३७ ३९

६ अथर्ववेद ११।७।२४

अथ मिथ्या या कपोलकल्पित भी होता है।[1] किन्तु 'मिथ' से निर्मित 'माइथालाजी' शब्द उस भावना को व्यक्त करने म असमथ है जो हमारे 'पुराण-गाथा' शब्द से व्यक्त होती है। हमारे यहाँ पुराण' शब्द प्रामाणिकता का द्योतक है। उस शब्द के साथ 'मिथ्या' या कपोल-कल्पना का दूर का भी सम्बन्ध नही। हिन्दू धम एवं पौराणिक धम है। उसका जो रूप आज हमे मिलता है वह महाकाव्यो (रामायण और महाभारत) तथा अठारह पुराणो पर आधारित है। भारतीय पौराणिक आख्यान एक जीवित धम और विश्वास के रूप मे हैं। इसलिए मिथ या माइथालाजी शब्द का प्रयोग भारतीयो के मानस म वह भावना नही जगा पाता, वह रूप चित्र उपस्थित नही कर पाता, जो 'पुराण' शब्द करता है। चूकि पौराणिक विश्वासो और आख्यानो का धम के साथ घनिष्ठ सम्बन्ध है इसलिए 'मिथ' या माइथालाजी' के लिए हमारे यहाँ धमगाथा शब्द गढ लिया गया है। इस प्रकार धमगाथा शब्द किसी प्रकार पुराण गाथा' या पौराणिक आख्यान' शब्द का समानार्थी है।

धमगाथा या पौराणिक आख्यान के सम्बन्ध मे मेरिया लीच ने कहा है—' मिथ वह कथा है जो किसी युग म घटित दिखायी गयी हो। इन कथाओ मे किसी देश के धार्मिक विश्वास प्राचीन वीरो देवी देवताओ जनता की अलौकिक तथा अदभुत परम्पराओ तथा सृष्टि रचना का वणन होता है[2]।" मेरिया लीच के कथन से निम्न बातें स्पष्ट होती हैं मिथ या धमगाथा वह है—

(१) जिसकी पष्ठभूमि धार्मिक हो,

(२) जिसके प्रधान पात्र देवी देवता हो

(३) जिसका प्रधान वण्य विषय सृष्टि की रचना तथा प्राकृतिक शक्तियो (सूय चद्रमा वायु अग्नि आदि) के क्रिया-कलापो और उनके सम्बन्ध मे आदिम मनुष्य की धारणाओ को विज्ञान पूव युग के विज्ञान के रूप मे प्रकट करता हो।[3]

डा० सत्येन्द्र का इस सम्बन्ध मे मत है कि 'केवल देवी देवताओ के आने स कोई कहानी धमगाथा नही हो सकती। कितनी ही लोक कहानिया ऐसी प्रचलित हैं

---

1 '*Myth* an ancient traditional story of gods or heroes offering an explanation of some fact or phenomenon a fable a ficticious person or thing *Mythology* a collection of myths" Chambers Compact English *Dictionary* *W & R* Chambers Ltd, London and Edinburgh, ed 1954

2 'Myth is a story presented as having actually occured in a previous age explaining the cosmological and supernatural traditions of a *people, their* gods heroes cultural traits, religious beliefs etc' Marie Leach Dictionary of Folklore, part 2 *page* 778

3 Myths explain matters in the science of a pre-scientific age"
मेरिया लीच वही पष्ठ ७७८

: ३ . प्राचीन साहित्य मे पौराणिक आख्यान

पौराणिक आख्यान' का सीमित अर्थ अठारह हिन्दू पुराणों म वर्णित आख्याना से है परन्तु पुराण शब्द का प्रयोग हमारे यहाँ प्राचीन आख्यानो के अर्थ म होता आया है। वदिक साहित्य म भी जो पुराण शब्द का उल्लेख आया है वह इसी अर्थ म। अत पौराणिक आख्यान की परम्परा का अनुसधान करते हुए वदिक साहित्य और महाकाव्यो (रामायण तथा महाभारत) आदि को भी ध्यान म रखना उचित है।

वैदिक साहित्य मे आख्यान

ऋग्वेद न केवल हमारा प्राचीनतम ग्रथ है अपितु आख्यान परम्परा का आदि स्रोत भी वही है। बहुत से आख्यान बीज रूप म ऋग्वेद म मिलते हैं। बाद मे उन्ही का पल्लवन ब्राह्मणा उपनिषदो सूत्र ग्रथो महाकाव्यो और पुराणो म हुआ मिलता है। ऋग्वेद म कोई आख्यान वर्णनात्मक रूप म नही है देवताओ और ऋषियो की स्तुति के रूप म है। आख्यानो का सकेत मात्र उसम मिलता है।

मकडानेल ने ऋग्वदीय देवताओ को तीन भागो म बाँटा है[1] (१) द्यु स्थानीय (२) अन्तरिक्ष-स्थानीय (३) पृथ्वी स्थानीय। प्रथम वर्ग म मित्र वरुण सविता पूषा उषा आदि द्वितीय वर्ग मे इन्द्र अपाम् वायु पर्जन्य रुद्र मरुत आदि और तृतीय वर्ग मे पृथ्वी अग्नि सोम आदि प्राकृतिक शक्तियो की देव कल्पनाए मिलती हैं। ऋग्वेद मे इन देवो से सम्बन्धित कई आख्यान सूत्र रूप म मिलते हैं। देवताओ के अतिरिक्त ऋग्वेद म राजा, ऋषि, पुरोहित तथा असुरो के भी आख्यान हैं। ऋषियो तथा पुरोहितो म विश्वामित्र वसिष्ठ गौतम तथा अगस्त्य आदि के आख्यान हैं और असुरो म वत्र, पणि, वल तथा शम्बर आदि के। सबसे अधिक आख्यान इन्द्र के सम्बन्ध म हैं। यो भी ऋग्वेद के समस्त सूक्तो की सख्या का लगभग चतुर्थांश—लगभग २५० सूक्त—इन्द्र का गुणगान करने म व्यय किया गया है[2]। इन्द्र अग्नि[3] इन्द्र इन्द्राणी[4] इन्द्र मरुत[5] इन्द्र सरमा पणसि[6] आदि कई आख्यान इन्द्र स सम्बन्धित हैं।

---

१ वदिक माइथालाजी मकडानेल अनवादक श्री रामकुमार राय चौखम्बा विद्या भवन वाराणसी प्र० स० २ १८

२ वदिक देव शास्त्र (वदिक माइथालाजी मकडानेल) रूपान्तरकार—डा सूर्यकान्त प्रकाशक श्री भारत भारती प्रा लि० दिल्ली ६ प्रथम स १९६१ पृष्ठ १२६

३ ऋग्वेद ४।१८

४ वही १ ।८६

५ वही १।१६५ १७

६ वही १ ।५१।३

यम यमी का आख्यान[1] भी है। इन्द्रादि देवताओ के व्यक्तिगत आख्यानो को छोडकर ऋग्वेद मे पाये जानेवाले आख्यानो की सख्या २९ है। वे ये हैं—

सरमा (१/६/५) शुन शेप (१/२४/१), कक्षिवत् तथा स्वनय (१/१२५), दीर्घतमस (१/१४७), अगस्त्य तथा लोपामुद्रा (१/१७९) गृत्समद (२/१२), वसिष्ठ तथा विश्वामित्र (३/५३, ७/३३ आदि), सोमावतरण (३/१३), वामदेव (४/१८), त्र्यरुण तथा वृषजान (५/२) अग्नि जन्म (५/११), श्यावाश्व (५/५२ ६१), सप्तवध्रि (५/७८) बब्रु तथा भरद्वाज (६/४५) ऋजिश्वन तथा अतियाज (६/५२) सरस्वती तथा वध्र्यश्व (६/६१), विष्णु के तीन पग (६/६९), बृहस्पति जन्म (६/७१) राजा सुदाम (७/१८ आदि) नहुष (७/९५), असग (८/१ ३३), अपाला (८/९१) कुत्स (१०/३८), राजा असमाति तथा चार होता (१०/५७ ६०), नाभानेदिष्ठ (१०/६१ ६२), वृषाकपि (१०/८६) उर्वशी तथा पुरूरवा (१०/९५), देवापि तथा शान्तनु (१०/९८), नचिकेतस् (१०/१३५)।

अथर्ववेद म अगस्त्य उत्पत्ति, वसिष्ठ विश्वामित्र द्वेष, पृथु, नारद, मरुतो की उत्पत्ति तथा राहु द्वारा चन्द्र को ग्रसने की कथाएँ उपलब्ध होती हैं। इनमे स राहु द्वारा चन्द्र को ग्रसित करने की कथा तो पहले पहल अथर्ववेद म ही मिलती है।

ब्राह्मण ग्रन्थो म जो एक प्रकार से वदिक सहिताओ के भाष्य हैं दृष्टान्त रूप से कुछ आख्यान आये हैं। इनमे वदिक सहिताओ की अपेक्षा आख्यानो का स्वरूप कुछ विशद अवश्य हो गया है। ब्राह्मण ग्रन्थों म विशेषत शतपथ ब्राह्मण मे कुछ अधिक आख्यान आये हैं जिनमे इन्द्र द्वारा वृत्रासुर और विश्वरूप वध त्वष्टा द्वारा वज्र की उत्पत्ति, ध्रुव, पुरूरवा उर्वशी, कद्रू-सुपर्ण, दधीचि, मित्रावरुण, पृथु वसिष्ठ विश्वामित्र आदि के आख्यान प्रमुख है। इन्द्र और अहल्या का आख्यान तो प्रथमत शतपथ ब्राह्मण में ही आता है। जल प्लावन की कथा भी इस ब्राह्मण म आयी है।

उपनिषदो मे भी आध्यात्मिक ज्ञान को स्पष्ट करने के लिए आख्यानो का उपयोग किया गया है। हरिश्चन्द्र शुन शेप (मत्रेय उपनिषद), अश्विनीकुमार दध्यङ् (तत्तिरीय उपनिषद), पृथु (जैमिनीय उपनिषद), याज्ञवल्क्य गार्गी (बृहदारण्यक उपनिषद) के आख्यान ऐसे ही हैं।

ब्राह्मण तथा आरण्यक (शतपथ ब्राह्मण के चौदहवें काण्ड के प्रथम तीन भाग) ग्रन्थो की तरह प्रत्येक वदिक सहिता के अपने सूत्रग्रथ भी हैं। विविध सूत्रग्रन्थो मे इन्द्र अहल्या, नारद ध्रुव हरिश्चन्द्र शुन शेप आदि के आख्यान सकेत रूप मे मिलत हैं।

यास्क मुनि कृत निरुक्त' (ऋग्वेद की शब्दानुक्रमणिका निघण्टु की व्याख्या) मे ऋग्वेद मे आये समस्त आख्यानों का विवरण एक स्थान पर पहली बार ही आया है। ऋग्वेद म जो आख्यान सकेत रूप म हैं, उनकी पूरी कथा निरुक्त म प्राप्त होती है।

---

१ वही १।११(१०१ऋचाओं में)

ऋग्वेद के पूरक साहित्य मे शौनककृत बृहद्देवता की भी गणना की जाती है। उसमे अगस्त्य विश्वामित्र तथा वसिष्ठ आदि की कथाएँ आती हैं।

महाकाव्यों मे आख्यान

(क) रामायण

सम्भव है कि रामायण ने विश्वामित्र द्वारा शुन शेप की रक्षा तथा इन्द्र-अहल्या आख्यान एव अन्य कुछ स्थलो पर वदिक साहित्य से प्रेरणा प्राप्त की हो और उसका दाय ग्रहण किया हो किन्तु वाल्मीकि ने रामकथा को मुख्यत लोकवार्ता से सग्रह किया और काव्यत्व के लिए उपयुक्त उसके अशो को ग्रहण कर एक मार्मिक प्रबन्ध काव्य का सजन कर दिया। यह पहले कहा जा चुका है कि वाल्मीकि ने जब राम-कथा को अपने काव्य मे निबद्ध किया उसके बहुत पहले से राम कथा गाथा रूप मे लोक नायको द्वारा गायी जाती रही थी। वाल्मीकि ने उसको व्यवस्थित रूप दे दिया। यह भी कह चुके हैं कि वाल्मीकि रामायण के प्रथम और सप्तम काण्ड रामायण मे बाद के जुडे अश हैं। रामायण मे जो अतकथायें मिलती हैं उनमे से अधिकाश इन प्रथम और सप्तम काण्डो मे ही आयी हैं। वसिष्ठ विश्वामित्र द्वन्द्व वामनावतार इन्द्र-अहल्या जार शुन शेप सप्त महता के जन्म अग्नि के उपाख्यान बालकाण्ड मे आये हैं। उत्तरकाण्ड मे निमि वसिष्ठ के परस्पर शाप की कथा (इसके अतगत वसिष्ठ और अगस्त्य की उत्पत्ति तथा पुरूरवा उर्वशी प्रेम की कथायें भी आ गयी हैं) ययाति की कथा, वृत्रासुर वध तथा इन्द्र अहल्या की कथा आयी हैं। अन्यत्र बालि सुग्रीव तथा हनुमान आदि की उत्पत्ति ताडका का राक्षसी होना कार्त्तिकेय का जन्म सगर के पुत्रो का गगा द्वारा उद्धार होना आदि आख्यान आते हैं। नल नील कबन्ध कैकेई को प्रदत्त दो वरदान सीता निन्दक रजक आदि के लघु उपाख्यान भी रामायण मे मिलते हैं।

(ख) महाभारत

महाभारत इतिहास पुराण महाकाव्य दर्शन धर्मग्रन्थ सभी कुछ है। वह एक प्रकार का विश्वकोश है। अपने मूल रूप मे महाभारत एक वीर काव्य या लोक गाथा (बलड) ही रहा होगा। कहते हैं कि कृष्ण द्वैपायन व्यास ने जिस मूल कथा को लोक स्रोत से लेकर लिखा उसका नाम उन्होने जय रखा था और उसमे ८८०० श्लोक ही थे। वैशम्पायन ने जिस कथा को कहा उसका नाम 'भारत' था और उसकी श्लोक सख्या बढकर २४,००० हो गयी। उसमे आख्यान और उपाख्यान न थे। परन्तु उग्रश्रवा (सौति) ने जिस कथा को शौनक आदि को सुनाया उसमे विविध आख्यान उपाख्यान तो आ ही जुडे हरिवश पुराण भी परिशिष्ट रूप मे आ जुडा। फिर उसमे एक लाख से भी अधिक श्लोक हो गये। अपने बृहदाकार के कारण ही यह बाद मे महाभारत कहा जाने लगा।

महाभारत मे कौरव पाण्डवो के विग्रह का आख्यान तो मुख्य है ही इसके अतिरिक्त उसमे कई उपाख्यान भी गुथे हुए हैं। आदि पर्व का शकुन्तलोपाख्यान और

वन पर्व के मत्स्योपाख्यान, रामोपाख्यान शिवि-उपाख्यान, सावित्री-उपाख्यान तथा नलोपाख्यान अपने-आप म स्वतत्र आख्यान जसे हैं। इनम नलोपाख्यान एक ऐसा आख्यान है जिसका अस्तित्व महाभारत' से बहुत पूर्व का होना चाहिए। कुछ अन्य प्राचीन आख्यान भी 'महाभारत मे पाये जाते हैं जसे अगस्त्य द्वारा समुद्र शोषण विन्ध्य पर्वत वृद्धि का अवरोधन, अम्बरीष-दुर्वासा प्रसग समुद्र-मथन, कद्रू विनता, इन्द्र-वृत्रासुर अगस्त्य उत्पत्ति, विश्वामित्र-वसिष्ठ-द्वेष आदि।

पुराण साहित्य मे आख्यानो का स्वरूप

पुराण साहित्य मे रामायण' और महाभारत की आख्यान परम्परा बहुत पल्लवित हुई किन्तु पुराणो म आख्यानों को ऐतिहासिक और धार्मिक स्वरूप देने का जितना प्रयास हुआ उतना उनके काव्यात्मक तथा शीलगत रूप को उभारने का नहीं। केवल श्रीमदभागवत पुराण ही एक ऐसा पुराण है जो काव्य-तत्त्व की दृष्टि से भी समृद्ध है। पुराणो ने अपने पूर्ववर्ती ग्रथा तथा लोकानुश्रुतिया से बहुत कुछ सचित किया। शुन शेप वामानावतार इन्द्र अहल्या जार, मरुत, ययाति तथा पुरूरवा उवशी आदि अनेक प्राचीन आख्याना का पुराणों में वणन किया गया। अवतारवाद का प्रभाव दिखाने के लिए मत्स्य, कूर्म, वाराह तथा वामन आदि की कथाओ का भी इनम समावेश हुआ। बहुत से नय आख्यानो का भी जन्म हुआ जिनके विषय में यह कहना कठिन है कि वे पुराण लेखक की कल्पना की उपज थे अथवा लोकानुश्रुति से ग्रहण किये गये थे। भागवत धर्म का प्रभाव प्रकट करने के लिए भगवद्भक्तों की बहुत-सी कथाएँ भी पुराणो म गढ़ ली गयी। अजामिल, पिंगला गणिका, गज-ग्राह युद्ध आदि की कथाएँ इसी कोटि की हैं। विविध धार्मिक सम्प्रदायो के प्रभाव म आकर पौराणिक आख्याना म सकीर्ण साम्प्रदायिक उद्देश्या की सिद्धि के लिए परिवतन, परिवद्धन और सशोधन होते रह जिन्होंने पुराणों का स्वरूप बहुत विकृत कर दिया और पुराण 'भानमती के पिटारे' के समान हो गये।

उत्तरकालीन सस्कृत साहित्य मे पौराणिक आख्यान

उत्तरकालीन सस्कृत साहित्य पर जिसका प्रारम्भ कालिदास[1] से माना जा सकता है और जिसकी अखण्ड धारा बारहवीं शती तक प्रवाहित रही, रामायण', 'महाभारत और पुराण साहित्य का बहुत प्रभाव पडा। आख्याना की दृष्टि मे तो अब तक का समस्त सस्कृत साहित्य इन्हीं का उपजीव्य है परन्तु अन्य प्रकार से भी इन ग्रन्था ने उसे प्रभावित किया विशेषत रामायण ने।

---

१ कालिदास के काल क विषय में विद्वानों में मतक्य नहीं है। ए बी० कीथ महोदय कालिदास का काल चौथी शती ई० (गुप्तकाल) में निर्धारित करते हैं। (दे० ए हिस्ट्री आफ सस्कृत लिटरेचर ए० बी० कीथ आक्सफर्ड १९२८ प ८२)। परन्तु कुछ अन्य विद्वान कालिदास का काल प्रथम शती ई० पू० निर्धारित करने के पक्ष में हैं (दे० सस्कृत साहित्य का सक्षिप्त इतिहास श्री वाचस्पति गैरोला चौखम्बा विद्याभवन काशी १९६० पृष्ठ ७४१)।

कालिदास के पूर्व भी पौराणिक आख्यानो पर आधारित कुछ काव्य लिख गये थे। प्रसिद्ध वैयाकरण पाणिनि जिनका समय ५०० ई० पू० माना जाता है द्वारा लिखित जाम्बवती विजय' का उल्लेख मिलता है पर वह काव्य अब प्राप्य नही है।[1]

कालिदास से संस्कृत काव्य का जो उत्थान-युग प्रारम्भ हुआ उसमे तीन प्रकार के आख्याना का श्रव्य काव्यो म उपयोग किया गया। ये तीनो प्रकार क्रमश रामायण महाभारत और पौराणिक आख्यानो से सम्बधित थे।

प्रथम प्रकार के काव्यो म कालिदास का रघुवशम' शिरोमणि तुल्य है। १६ सर्गों में इस काव्य म दिलोप से लेकर रामचन्द्र तक अयोध्या के सूयवशी राजाओ के आख्यान वर्णित हैं। इस आख्यानक काव्य मे लोक कथा की कई कथानक रूढियो का प्रयोग हुआ है। कालिदास के उपरा त भट्टिकवि ने रावण वध महाकाव्य की रचना की जिसके २२ सर्गों म राम जन्म स लेकर उनके राज्याभिषेक तक की कथा वर्णित है। कुछ कम प्रसिद्ध कवियो जसे भीमक कुमारदास भट्टि वामन भट्ट चक्रकवि तथा भोजराज आदि ने भी परवर्ती काल मे रामकथा सम्बन्धी काव्य तथा चम्पू लिखे। राम-कथा का जन रूपान्तर रविषणाचाय (६६० ई०) ने पदमचरित म प्रस्तुत किया।

सस्कृत मे राम कथा को लेकर कुछ उत्कृष्ट दृश्य काव्यो की भी रचना हुई उनमे भास कृत प्रतिमा और अभिषेक नाटक तथा भवभूति कृत महावीर चरित और उत्तररामचरित नाटक विशष उल्लखनीय हैं। मुरारि कृत अनघ राघव राजशेखर कृत बाल रामायण, किसी अज्ञात कवि का लिखा हनुमन्नाटक तथा जयदेव कृत 'प्रसन्न राघव आदि नाटक भी महत्त्वपूर्ण हैं।

द्वितीय प्रकार के, अर्थात महाभारत के पौराणिक आख्यानो एव उपाख्यानो स सम्बन्धित काव्यो मे किराताजुनीयम (भारवि) शिशुपाल-वध (माघ) और नैषधीय चरितम (श्री हष) अधिक प्रसिद्ध हैं। किराताजुनीयम मे अजुन द्वारा पाशुपत अस्त्र की प्राप्ति के लिए शिव क प्रीत्यथ तपस्या और किरातवेशधारी शिव स युद्ध की कथा वर्णित है। माघ के शिशुपाल वध म कृष्ण द्वारा चेदि-नरेश शिशुपाल क वध की कथा का वणन है। महाभारत के नलोपाख्यान के आधार पर सस्कृत म जो कई काव्य और चम्पू (गद्य पद्य मिश्रित) लिख गये उनम 'नषधीय चरितम एक उज्ज्वल रत्न के समान है। त्रिविक्रम कृत नलचम्पू इसी परम्परा का काव्य है।

महाभारत के आख्यानो एव उपाख्यानो पर आधारित जो दृश्यकाव्य सस्कृत मे लिखे गये उनम से कुछ प्रमुख हैं—भासकृत पचरात्रम् 'दूतवाक्यम मध्यम व्यायोग दूत घटोत्कच' ऊरुभग कालिदास-कृत 'अभिज्ञान शाकुन्तलम भट्टनारायण कृत वेणी-सहार क्षेमेन्द्र कृत भारतमजरी आदि। इन नाटको म कालिदास का अभिज्ञान शाकुन्तलम अन्तर्राष्ट्रीय प्रसिद्धि प्राप्त कर चुका है। इसमे महाभारत के शकुन्तलोपाख्यान

---

१ सस्कृत साहित्य का स इतिहास श्री वाचस्पति गरोला पृ० ७२४

के आधार पर कथा वर्णित है परन्तु कवि ने कुछ मौलिक उदभावनाएँ भी की हैं, जसे दुर्वासा शाप और सहिदानी वाली अगूठी की कल्पना। महाभारत के शकुन्तलोपाख्यान और 'अभिज्ञान शाकुन्तलम' मे वस्तुगत और शलीगत दोनो प्रकार की पर्याप्त भिन्नता है।

तीसरे प्रकार के अर्थात विशुद्ध पौराणिक आख्यानो से सम्बधित काव्यो एव नाटको की सख्या सस्कृत म यद्यपि अधिक नहा है तथापि उनम से कुछ रचनाएँ बहुत महत्त्वपूर्ण हैं। काव्यों में कालिदास का 'कुमारसम्भवम' शीर्षस्थानीय है। इस काव्य मे सती विरह व्याकुल शिव की घोर तपस्या कामदेव दहन शिव को वर रूप मे प्राप्त करने क लिए पार्वती की तपस्या, कार्तिकेय जन्म तथा तारकासुर वध आदि उपाख्यान वर्णित हैं। अन्य काव्या म रत्नाकर कृत हर विजय,' क्षेमेन्द्र कृत 'दशावतार चरित,' रामदेव-कृत 'पारिजात हरण और श्री कठ दीक्षित कृत गगावतरण' उल्लेखनीय है।

पौराणिक आख्यानों पर आधारित नाटकों में अधिक प्रसिद्ध हैं—कालिदास कृत विक्रमोवशीयम' (जिसमें पुरूरवा और उवशी की प्रेम कथा वर्णित है), अश्वघोष-कृत 'उवशी वियाग, हस्तिमल्ल कृत 'अजना पवनजय' तथा वामन भट्टनायक-कृत 'पावती परिणय।

कुछ निजधरी आख्यानो पर लिखित नाटक भी प्रसिद्ध हैं, जिनम विशेषत राजा उदयन से सम्बधित आख्यान वर्णित है। भासकृत 'प्रतिज्ञायौग धरायण और स्वप्नवासवदत्ता' तथा हर्षवधन कृत 'रत्नावली और प्रियदर्शिका इसी कोटि के नाटक हैं। श्री हर्ष-कृत 'नागानन्द और और भवभूति कृत मालती माधव नाटक भी अपनी आख्यानगत विशेषता एव काव्यशली के कारण विशेष प्रसिद्ध हैं।

पालि और प्राकृत मे पुराण-साहित्य तथा पौराणिक आख्यान

हिन्दू पुराणा की भाँति जन और बौद्ध पुराणो की भी रचना हुई जिनकी सख्या क्रमश २४ और ६ मानी जाती है। जनो के २४ पुराणा के नाम हैं—

आदिपुराण, अजितनाथ पुराण सम्भवनाथ पुराण अभिनन्दी पुराण, सुमति नाथ पुराण, पदमप्रभ पुराण सुपार्श्व पुराण चद्रप्रभ पुराण पुष्पदत पुराण, शीतलनाथ पुराण श्रेयांस पुराण वासुपूज्य पुराण विमलनाथ पुराण अनन्तजित पुराण, धर्मनाथ पुराण शातिनाथ पुराण, कुन्थनाथ पुराण, अरनाथ पुराण मल्लिनाथ पुराण मुनि सुव्रत पुराण नेमिनाथ पुराण नेमिनाथ का पुराण, पार्श्वनाथ पुराण सम्मति पुराण'।

'आदि पुराण' का उत्तरार्द्ध ही 'उत्तर पुराण' क नाम से प्रसिद्ध है जिसम उपयुक्त पुराणा म से क्रमश २ से लेकर २४ तक के पुराण सम्मिलित हैं। जन महा-पुराणा का त्रिषष्ट्यवयवो पुराण भी कहते हैं क्योंकि उनमे ६३ महापुरुषो के चरित वर्णित हैं। २४ तीर्थकर १२ चक्रवर्ती ९ वासुदेव, ९ प्रतिवासुदेव ९ बलदेव—इन ६३ महापुरुषा शलाका पुरुषा के चरित का वणन इन पुराणा मे मिलता है। ये पुराण दिगम्बर सम्प्रदाय वालो न लिखे। श्वेताम्बर सम्प्रदाय वाला ने इनकी तुलना मे

1 हिन्दुत्व रामदास गौड प्रकाशक बाबू शिवप्रसाद गुप्त सवा उपवन काशी पृ० ४१६

चरिउ' या चरित-काव्य-ग्रन्थों की रचना अपभ्रंश मे की। उनमे अनेक महापुरुषों के स्थान पर एक ही महापुरुष का चरित्र-वर्णन होता था।

उपर्युक्त पुराणों म 'आदि पुराण,' 'पदमप्रभ पुराण' 'अरिष्टनेमि पुराण' (जिसे जनियों का हरिवंश पुराण भी कहते हैं) और 'उत्तर पुराण' अधिक प्रसिद्ध हैं। इनमे भी 'आदि पुराण' और उत्तर पुराण' का अधिक महत्व माना जाता है।

पालि और प्राकृत म पौराणिक आख्यानों का उपयोग करते हुए कुछ काव्य लिखे गये, परन्तु उन पर बौद्ध और जन धर्मों का साम्प्रदायिक रंग चढ़ा मिलता है। पाँचवी शती के जातकट्ठवण्णना म संगृहीत पालि म लिखित दशरथ जातक राम कथा का बौद्ध संस्करण प्रस्तुत करता है।

प्राकृत म अधिकांश काव्य राम और कृष्ण की कथाओं के आधार पर लिखे गये हैं। विमल सूरि का 'पउम चरिय' और प्रवरसेन का सेतुबन्ध (रावणवहो या रावण वध) प्राकृत भाषा म राम-कथा को लेकर लिखे गये महाकाव्यों मे उल्लेखनीय हैं। हेमचंद्र ने प्राकृत में एक जन रामायण लिखी। उनके द्वारा लिखित त्रिषष्टिशलाका पुरुष चरित' म भी राम कथा का वर्णन है। इनके अतिरिक्त जिनदास कृत 'रामपुराण' और सोमदेव सूरि कृत 'रामचरित' भी उल्लेखनीय हैं। कृष्ण कथा पर लिखे प्राकृत काव्यों म ✓श्री कृष्णलीला शुक का 'श्री चिह्न काव्य (सिरिचिंध काव्य) महत्वपूर्ण है।

अपभ्रंश-साहित्य मे पौराणिक आख्यान

अपभ्रंश का अधिकांश साहित्य जन कवियों द्वारा लिखित है। जन कवि प्रचारक पहले हैं और कवि बाद म। अपभ्रंश साहित्य में जन महापुराणों पुराणों और चरित काव्यों में आख्यान मिलते हैं। पौराणिक आख्यान मुख्यत जन महापुराणों और पुराणों मे आये हैं। जन पुराणों का उद्देश्य ६३ महापुरुषों का चरित वर्णन करना है। जनों ने राम लक्ष्मण और रावण को जन धर्मावलम्बी तो माना ही है उनकी गणना त्रिषष्टि महापुरुषों म की है। प्रत्येक कल्प के त्रिषष्टि महापुरुषों म से नौ बलदेव नौ वासुदेव और नौ प्रतिवासुदेव माने जाते हैं। ये तीनों सदा समकालीन होते हैं। राम लक्ष्मण और रावण क्रमश आठवें बलदेव वासुदेव और प्रतिवासुदेव माने गये हैं[१]।

अपभ्रंश काव्यों में राम कथा के दो रूप मिलते हैं। एक रूप तो विमल सूरि के पउम चरिय के अनुसार है और दूसरा रूप गुणभद्र के 'उत्तरपुराण' के अनुसार। अपभ्रंश के कुछ कवियों ने राम कथा-वर्णन म विमल सूरि का अनुसरण किया है और कुछ ने गुणभद्र का। अपभ्रंश के प्रथम कवि स्वयम्भू (८वीं ९वीं शती) प्रथम वर्ग म आते हैं और पुष्पदन्त द्वितीय वर्ग म[२]।

स्वयम्भू के पउम चरिउ म राम-कथा का जन रूपांतर प्राप्त होता है। इसी

---

१ डा॰ जैकोबी द्वारा सम्पादित और जन धर्म प्रचारक सभा भावनगर से १६१४ ई॰ में प्रकाशित।

२ अपभ्रंश-साहित्य डा॰ हरिवंश कोछड़ प्रका॰ भारती साहित्य मन्दिर दिल्ली १९५६ पृष्ठ १७-१८

३ वही पृ॰ ४०

कवि द्वारा रचित एक अन्य ग्रन्थ 'रिट्ठणमि चरिउ' (रिष्टनेमि चरित) या 'हरिवंश पुराण' में महाभारत और श्रीमद्भागवत पुराण की कुछ कथाओं को ग्रहण किया गया है। पुष्पदंत विरचित 'महापुराण' (तिसट्ठि महापुरिस गुणालंकार)—१०१६ २२वि०—की ६९ से ७९ संधि तक राम कथा वर्णित है। इसी का ८१ से ९२ संधि तक महाभारत की कथा कही गयी है। इसी को कवि ने 'हरिवंश पुराण' अभिहित किया है। हरिषेण ने वि० सं० १०४० में एक 'धम्म परिक्खा' शीर्षक ग्रन्थ लिखा जिसमें हिन्दुओं के विविध पौराणिक आख्यानों में पायी जानेवाली असंगतियों पर प्रकाश डाला गया है। प्राकृत में भी इसी प्रकार का एक ग्रंथ 'धूर्त्ताख्यान' हरिभद्र सूरि ने ८वीं शती वि० में लिखा था जिसमें हिन्दू पुराणों पर व्यंग्य किया गया था।

पुष्पदंत ने अपभ्रंश में एक धार्मिक काव्य — 'णायकुमार चरिउ' (नागकुमार चरित) लिखा जिसमें अनेक पौराणिक आख्यानों, उपाख्यानों में शिव द्वारा कामदेव दहन और ब्रह्मा का सिर काटना विष्णु द्वारा वाराहावतार में पृथ्वी का उद्धार, देव दानवों द्वारा समुद्र मंथन शेषनाग के सिर पर पृथ्वी की स्थिति आदि मुख्य हैं। *रामायण और महाभारत के पात्रों और कथा प्रसंगों का भी यत्र-तत्र उल्लेख मिलता* है। पौराणिक पात्रों कृष्ण, अर्जुन, नकुल, शिखण्डी, द्रोणाचार्य, अश्वत्थामा, रावण, अक्षयकुमार और विभीषण का अलंकार प्रयोग वीर कवि रचित 'जंबुसामि चरिउ' (१०७६ वि०) में भी हुआ है।[1]

अपभ्रंश काव्यों में हिन्दू पौराणिक आख्यानों को तोड़ मरोड़ कर जैन धर्म के प्रतिपादन का साधन बना लिया गया, इस पर आश्चर्य और क्षोभ करने का कोई कारण नहीं क्योंकि हिन्दू ब्राह्मणों ने भी सम्प्रदाय समर्थन के लिए पौराणिक आख्यानों का मनचाहा प्रयोग किया ही है।

—o—

१ वही पृ० १४७ और १५२

· ४ · कुछ पौराणिक आख्यानो का विकास-क्रम

विविध पौराणिक आख्यानों के मूल स्रोत और उनके क्रमिक विकास को देखने का प्रयास हिन्दी और हिन्दीतर भारतीय भाषाओं में बहुत कम हुआ है। इस दिशा में अधिक कार्य अपेक्षित है। हम इस अध्याय में ५५ पौराणिक आख्यानों के विकासात्मक अध्ययन का विनम्र प्रयास कर रहे हैं। यह प्रश्न हो सकता है कि इन आख्यानों को ही हमने अध्ययनार्थ क्यों चुना। एक ही समाधान दिया जा सकता है कि ये सभी आख्यान किसी न किसी रूप में मध्ययुगीन हिन्दी सूफी प्रेमाख्यानक काव्यों में प्रयुक्त हुए हैं—कहीं इनका प्रतीकात्मक रूप में कहीं आलंकारिक रूप में कहीं दार्ष्टान्तिक रूप में और कहीं मात्र उल्लेखात्मक रूप में प्रयोग हुआ है। ये आख्यान वैदिक महाकाव्यीय और पौराणिक स्रोत के हैं। यहाँ इनको कथा-वर्गों में विभाजित न करके अकारादि क्रम से ही लिया गया है ताकि किसी कथा को तत्काल खोजने में असुविधा न हो। नीचे इनकी एक सूची दी जा रही है—

१ अगस्त्य ऋषि द्वारा समुद्र शोषण।
२ इन्द्र-अहल्या आख्यान।
३ इन्द्र का अपने वज्र से पर्वतों के पंख काटना।
४ उषा अनिरुद्ध प्रेमाख्यान।
५ कच देवयानी प्रेमाख्यान।
६ कर्ण जन्म की कथा।
७ कर्ण द्वारा इन्द्र को कवच-दान।
८ कार्त्तिकेय-जन्म की कथा।
९ कृष्णावतार की कथा।
१० कृष्ण की लीलाओं का पौराणिक संदर्भ।
११ कृष्ण द्वारा कालिय नाग का दमन।
१२ कृष्ण का गोपियों के साथ महारास।
१३ कृष्ण का अक्रूर के साथ मथुरा-गमन।
१४ कृष्ण द्वारा कुब्जा का कूबड़ ठीक कर देना।
१५ कृष्ण द्वारा कंस का वध।
१६ कृष्ण द्वारा उद्धव को ब्रज भेजना।
१७ कृष्ण का राधा और गोपियों से पुनर्मिलन।

१८ कृष्ण द्वारा सादीपनि गुरु के पुत्र को यमपुर से वापस लाना—गुरुदक्षिणा चुकाना।
१९ कृष्ण द्वारा सुदामा का दारिद्र्य दूर किया जाना।
२० कृष्ण से व्याघ्र का प्रतिशोध लेना।
२१ गरुड द्वारा स्वग से अमृत आनयन।
२२ चन्द्रमा और सूय से राहु की शत्रुता।
२३ चन्द्रमा का कलकी होना।
२४ चन्द्रमा का क्षयी होना।
२५ जनमेजय का नाग यज्ञ।
२६ द्रौपदी का अक्षय भण्डार।
२७ नल दमयती प्रेमाख्यान।
२८ नागो का पाताल लोक मे वास।
✓२९ नारद मोह की कथा।
✓३० नसिहावतार की कथा।
३१ परशुराम द्वारा सहस्रबाहु (सहस्राजुन) तथा अन्य क्षत्रियो का विनाश।
३२ पाण्डवो की कौरवो पर विजय—एक सिद्ध योगी की सहायता से।
३३ पाण्डवो द्वारा कम फल भोग।
३४ भगीरथ द्वारा गगा का पृथ्वी पर आनयन।
३५ राम-कथा (इसके अतगत राम कथा के १९ प्रसगो का उल्लेख और है सपूण राम-कथा का विकास दिखाया गया है)।
३६ विष्णु का मत्स्यावतार—शखासुर को लीलना और वेदो का उद्धार करना।
३७ विष्णु के वामनावतार की कथा।
३८ शकुतला दुष्यन्त प्रेमाख्यान।
३९ श्रवणकुमार की कथा।
४० शिवजी के ललाट पर द्वितीया का चन्द्र।
४१ शिवजी के कन्धे पर दो हत्याएँ होना
(क) ब्रह्मा की हत्या
(ख) कामदेव की हत्या।
४२ शिवजी का कामदेव से पराजित होना।
४३ शिवजी द्वारा अधकासुर का वध।
४४ शिवजी का त्रिनेत्र और योगीश्वर होना।
४५ शिवजी की शरण म आकर राम का रण जीतना।
४६ शिवजी द्वारा त्रिपुर-सहार।
४७ शिवजी द्वारा दक्ष-यज्ञ विध्वस।
४८ शिवजी द्वारा सती का परित्याग।

४९ शिवजी का पार्वती के कहने से कैलास छोड देना।
५० शुकदेव जी का दो घडी से अधिक कही न ठहरना।
५१ समुद्र मथन की कथा।
५२ हनुमान का आकाश म चढ़ना।
५३ हनुमान द्वारा ऋषि राक्षस (कालनेमि) का वध।
५४ हनुमान का भीम स युद्ध और अजुन की ध्वजा पर आसीन होना।
५५ हरिश्चन्द्र की सत्यप्रियता एव दानशीलता की कथा।

(१) अगस्त्य ऋषि द्वारा समुद्र-शोषण

अगस्त्य ऋषि द्वारा समुद्र शोषण की कथा वैदिक साहित्य म नही आती। यह कथा पौराणिक युग की उपज है। इस कथा का उद्देश्य अगस्त्य की लोकोपकारी प्रवत्ति और उनके तपोबल की महिमा को दिखाना है। पौराणिक साहित्य मे यह कथा निम्न रूपों म प्राप्त होती है—

महाभारत[1] के अनुसार जब इन्द्र ने वृत्रासुर का वध कर दिया तब वृत्र के अनुयायी कालकेय आदि दैत्य देवताओ के भय से समुद्र म जा छिपे। दैत्यो ने यह गुप्त मत्रणा की कि देवताओ से पार पाने का एक ही उपाय है कि ऋत्विक ऋषियो को मार दिया जाय, उनके यज्ञ-कर्म म बाधा पहुँचाई जाय। न यज्ञ होगे न अपना भाग प्राप्त कर देवता पुष्ट हो सकेंगे। फिर निबल देवताओ को हराना कठिन नही रह जाएगा। अपनी इस योजना के अनुसार, कालकेय नामक दैत्य वसिष्ठ च्यवन भरद्वाज आदि ऋषियो के अग्निहोत्र मे विघ्न डालने लगे और तपस्वियो को मारने लगे। यह सब सहार लीला कर वे समुद्र म जा छिपते थे। इस प्रकार देवता उनका कुछ नही बिगाड पाते थे। जब कुछ पार न बसायी तब इन्द्रादि देवता विष्णु भगवान के पास गये। विष्णु ने सुझाया कि महर्षि अगस्त्य को जिन्होने विन्ध्याचल का बढना अपने तपोबल से रोक दिया था समुद्र शोषण के लिए तयार किया जा सके तो काम बन सकता है। देवतागण अगस्त्य के पास पहुचे और अपनी विपत्ति म सहायता करने की प्राथना की[2]। अगस्त्य ने सागर पान करना स्वीकार कर लिया। देवताओ और ऋषियो के साथ समुद्र तट पर जाकर मित्रावरुण के पुत्र अगस्त्य ने सबके देखते देखते समुद्र को पीना आरम्भ कर दिया। कुछ ही देर मे उन्होने समुद्र को जलशून्य कर दिया। समुद्र को निर्जल हुआ देख देवता लोग अपने दिव्य आयुध लेकर दैत्यो पर पिल पडे। दैत्यगण उनके सामने दो घडी स अधिक नही टिक सके। मरने से बचे हुए दैत्य पाताल लोक मे चले गए। देवताओ ने इस उपकार के लिए अगस्त्य की स्तुति की। पुन समुद्र भरने की प्राथना की तो अगस्त्य ने कहा कि मैंने यह जल तो पचा लिया अब

१ महाभारत वन पर्व अ १ १ १ ५
२ वही वन पर्व अ १०१।१०४।

आप लोग समुद्र को भरने का कोई दूसरा ही उपाय सोचें[1]।

अगस्त्य द्वारा समुद्र पान की कथा 'पदमपुराण' मे दो स्थलो पर आई है—सृष्टि खण्ड के अध्याय १९ और २२ म। अध्याय १९ की कथा तो बिल्कुल महाभारत के वन पव मे आई कथा के समान है। किन्तु, अध्याय २२ की कथा म कुछ भिनता है। उस कथा के अनुसार वत्रासुर-वध के उपरान्त जब तारक कालेय, कमलाक्ष, कालदष्ट्र विरोचन आदि दैत्य समुद्र मे छिपे रह कर मौका पात ही, देवताओ और ऋषियो को सताने के अपने छापामार युद्ध को सहस्रा युग तक चलाते ही रहे तब इन्द्र ने अग्नि और मारुत को समुद्र सुखाने का आदेश दिया[2]। किन्तु समुद्र सुखा देन स उसम रहने वाले जीव जन्तुओ का भी नाश हो जाएगा और यह अधम होगा, इस आधार पर अग्नि और मारुत ने समुद्र का सुखाने से इन्कार कर दिया। इन्द्र को उनकी इस अवना पर रोष आया और उन्होने उन्ह शाप दिया कि तुम दोना पथ्वी पर मुनिया क रूप मे अवतार लो किन्तु मनुष्य रूप मे भी तुम्ह चुल्लुओ मे भरकर समुद्र को पीना पडेगा[3]। इन्द्र के शाप वश अग्नि और मारुत मित्रावरुण के वीय से अगस्त्य और वसिष्ठ के रूप म कुम्भ (घडे) से उत्पन हुए। दोनो ही उग्र तपस्वी हुए[4]।

अगस्त्य ने मलय पवत पर घोर तपस्या की। परन्तु उन्हें इस बात पर बडा रोष आया कि तारकासुर ससार के लोगो को बहुत पीडा पहुँचा रहा है और उन्होने समुद्र को पी लिया। उनके इस काय से प्रसन होकर शकर ब्रह्मा, विष्णु आदि वहा उपस्थित हुए और उन्होने अगस्त्य को कई वर प्रदान किये[5]।

'महाभारत' और पदम पुराण' की इस कथा मे भिनता के स्थल य हैं—

(१) 'पदम पुराण' के अनुसार, अगस्त्य और वसिष्ठ इन्द्र द्वारा अग्नि और मारुत को दिये हुए शाप के कारण मनुष्य-योनि म उत्पन हुए। 'महाभारत मे ऐसा उल्लख नही।

(२) महाभारत' म अगस्त्य पहले से ही समुद्र शोषण मे समथ बताय गए हैं जब कि पदम पुराण' मे उन्हाने यह शक्ति अपने तप से अर्जित की है।

(३) महाभारत' मे अगस्त्य देवताओ की प्राथना पर समुद्र शोषण क लिए प्रस्तुत हाते हैं किन्तु पदम पुराण' म जग पीडा से व्यथित हाकर। यहाँ प्रेरणा बाह्य नही, अन्तर की है।

(४) 'महाभारत' मे देवताओ ने दत्य-नाश के उपरान्त अगस्त्य जी से समुद्र को फिर से भर देने की प्राथना की है और अगस्त्य जी ने इसम अपने को असमथ बताया है क्योकि जो जल उन्होने पी लिया था वह पच चुका था। 'पदम पुराण'

१ वही वन पव अ १ ५
२ पद्म पुराण सृष्टि खण्ड २२।१ १३
३ वही सष्टि खण्ड २२ १४ १८
४ वही सृष्टि खण्ड २२। १६ २१
५ वही सृष्टि खण्ड २२।३३ ४८

मे न देवताओ की ओर से इसके लिए कोई अनुरोध है, न अगस्त्य की ओर से असमयता प्रकाशन।

'भविष्य पुराण'[1] में भी यह कथा आई है, किन्तु उसमे इसका रूप महाभारत' और 'पदम पुराण' से भिन्न है। भिन्नता इन बातो म है—

(१) 'भविष्य पुराण म देवताओ के डर से समुद्र मे छिपे हुए दैत्य वृत्रासुर के अनुयायी नही प्रत्युत इल्वल और वातापि के अनुयायी हैं। अगस्त्य ने वातापि का मास खाकर और उसे पचाकर नष्ट कर दिया था तथा इल्वल को अपने तप तेज से भस्म कर दिया था। (२) उनके न रहने पर उनके अनुयायी अगस्त्य के तेज से डर कर समुद्र मे जा छिपे थे किन्तु घात लगा कर वे दवताओ को निबल करने के लिए ऋषियो के यज्ञादि कम मे विघ्न उपस्थित करते रहत थे। देवताओ की प्राथना पर अगस्त्य ने समुद्र को सोख लिया। फिर देवताओ ने दत्यो का वध कर दिया।

स्कन्द पुराण'[2] म इस कथा का जो रूप मिलता है वह पूव कथा रूपो से बिल्कुल अनूठा और मौलिक है। कथा सक्षेप म इस प्रकार है—प्राचीन काल म देवो और असुरा म बहुत समय तक सग्राम चलता रहा। दत्या ने ब्रह्मा विष्णु और इन्द्रादि देवताओ को अपन बल विक्रम से पराजित कर दिया। तब शिव ने मदान सभाला। उन्होने देवताओ की ओर से दत्यो से युद्ध किया। उनके त्रिशल की मार के सामने दत्य टिक न सके और डर कर समुद्र मे जा छिपे। किन्तु वे ऋषियो के अग्निहोत्र तथा तपस्या आदि मे बराबर विघ्न डालते रहे। अगस्त्य ऋषि उस समय चमत्कारपुर म निवास करते थे। देवतागण उनके पास गए और उनसे समुद्र को पी जाने की प्राथना की। अगस्त्य न कहा कि इस समय तो मुझमे यह सामथ्य नही है परन्तु योगिनी सिद्ध करक मैं एक वष बाद इस काय को करने मे समथ हो जाऊगा। देवता चले गए। अगस्त्य ने विशापिणी देवी का विधिवत आराधन आरम्भ किया। उनकी भक्ति भावना से देवी प्रसन्न हुई। उसने वर मांगने को कहा। अगस्त्य ने कहा कि आप प्रसन्न हैं, तो मेरे मुख मे प्रविष्ट होइए ताकि मैं समुद्र को सोख सकू। विशोपिणी देवी ने तथास्तु कह दिया। उनकी कृपा से अगस्त्य ने समुद्र को सुखा दिया फिर देवताओ ने उसम छिपे दत्यो का वध कर दिया।

समुद्र को फिर से भरने की बात यहा नही उठायी गई है। इस कथा रूप मे तन्त्र मन्त्र और योगिनी डाकिनी सिद्ध करने की प्रवत्ति की छाप दिखायी दती है।

'मत्स्य पुराण'[3] में भी अगस्त्य के समुद्र शोषण की कथा आयी है। यहा कथा का रूप बिल्कुल वसा ही है जसा 'पदम पुराण' के सृष्टि खण्ड अध्याय २२ की कथा का। घटनाओ का क्रम भी मिलता जुलता है।

उपयुक्त पुराणो के अतिरिक्त आन द रामायण' मे भी यह कथा आती है।

---

१ भविष्य पुराण उत्तराद्ध अ १ ६

२ स्कन्द पुराण नागर खण्ड अध्याय ३३ ३५

३ मत्स्य पुराण अ ६१

उसमे अन्य बातें तो महाभारत की कथा के अनुसार हैं, किन्तु एक बात उसमे नवीन है। समुद्र को एक बार सोख लेने पर अगस्त्य ने उसको जल को मूत्र के रूप मे निकाल दिया जिससे समुद्र पुन भर गया किन्तु अब उसका जल खारा हो गया।[1]

(२) इन्द्र-अहल्या-आख्यान

कथा का मूल स्रोत—इन्द्र और अहल्या आख्यान का स्रोत वैदिक माना जाता है, परन्तु वस्तुत इसका भी मूल स्रोत अधिकाश पौराणिक आख्यानो की भाँति लोक है। शिष्ट साहित्य म इस कथा का प्राचीनतम रूप शतपथ ब्राह्मण[2] मे मिलता है। वहाँ कथा का सकेत मात्र है। इस ब्राह्मण मे ऋत्विज ऋषि न यज्ञ-कर्म के समय देवताओं का आह्वान करते हुए जब इन्द्र का आह्वान किया है तब उसे 'हरिव' मेधातिथेमेष,' 'वृषणश्वस्य मेने गौरावस्कन्दिन' और 'अहल्याय जार विशेषणो से सम्बोधित किया है[3]। इन विशेषणो का अर्थ क्रमश यह है—इन्द्र के पास अच्छे घोडे थे इन्द्र मेधातिथि का मेष बना था इन्द्र को वृषण रहित जानो, इन्द्र गौतम की दारा का भोक्ता है और इन्द्र अहल्या का जार है। इससे यह पता चलता है कि शतपथ ब्राह्मण म आने से पूर्व इन्द्र के वृषणहीन होने और अहल्या का जार होने की कथा लोक मे प्रचलित रही होगी, तभी वह विशेषण रूप म प्रयुक्त हो पायी।

शतपथ ब्राह्मण के अतिरिक्त वैदिक साहित्य मे जैमिनीय ब्राह्मण (२/७६), तैत्तिरीय आरण्यक (१/१२/३) षड्विंश ब्राह्मण (१/१/१६) तथा लाट्यायन श्रौतसूत्र (१/३/१) तथा द्राह्यायण श्रौतसूत्र (१/२/१ २) आदि म भी इस कथा के सूत्र मिल जाते हैं। इससे यह पता चलता है कि इस आख्यान के विकास मे इन ब्राह्मण तथा सूत्रग्रन्थो का भी योग रहा[4]।

कथा का निहितार्थ

'विष्णु पुराण' और 'वायु पुराण' म अहल्या को दिवोदास की बहन और वध्र्यश्व की मेनका स उत्पन्न पुत्री कहा गया है[5]। परन्तु 'वाल्मीकि रामायण' म उसके

---

१ पीताय जलधि पूर्वश्रुत कोधादगस्तिना।
मूत्र द्वारा बहिस्त्यक्तो यस्मात्क्षारत्वमागत ॥
—आनन्द रामायण विलास ६ श्लोक २१

२ शतपथ ब्राह्मण ३।३४।१७ १६

३ इन्द्रो व यज्ञस्य देवता तस्मादाह इन्द्रागच्छति। हरिव आगच्छ मेधातिथमेष वृषणश्वस्य मेन गौरावस्कन्दिन अहल्याय जारेति। तन्‍ या येवास्य चरणानि तरेवनमतत प्रमुमोदयिष्यति। (शतपथ ब्राह्मण ३।३।४।१८)

४ द० 'रामचरित मानस की अतकथाओ का आलोचनात्मक अध्ययन डा० वागीशदत्त पाण्डेय (अप्रकाशित शोध प्रबध आगरा विश्वविद्यालय पुस्तकालय में सगृहीत) पृ० १२१

५ विष्णु पुराण ४।१६।१६ और वायु पुराण ६६।२०

अहल्या' नामकरण का कारण बताते हुए कहा गया है कि उसके शरीर मे कुछ भी विरूपता न थी—

> हल नामेह वरूप्य हल्य तत्प्रभव भवेत् ।
> यस्या न विद्यते हल्य तनाहल्येति विश्रुता ॥[1]

कुमारिल भट्ट ने इस कथा के निहिताथ को स्पष्ट करते हुए तत्रवार्तिक १/३/७ म कहा है कि 'सम्पूण तेजस्वी पदार्थों म ऐश्वय है इस कारण तजपुज को इन्द्र कहा गया है। दिन म लीन होने के कारण अहल्या' का शाब्दिक अथ रात्रि है। सूय ही रात्रि के क्षयस्वरूप जरण का कारण है। अहल्या (रात्रि) जिसम जीण हुई अथवा जिसके उदय होने स अहल्या जीण हुई उसी को अहल्या जार कहते हैं। 'अहल्या जार शब्द का अथ सूय है। इसमे पर स्त्री के साथ व्यभिचार की बात आलकारिक शली म ही कही गयी है'। अहल्या रात्रि है और इन्द्र सूय। रात्रि के पीछ सूय का दौडना तो एक प्राकृतिक सत्य है अत देवताओ द्वारा धम उल्लघन करने का प्रश्न ही नहीं उठता।

कथा का विकास क्रम

वाल्मीकि रामायण' म इन्द्र अहल्या जार की कथा दो स्थलो[3] पर आयी है और दोनों म ही परस्पर भिन्नता है।

बालकाण्ड म इस कथा का रूप यह है मिथिला की ओर जाते हुए रामचन्द्र माग मे एक निजन मनोरम आश्रम को देखकर विश्वामित्र से उसके विषय म जिज्ञासा करते हैं। विश्वामित्र न बताया—कभी यहाँ गौतम अपनी पत्नी अहल्या के साथ तपस्या करते थ। एक दिन गौतम अपने आश्रम स कही दूर गये थे। इन्द्र गौतम का वेश धारण कर आ गया और उसने अहल्या से रति की इच्छा प्रकट की। अहल्या को ऋषि की असमय रति की इच्छा पर आश्चय हुआ। उसने योग बल से जान लिया कि यह व्यक्ति गौतम नहीं इन्द्र है परन्तु देवरति के कुतूहलवश वह समागम के लिए प्रस्तुत हो गयी और उस समागम से उसने अपने को कृताथ भी अनुभव किया। रमण कर इन्द्र जसे ही आश्रम से निकला वसे ही गौतम आ गए। गौतम ने अपना वेश धारण किये दूसरे व्यक्ति को जो देखा तो उनका माथा ठनका। योग बल से व सारी

---

१ वाल्मीकि रामायण उत्तर काण्ड ३ ।२२ २४

२ अष्टादश पुराण दपण प ज्वालाप्रसाद मिश्र प्रकाशक वेंकटश्वर स्टीम प्रस बम्बई पृ ४१५ ४१६

३ वाल्मीकि रामायण बालकाण्ड सग ४८ ४९ और उत्तर काण्ड सग ३

४ मनिवष सहस्राक्ष विज्ञाय रघुनन्दन।
मति चकार दुर्मेधा देवराज कतूहलात। (वही बालकाण्ड ४८।१९)
× × ×
कृताथ स्मि सुरश्रेष्ठ गच्छशीघ्रमित प्रभो।
आत्मान मा च दवेश रक्ष गौतमात ॥ (वही बाल ४८।२)

बात जान गए। उन्होंने इन्द्र को वषणरहित हो जाने का शाप दिया[1]। तुरन्त ही इन्द्र के वषण गिर पडे। गौतम ने अहल्या को वायु मात्र भक्षण करते हुए, निराहार भस्मशायिनी रूप मे अदृश्य रहते हुए हजारो वर्षों तक उसी निजन आश्रम मे तप करते रहने का शाप दिया[2]। अहल्या जब मुनि के सामने बहुत गिडगिडायी, तब मुनि न शाप मोचन का उपाय बताया कि त्रेता युग मे दशरथ-पुत्र राम के वन आने पर तू उनके दशनो से पवित्र होगी तभी शरीर धारण कर पुन मेरे पास रहने योग्य होगी[3]। इन्द्र और अहल्या को शाप देकर गौतम हिमालय में तप करने चले गए।

यहाँ अहल्या का शिला होना तथा इन्द्र का सहस्रभग होना सूचित नही होता। यहाँ तो इन्द्र को पहले ही 'सहस्राक्ष' सम्बोधित किया गया है—

'अथ दृष्ट्वा सहस्राक्ष मुनिवेषधर मुनि ।
दुर्व त्त वृत्तसम्पन्नो रोषाद्वचनमब्रवीत ।।'[4]

उत्तरकाण्ड मे कथा रूप इस प्रकार है—मेघनाद द्वारा पराजित इन्द्र को ब्रह्मा ने स्वय यह कथा सुनाई है। ब्रह्मा ने इन्द्र को बताया—मैंने कुतूहलवश एक ऐसी नारी का निर्माण किया जिसकी रचना प्रत्येक प्राणी के अग प्रत्यग की सुन्दरता को लेकर की गयी थी। उसके शरीर म किसी प्रकार की कोई विरूपता न थी, इसलिए उसका अहल्या नाम पडा। कन्या का निर्माण कर लेन पर मुझे उसके उपयुक्त वर की चिन्ता हुई। तुम भी उस पर आसक्त हुए किन्तु मैंने उसे कुछ समय के लिए गौतम ऋषि के पास धरोहर रूप मे रखना ही ठीक समझा। गौतम उसके साथ बहुत सयम-पूवक रहे और उन्होंन समय आन पर वह कन्या मुझे लौटा दी। मैंने प्रसन्न होकर वह कन्या गौतम को ही दान कर दी। इससे देवता निराश हो गए। एक बार तुम कामातुर हो मुनि के आश्रम मे उनकी अनुपस्थिति म गए। तुमने सौन्दय से दीप्त उस स्त्री को देखा और उसका सतीत्व भग किया। गौतम ऋषि इसी बीच आ गए और उन्होंने देख लिया और शाप दिये—(१) शत्रु द्वारा पराभूत होकर तू पकडा जाएगा। (२) जगत के प्रत्येक व्यभिचार का आधा पातक तुझे लगेगा। (३) इन्द्र पद एक इन्द्र के पास सदैव नही रहगा। इन्द्र को शाप देकर मुनि ने अहल्या को यह शाप दिया—तू आश्रम के समीप रूपहीन होकर रह। इतनी सुन्दर होने पर भी तूने ऐसा निन्दित कम किया, अत आज स तू ही अकेली सुन्दरी नहीं रहेगी।' अहल्या ने जब मुनि को अपनी निर्दोषता बतायी और कहा कि आपके रूप से भ्रमित होकर ही मुझसे यह अपराध हुआ है अन्य किसी कामना से मैंने यह काय नही किया, तब मुनि न कहा कि रामचन्द्र का आतिथ्य करने पर तू शाप से छूट जाएगी। शाप देकर मुनि आश्रम छोडकर तप करने चले गये।

---

१ वही बालकाण्ड ४८।२८ २९
२ वही बाल० ४८।३० ३१
३ वही बाल० ४८।३२ ३३
४ वही बाल० ४८।२७

उपर्युक्त दोनों कथा रूपो मे अ तर यह है कि बालकाण्ड म अहल्या के ज म की कोई कथा नही दी गई। उत्तरकाण्ड मे ब्रह्मा द्वारा उसे अलौकिक सौ दय-सम्पन्न बनाना बताया गया है और यह भी कि इ द्र पहले से ही उस पर मोहित था। बालकाण्ड मे जार-कम की यह मनोवज्ञानिक पृष्ठभूमि नहीं दी गई है। बालकाण्ड म अहल्या यह जानते हुए भी कि गौतमवेशधारी व्यक्ति इ द्र है, देवता से रति करने के कुतूहलवश उससे समागम करती है कि तु उत्तरकाण्ड मे वह इ द्र को पहचान नही पाती और छली जाती है। प्रथम म सकाम होने से उसका काय पापपूण हो जाता है और द्वितीय म अकाम भाव होन से वह निर्दोष रहती है। यही कारण है कि दोना स्थलो पर उसको दिए शाप मे भी भि नता है।

'महाभारत' म केवल एक श्लोक मे इस कथा की ओर सकेत किया गया है। उसम बताया है कि अहल्या पर बलात्कार करने के कारण गौतम के शाप से इ द्र का हरिश्मश्रु (हरी दाढी मूछो वाला) होना पडा और विश्वामित्र के शाप से उ ह अपना अण्डकोश खो देना पडा। उनकी जगह मेड के अण्डकोश जोडे गये[1]।

'ब्रह्म पुराण'[2] मे गौतमी गगा तथा इ द्र-तीथ के माहात्म्य-वणन प्रसग म इस कथा का उल्लेख हुआ है। यहाँ अहल्या के ज म एव पालन-पोषण आदि की घटनाएँ 'रामायण के उत्तरकाण्ड के समान हैं शेष घटनाओ में नवीनता है। सक्षेप म कथा यह है— ब्रह्मा द्वारा निर्मित लोकातीत रूप गुण सम्प न क या (अहल्या) को जब यौवनागमन तक अपने पास रखने के बाद गौतम ऋषि ने ब्रह्मा को अक्षत ही लौटा दिया तब ब्रह्मा उनके सयमपूण आचरण से बहुत प्रस न हुए। इ द्र अग्नि वरुण आदि सभी देवता उस पूण युवती अहल्या को माँगने लगे। सबमे इ द्र अधिक आतुर था। ब्रह्मा ने शत लगा दी कि जो कोई पथ्वी की परिक्रमा करके सबसे पहले लौटेगा, उसी को अहल्या मिलेगी। सभी देवता परिक्रमा करने चले। गौतम ने अद्धप्रसूता कामधेनु को पथ्वी स्वरूपा मानकर उसी की प्रदक्षिणा की उन्होने शिव लिंग की भी परिक्रमा कर ली। फिर ब्रह्मा के पास गए। ब्रह्मा ने गौतम को अहल्या दे दी। सभी देवता निराश हो गये। इ द्र के मन मे ईर्ष्या जागी। ब्रह्मा ने ब्रह्मगिरि का क्षेत्र गौतम को दे दिया। वे वही रहकर तप करने लगे। इ द्र चोरी छिपे एक बार गौतम के आश्रम म आया और ब्राह्मण के रूप म बहुत दिनो तक वहाँ रहा। एक दिन गौतम शिष्यो-सहित कही बाहर गये हुए थे। गौतम का रूप धारण कर इ द्र अह या के पास गया। अहल्या ने उसे गौतम ही माना। इ द्र ने रमण किया। तभी गौतम वापस आ गये। आश्रम क रक्षका ने उ हे द्वार पर ही कह दिया कि आप आश्रम के भीतर और बाहर रहते हैं यह आपके तप का ही प्रभाव है। गौतम की बोली सुनकर अहल्या ने जोर से पूछा कि तू कौन है? गौतम के शाप के भय से इ द्र बिडाल बनकर छिप गया। अहल्या भी लज्जावश मुनि से कुछ न बोली। गौतम ने जब शाप देने की बात कही, तब बिडाल-

१ महाभारत शान्ति पव ३४२।२३

२ ब्रह्म पुराण अ ८७

रूपधारी इन्द्र अपने वास्तविक रूप में प्रकट हुआ। मुनि ने इन्द्र को सहस्रभग तथा अहल्या को शुष्क नदी हो जाने का शाप दिया। अहल्या ने अपने को निर्दोष बताया। शाप मोचन के लिए मुनि ने अहल्या को उपाय बताया कि गौतमी गंगा से जब तुम्हारे नदी रूप का संगम हो जाएगा तब तुम अपना पूर्व रूप प्राप्त कर लोगी। इन्द्र ने भी अपराध स्वीकार कर शाप मुक्ति का उपाय पूछा। गौतम ने उससे कहा कि गौतमी गंगा में स्नान करने से तुम्हारे पाप नष्ट हो जाएँगे और तुम्हारे सहस्रभग सहस्र नेत्रों में परिवर्तित हो जाएँगे।

'पद्म पुराण'[1] में वर्णित कथा में 'ब्रह्म पुराण' की कथा की अपेक्षा ये नवीनताएँ हैं—(१) ब्रह्मा ने अहल्या को किसी लोकपाल को न देकर गौतम को दे दिया, इसको इन्द्र ने बुरा माना। वह तो पहले से ही अहल्या पर आसक्त था। अहल्या से रति करने के लिए वह अवसर की प्रतीक्षा में रहा। एक बार जब गौतम स्नान तथा सन्ध्या के लिए पुष्कर तीर्थ में गए थे, इन्द्र ने मुनि का वेश धारण कर अहल्या से रति की याचना की। अहल्या ने जब समय की अयुक्तता पर उनका ध्यान दिलाया, तब उन्होंने पातिव्रत की दुहाई दी। अहल्या ने रमण किया। उधर गौतम जैसे ही ध्यानमग्न हुए उन्हें इन्द्र और अहल्या का कुकर्म दिखाई दिया। वे तुरन्त आश्रम में लौटे। इन्द्र मार्जार बन गया। गौतम ने उसे सहस्रभग हो जाने तथा लिंग-पतन होने का शाप दिया। मुनि ने अहल्या को भी मांस और नखों से रहित केवल अस्थि चर्म युक्त शुष्क शरीर वाली होने का शाप दिया। (२) अहल्या ने जब प्रार्थना की तब मुनि ने कहा कि रामचन्द्र द्वारा निर्दोष बताये जाने पर तू शाप-मुक्त हो जाएगी। इन्द्र ने जल में रहकर इन्द्राक्षी नामक देवी की आराधना की। देवी ने प्रसन्न होकर उसके शरीर के सहस्र भगों को नेत्रों में परिवर्तित कर दिया। देवी की कृपा से ही इन्द्र को शिश्न और मेषाण्ड भी मिले।

श्रीमद्भागवत पुराण'[2] में भरत वंश के वर्णन प्रसंग में गौतम अहल्या और उनके पुत्र शतानन्द का नामोल्लेख हुआ है। अहल्या को यहाँ मुद्गल की कन्या बताया गया है। इसमें इन्द्र अहल्या के जार कर्म की कोई सूचना नहीं मिलती।

देवीभागवत पुराण'[3] में भी इस आख्यान का उल्लेख मात्र हुआ है। वृत्रासुर के वध के पश्चात् ब्रह्महत्या के डर से इन्द्र छिप गया। नहुष को स्वर्ग का राजा बनाया गया और उसने इन्द्राणी से समागम करने की इच्छा प्रकट की। जब देवताओं तथा ऋषियों ने उसे इस पापकर्म से विरत होने का उपदेश दिया तब उसने इन्द्र द्वारा अहल्या के साथ किये जार कर्म की सूचना दी। किन्तु यहाँ इसका उल्लेख सांकेतिक ही है विस्तार में नहीं।

---

१ पद्म पुराण सृष्टि खण्ड अ० ५६
२ भागवत पुराण ६.२१।३३ ३४
३ देवीभागवत पुराण ६।८।१२ १३

'ब्रह्मवैवर्त पुराण'[1] मे दो स्थलो पर यह कथा आयी है। दोनो कथाओ मे थोडी सी भिन्नता है अधिकांशत समानता है। अध्याय ४७ की कथा मे इन्द्र गंगा-तट पर नग्न स्नान करती हुई अहल्या को देखता है और वही उसके साथ व्यभिचार करता है। गौतम इन्द्र को शाप देते हैं कि चूंकि तुम वेद के ज्ञाता होकर भी योनि-लुब्ध हुए अत तुम सहस्रयोनि हो जाओ। उन्होने अपने शाप और बृहस्पति के कोप के कारण इन्द्र के श्रीभ्रष्ट हो जाने की भविष्यवाणी भी की। शाप मोचन के लिए गौतम ने इन्द्र का एक सहस्र वर्ष तक सूर्य की आराधना करने का उपाय बताया जिससे उसके भग नेत्र मे परिणत हो गये। अहल्या को उन्होने पाषाण मूर्ति हो जाने का शाप दिया। साठ सहस्र वर्ष तक इसी प्रकार रहने के बाद रामचन्द्र के चरणस्पर्श से अहल्या के शापमुक्त होने का उपाय भी उन्होंने बताया।

अध्याय ६१ ६२ की कथा मे अन्य बातें तो अध्याय ४७ की कथा के समान हैं, पर कुछ बातें विशेष हैं जैसे—इन्द्र सूर्य पर्व पर पुष्कर क्षेत्र मे गंगा-स्नान करने जाता है। अहल्या का सौन्दर्य देख मूर्छित हो जाता है। दूसरे दिन वह विवस्त्र अहल्या को स्नान करते देख कामासक्त हो जाता है। अहल्या को वह लोभ देता है कि जितना कामशास्त्र मैं जानता हूँ, उतना गौतम नही। अत तुम मेरे पास रहो। अहल्या उसके हृदये नही चन्ती और परस्त्री प्रेम के लिए इन्द्र की भर्त्सना करती है। स्नान से लौटकर अहल्या इन्द्र के इस व्यवहार की शिकायत गौतम से करती है। गौतम हँसकर टाल देते हैं और इन्द्र की निन्दा मात्र करके रह जाते हैं। पर इन्द्र तो अपनी घात मे लगा ही था। एक दिन गौतम शिव का दर्शन करने गए हुए थे कि इन्द्र ने गौतम का वेश बना कर छलपूर्वक अहल्या से रमण कर लिया। गौतम ने ज्ञान दृष्टि से बात जान ली और आश्रम मे लौट आये। उन्होने इन्द्र का सहस्रभग हो जाने का शाप दिया और अहल्या को पाषाण मूर्ति हो जाने का।

लिंग पुराण'[2] मे केवल एक श्लोक मे कथा का संकेत मात्र है। यहाँ गौतम इन्द्र को शाप ही नही देते वरन् क्रुद्ध होकर उसे पृथ्वी पर पटक स्वयं उसके वृषण को उखाड लेते हैं। गौतम के पौरुषपूर्ण प्रतिशोध का रूप बस इसी एक पुराण मे मिलता है।

'स्कन्द पुराण' के नागर खण्ड अध्याय १३४ मे एक अन्य कथा मिलती है जो इन्द्र-अहल्या गौतम आख्यान से बहुत सादृश्य रखती है। कथा यह है—ऋषि हारीत की पत्नी जलाशय पर स्नान करने गयी हुई थी। उसकी सुन्दरता पर कामदेव आसक्त हो गया। मुनि पत्नी का मन भी कामदेव से रति के लिए मचल उठा। कामदेव से उसने रमण किया। हारीत को पता चल गया। उन्होने कामदेव को कोढी और अपनी पत्नी को शिला होने का शाप दिया। कामदेव की प्रार्थना पर खण्डशिला की आराधना से कष्ट दूर होने का उपाय भी बतला दिया।

---

१ ब्रह्मवैवर्त पुराण कृष्णजन्म खण्ड अ ४७ तथा ६१ ६२

२ लिंग पुराण अ २९।२७

'स्कन्द पुराण' में ही अन्य दो स्थलों पर[1] इन्द्र अहल्या का आख्यान आया है। अवन्ती खण्ड की कथा अहल्या-तीर्थ के माहात्म्य-वर्णन प्रसंग में कही गयी है। कथा इस प्रकार है—प्राचीन काल में गौतम नामक एक कर्मनिष्ठ ब्राह्मण था। उसकी सुन्दरी स्त्री का नाम अहल्या था जिस पर इन्द्र मोहित था। एक दिन गौतम की अनुपस्थिति में उसने अहल्या के पास जाकर गौतम की दरिद्रता और अपने ऐश्वर्य एवं देवराज होने का बढ़ा चढ़ा कर वर्णन किया तथा उससे रति की याचना की। इन्द्र के वैभव की बात सुनकर अहल्या का स्त्री चित्त डवाडोल हो उठा। उसने इन्द्र की इच्छा पूरी की। तभी गौतम आ गए। उन्होंने इन्द्र को भागते देखा। उसे बहुभग होने का शाप दिया और अहल्या को अश्ममयी होने का। अहल्या ने प्रार्थना की तो एक हजार वर्ष बाद राम दर्शन से शाप मुक्त होने का उपाय उसे बतला दिया।

इसी पुराण के नागर खण्ड की कथा में इन्द्र को सहस्रभग और अहल्या को शिला होने का शाप तो पूर्ववत् दिया गया है किन्तु यहां बृहस्पति की प्रार्थना पर गौतम ने इन्द्र को सहस्रभग के स्थान पर सहस्र-नेत्र होने का वर दे दिया है। माता के शिला होने के शाप से पुत्र शतानन्द दुःखी हुए, अतः उनकी प्रार्थना पर गौतम ने रामचन्द्र के चरण स्पर्श से शाप मुक्त होने का उपाय बताया।

स्कन्द पुराण' की इस कथा में पूर्वापेक्षा दो नवीन तत्त्व आ जुड़े हैं—(१) अहल्या का इन्द्र के वैभव पर लुभाना और (२) शतानन्द तथा बृहस्पति की प्रार्थना पर क्रमशः अहल्या और इन्द्र का शाप मोचन। अहल्या के शापग्रस्त रहने की अवधि यहाँ एक हजार वर्ष ही है जब कि 'ब्रह्मवैवर्त्त पुराण' में साठ हजार वर्ष थी।

'अध्यात्म रामायण' में भी यह कथा बालकाण्ड में आयी है। उसमें ब्रह्मा द्वारा अहल्या का सुन्दर तत्त्वों के सार से निर्माण, गौतम के पास उसे धरोहर रूप में रखना, तीनों लोकों की परिक्रमा करके गौतम का अहल्या को प्राप्त करना इन्द्र अहल्या जार-कर्म तथा दोनों को क्रमशः सहस्रभग तथा शिला होने का शाप आदि बातें तो हैं ही पर एक बात विशेष है—चूंकि आश्रम में पाप हुआ, इसलिए गौतम ने आश्रम को भी प्राणि विहीन कर दिया।

आनन्द रामायण'[2] में यह कथा संक्षेप में आयी है। कथा का रूप अध्यात्म रामायण जैसा ही है। पृथ्वी परिक्रमा करके गौतम अहल्या को पाते हैं। इन्द्र को ईर्ष्या होती है। बदला लेने की भावना से वह अहल्या का भोग करता है। शाप और शापमोचन की घटनाएँ भी पूर्ववत् हैं।

'योग वासिष्ठ'[3] में यह कथा एक अन्य रूप में ही आयी है जो सर्वथा नवीन है। मगध के राजा इन्द्रद्युम्न की पत्नी का नाम अहल्या था। वह अत्यन्त रूपवती थी। उसी नगर में इन्द्र नामक एक ब्राह्मण रहता था। एक दिन किसी कथावाचक से अहल्या

१ स्कन्द पुराण नागर खण्ड २०७ २०८ और अवन्ती खण्ड अ० १३६
२ आनन्द रामायण, सार काण्ड ३।१६ २३
योगवासिष्ठ ३।८९ ९०

ने इन्द्र अहल्या जार आख्यान सुना। उसने सोचा कि मैं भी तो अहल्या ही हूँ अत वह इन्द्र ब्राह्मण पर आसक्त हो गयी। उसकी सखी ने इन्द्र को महल म बुलाकर अहल्या से उसकी भेंट करा दी। राजा को किसी प्रकार पता चल गया। उसने रानी को समझाया। जब रानी न मानी, तब उसने उसे और ब्राह्मण दोनो को मरवा डाला। किन्तु भौतिक शरीर से नष्ट होकर भी वे दोनो प्रेमी अनेक जन्मो तक मानसिक रूप से प्रेम मे पगे रहे।

'कथा सरित्सागर'[1] म भी यह कथा आयी है। एकान्त पाकर गौतम की सुन्दरी पत्नी अहल्या से इन्द्र का प्रणय निवेदन अहल्या का मान जाना, गौतम का तपोबल से सब जान लेना तथा गौतम को देखते ही इन्द्र का मार्जार बन जाना आदि बातें तो इसमे पूर्ववत हैं। नयी बातें केवल दो हैं—(१) गौतम ने जब अहल्या से पूछा कि तेरे साथ कौन था तब अहल्या ने झूठ बोल दिया कि मार्जार था। इस असत्य भाषण के लिए गौतम ने उसे शिला बनने का शाप दिया। इन्द्र को सहस्रभग होने का शाप उसके छल के लिए दिया। (२) अहल्या का शाप मोचन जब कि पहले की भाति राम के चरण स्पर्श से होने का उल्लेख है तब इन्द्र के शाप मोचन के लिए विश्वकर्मा द्वारा निर्मित तिलोत्तमा अप्सरा का दर्शन बताया है। इन्द्र उसको देखते हैं तो सहस्रभग के स्थान पर सहस्राक्ष हो जाते हैं। इस प्रकार इन्द्र के पतन और उद्धार दोनो का कारण नारी ही होती है।

(३) इन्द्र का अपने वज्र से पर्वतो के पख काटना

इन्द्र द्वारा पर्वतो के पख काटने की घटना का वर्णन सक्षेप म 'महाभारत' के परिशिष्ट (खिल भाग) कहे जानेवाले हरिवश पुराण[2] म हुआ है। कथा इस प्रकार है विष्णु भगवान ने वराहावतार लेकर हिरण्याक्ष का वध किया और उसके द्वारा अपहृता पृथ्वी का उद्धार किया। जब पृथ्वी प्रकृतिस्थ हुई तब इन्द्र ने पृथ्वी के स्थिर न रहने देने मे पर्वतो को सबसे बडा अपराधी जानकर, उन्हें अपनी अपनी जगह पर स्थापित करके सौ पर्ववाले वज्र से उन सबकी पाँखें काट दी[3]। इन्द्र ने सब पर्वतो के पख काट दिये रह गया एकमात्र मनाक। उसके साथ देवताओ ने यह शर्त करली थी कि यदि तुम समुद्र मे स्थित रहे तो तुम्हारे पख नही काटे जायेंगे। तब से मनाक समुद्र म ही स्थित है। जिन पर्वतो के पख काटे गये उनमे प्रसिद्ध सुमेरु पर्वत भी था।[4]

१ कथा सरित्सागर लम्बक ३ तरग ३ श्लो १३७-१४७

२ हरिवश पुराण भविष्य पर्व ४०

३ वही भविष्य पर्व ४।१८ १६

४ वही भविष्य पर्व ४।२०

(४) उषा-अनिरुद्ध-प्रेमाख्यान ।

उषा अनिरुद्ध का प्रेमाख्यान सवप्रथम 'महाभारत'[1] मे केवल २८ श्लोको मे मिलता है। उसका रूप यह है—

अनिरुद्ध श्रीकृष्णचन्द्र के पौत्र और प्रद्युम्न के पुत्र थे।[2] उषा राजा बलि के ज्येष्ठ पुत्र सहस्रभुज बाणासुर की पुत्री थी। ससार में उसके रूप की तुलना करनेवाली दूसरी स्त्री न थी।[3] अनिरुद्ध प्रच्छन्न रूप म उषा के पास पहुँच गये और उसके साथ रहकर रसकेलि करने लगे। बाणासुर को किसी प्रकार यह पता चल गया। उसने अपनी पुत्री और अनिरुद्ध को कारागार मे डाल दिया। अनिरुद्ध को वह नाना प्रकार के कष्ट पहुँचाने लगा। यह समाचार नारद जी द्वारा द्वारका मे श्री कृष्ण को प्राप्त हुआ। समाचार देकर नारद जी बाणासुर की राजधानी शोणितपुर चले गये। कृष्ण भी बलराम और प्रद्युम्न को साथ लेकर, गरुड पर सवार होकर बाणासुर की नगरी को चल दिये। वह नगरी सुवणमय प्रासादो से युक्त थी और उसके चारो ओर ताम्बे का परकोटा था नगर द्वार चाँदी के बने थे। शकर कार्तिकेय, भद्रकाली देवी और अग्नि आदि देवता उस पुरी की रक्षा करते थे। कृष्ण का नगर के उत्तर द्वार पर शकर से युद्ध हुआ। कृष्ण ने शकर को पराजित कर दिया। पुरी के भीतर प्रवेश कर कृष्ण बाणासुर के सम्मुख पहुँचे और उससे युद्ध छेड दिया। बाणासुर ने अपनी सहस्र भुजाओ मे धनुष थामकर बाण वर्षा आरम्भ कर दी। कृष्ण ने सुदशन चक्र से उसकी सहस्र भुजाएँ काट दी। बाणासुर को त्रस्तकर कृष्ण कारागह म बद अनिरुद्ध को मुक्त कर लाये। उषा अनिरुद्ध और बाणासुर के धन रत्नादि को गरुड पर रखकर कृष्ण द्वारका लौट आये।

'हरिवश पुराण'[4] म यह कथा पर्याप्त विस्तार से वर्णित है। इस कथा म 'महाभारत' म वर्णित कथा की अपेक्षा कुछ विशेष तन्तु हैं जसे—

(१) जल क्रीडा के लिए गगा तट पर जाने पर उषा का शिव पावती का विहार दखना और मन ही मन पति की कामना करना। उषा का पावती से प्रिय मिलन का वर प्राप्त करना। (पावती न उषा को बताया कि वशाख मास की द्वादशी तिथि को प्रदोष-काल म जब तुम अट्टालिका पर सोई होगी, तब एक पुरुष स्वप्न मे आकर तुम्हारे साथ रमण करेगा, वही तुम्हारा पति होगा।)[5]

(२) पति का चिन्तन करती हुई उषा का विरहाग्नि में जलना। प्रेम पीडा से सतप्त होना। (उषा की दासियो ने इसकी सूचना उसकी माता को दी। माता ने वद्य

---

१ महाभारत सभापव अ० ३८ दाक्षिणात्य पाठ श्रीकृष्ण चरित्र के अतगत २८ श्लोको में

२ वही आदि पव १८५।१७

३ वही सभा० ३८। दाक्षिणात्य पाठ का श्लोक पष्ठ ८२१

४ हरिवश पुराण विष्णुपव अ ११७ १२८

५ वही विष्णुपव ११७।१६

बुलाये, पर वद्य भी असली रोग नही पहचान पाये। पर जाते जाते यह सम्भावना व्यक्त कर गये कि यह कामजनित वेदना भी हो सकती है[1]।)

(३) पावती द्वारा बतायी तिथि को उपा के पास स्वप्न म एक पुरुष का आना और उसके साथ रमण करना। जागने पर उपा का इस बात के लिए सताप करना कि स्वप्न मे आकर भी किसी पुरुष ने यथाथ की भाँति उसका कौमाय भग कर दिया। उसकी सखियो का उसे ढाढस बधाना।[2]

(४) उपा का अपनी प्रिय सखी चित्रलेखा अप्सरा को बुलाकर स्वप्न दर्शित पुरुष का रूप वणन करना और यह कहना कि आज तुम मेरे प्राणनाथ को न लाओगी तो मैं प्राण त्याग दूगी।[3]

(५) चित्रलेखा अप्सरा द्वारा देवता दानव दत्य किन्नर, यक्ष गधव नाग राक्षस और मनुष्य सभी योनि के विश्वविख्यात श्रेष्ठ पुरुषो का चित्र बनाना और उपा को दिखाना। सब चित्रो के बीच से उपा का अनिरुद्ध के चित्र को पहचान लेना और हप से खिल उठना। फिर अपनी सखी चित्रलेखा से उस चित्रचित पुरुष के कुल शील का परिचय जानना।[4]

(६) चित्रलेखा म इच्छानुसार रूप धारण करने और आकाश म विचरन की सामथ्य क्योंकि वह योगिनी। उपा द्वारा उसी रात म अनिरुद्ध को लाने के लिए अपनी सखी पर जोर अन्यथा प्राण त्याग की धमकी अनुनय विनय करके अपनी दूती बनाकर उसे द्वारका भेजना। चित्रलेखा का तुरन्त अन्तर्द्धान हो जाना।[5]

(७) चित्रलेखा का अपने माया बल से एक क्षण म द्वारका पहुँच जाना। वहाँ समुद्र जल म ध्यानस्थ नारद मुनि स उसकी भेंट। नारद को अपन आगमन का प्रयोजन बताना। नारद जी का यह परामश कि अनिरुद्ध को तुम उठा ले जाओ। चित्रलेखा को अपने द्वारा सिद्ध तामसी विद्या देना और यह कहना कि शोणितपुर मे युद्ध प्रसग उपस्थित होने पर मुझे स्मरण किया जाय।[6]

(८) आकाशमाग से ही चित्रलेखा का अनिरुद्ध के प्रासाद मे पहुचना। सुन्दरियो स सेवित अनिरुद्ध को मद्यपान करते देखना। नारद द्वारा सिखायी तामसी विद्या से उसका अनिरुद्ध के अतिरिक्त अन्य सबको आच्छादित कर देना। फिर अनिरुद्ध से उपा का प्रेम सदेश कहना। उपा का परिचय देना। अनिरुद्ध का उसे बताना कि स्वप्न मे उन्होने भी उपा को देखा है और तभी से चित्त उसी के मोह मे पडा है। साथ ही चलने का प्रस्ताव। उपा को देखने की व्यग्रता।[7]

१ वही विष्णु० ११७।२८ ५६
२ व ी विष्णपव ११८।१ ४०
३ वही विष्णु ११८।५ ५४
४ वही विष्णु ११८।५८ ७४
५ वहा विष्ण ११८।७१ ६८
६ वही विष्ण ११६।१ २
७ वही विष्णु ११६।२१ ५४

(९) अनिरुद्ध को अदृश्य करके चित्रलेखा का आकाश म उड चलना और क्षण मात्र में शोणितपुर म प्रवेश। उषा से अनिरुद्ध को मिलाना। उषा का अनिरुद्ध की पूजा करना। चित्रलेखा द्वारा इस रहस्य को गुप्त रखने का आश्वासन पाकर उसे सतोष।[1]

(१०) उषा अनिरुद्ध का एकान्त मे जाकर गा धव विवाह करना। समागम करना। दोनो प्रसन्न।[2]

(११) पहरेदारो को पता चल जाना और प्रासाद मे अनिरुद्ध की उपस्थिति की सूचना बाणासुर को देना। बाणासुर का अनिरुद्ध को मारने के लिए अपने सनिको को भेजना। उषा सत्रस्त। अनिरुद्ध का उसे आश्वस्त करना। अनिरुद्ध का बाणासुर के सनिकों से युद्ध करने के लिए बाहर निकलना।[3] चित्रलेखा द्वारा मन ही मन नारद का स्मरण करना। नारद स्मरण करते ही उपस्थित।[4] अनिरुद्ध को निभय रहने के लिए कहना।

(१२) अनिरुद्ध और बाणासुर के सनिका म युद्ध। सनिका का पलायन। बाण द्वारा दस हजार और सनिक भेजना। अकेले अनिरुद्ध का उसके भी पाँव उखाड देना। अब स्वय बाणासुर का आगमन। उसकी बाण-वर्षा के सम्मुख भी अनिरुद्ध अडिग। अपने मत्री कुम्भाण्ड के सुझाव पर बाणासुर द्वारा माया युद्ध का आश्रय लेना। स्वय अदृश्य होकर बाण वर्षा। सर्पाकार बाणो से बँधकर अनिरुद्ध का निश्चेष्ट हो जाना। कुम्भाण्ड द्वारा बाण को अनिरुद्ध का वध करने से रोकना।[5]

(१३) अनिरुद्ध को माया पाश (नागपाश) मे बँधा देख, नारद जी का तुरन्त द्वारका जाना।

(१४) नारदजी स अनिरुद्ध के नागपाश मे बदी होने का समाचार पाते ही श्रीकृष्ण द्वारा गरुड का स्मरण। गरुड के आते ही उन पर सवार होकर कृष्ण, बलराम और प्रद्युम्न का शोणितपुर जाना। वहाँ त्रिशिरा ज्वर, शकर और कार्त्तिकेय से उनका युद्ध। ब्रह्मा द्वारा शकर और कृष्ण म मेल कराना। कार्त्तिकय की कृष्ण से रक्षा कोटवती देवी द्वारा। बाणासुर से कृष्ण का भयकर युद्ध। सुदशन चक्र से उसकी हजार भुजाओं मे से दो को छोडकर शेष को काट डालना। बाण द्वारा शकर के सम्मुख नृत्य उन्हें प्रसन्न करके कई वर पाना। महाकाल के रूप मे उनके गणा में जा मिलना।[6]

(१५) कृष्ण का नारद जी आदि को साथ ले बाणासुर के अन्त पुर मे जाना। गरुड को देखते ही बाण रूपी महासर्पों का अनिरुद्ध को बधन-मुक्त करके भागना।

---

१ वही विष्णु ११९।५५ ६३
२ वही विष्णु० ११९।६४-७५
३ वही विष्णु ११९।७६ ९२
४ वही विष्णु ११९।९३ ९४
५ वही विष्णु ११९।९५ १९५
६ वही विष्णु० १२१ १२६

कृष्ण द्वारा कुम्भाण्ड को बाणासुर का राज्य देना। अनिरुद्ध उषा का विवाह संस्कार सम्पन्न। सब के साथ कृष्ण का द्वारका के लिए प्रस्थान। द्वारका पहुचकर आनन्दोत्सव।[१]

'विष्णु पुराण' मे उषा अनिरुद्ध का जो प्रेमाख्यान वर्णित है[२] उसके उल्लेखनीय प्रसंग ये हैं--(१) सहस्र भुजधारी बाणासुर की पुत्री उषा ने एक दिन शकर पार्वती को रति क्रीडा करते देख अपने पति के साथ रमण करने की इच्छा की। पार्वती जी उसके मन का भाव जानकर उससे कहती हैं कि वैशाख शुक्ला द्वादशी को जो पुरुष रात्रि मे स्वप्न मे तुझसे हठात सम्भोग करेगा वही तेरा पति होगा (२) पार्वती के कहे अनुसार घटित होता है। अपनी सखी चित्रलेखा से उषा अपना भेद कहती है। चित्रलेखा सात आठ दिन मे देवताओं दैत्यों गंधर्वों मनुष्यों आदि मे से श्रेष्ठ व्यक्तियो के चित्र बनाकर उषा को दिखाती है। प्रद्युम्नतनय को उषा अपना स्वप्नदर्शित पुरुष बताती है। (३) यहाँ शकर जी बाणासुर से कहते हैं कि जिस समय तेरी मयूर चिह्नवाली ध्वजा टूट जाएगी, उसी समय तेरे साथ किसी का युद्ध होगा। कालान्तर मे ध्वजा टूटती है। कौन तोडता है, यह यहाँ नही बताया गया। (४) अप्सरा चित्रलेखा अनिरुद्ध को उठा लाती है अनिरुद्ध उषा के साथ रमण करता है अन्त पुर के प्रहरी बाणासुर से शिकायत करते हैं। बाणासुर से अनिरुद्ध का युद्ध होता है। अनिरुद्ध नागपाश मे बाधा जाता है। (५) नारद कृष्ण तक समाचार पहुचाते हैं। कृष्ण द्वारका से बलराम तथा प्रद्युम्न आदि के साथ आते हैं। बाणासुर की रक्षा तीन सिर और तीन पैर वाला माहेश्वर नामक महाज्वर करता है। कृष्ण और बलराम उसकी चपेट मे आ जाते हैं। कृष्ण का शकर और कार्तिकेय के साथ भयकर युद्ध होता है। परन्तु इनमे से कोई भी कृष्ण के आगे नही टिक पाता। दैत्यो को मार कर भगा देने के बाद कृष्ण बाणासुर पर आक्रमण करते हैं और चक्र से उसकी दो को छोडकर शेष सारी भुजाएँ काट डालते हैं। शकर कृष्ण से बाणासुर के प्राण न लेने का अनुरोध करते हैं, क्योंकि उन्होने उसे अभय दान दे रखा है। कृष्ण अन्तःपुर मे जाते हैं। वहाँ गरुड को देख अनिरुद्ध को बाँधने वाले नाग भाग जाते है। उषा-अनिरुद्ध आदि को गरुड पर चढा कर कृष्ण द्वारका आ जाते हैं।

"शिवपुराण"[३] मे आयी कथा मे पूर्वापेक्षा कुछ विशेषताएँ हैं। यहाँ वैशाख शुक्ला द्वादशी को अर्द्ध रात्रि के समय जब उषा सोने लगती है तब पार्वती की इच्छा से अनिरुद्ध उसके साथ भोग करता है और उनके ही प्रभाव से तुरन्त द्वारकापुरी मे अपने घर लौट आता है। उषा अपनी सखी चित्रलेखा से, जो कुशल चित्रकर्त्री है पिछली रात का समाचार बताती है और कहती है कि उसी पुरुष को फिर लाओ अन्यथा प्राण दे दूँगी। चित्रलेखा कपड़े पर देवताओं गंधर्वों का चित्र बनाती है पर उनमे से किसी भी चित्र को उषा नही पहचान पाती। तब चित्रलेखा मनुष्यो के चित्र बनाती है। उनमे से

१ वही विष्णु॰ १२७
२ विष्णु पुराण ५।३२
३ शिव पुराण पूर्वार्द्ध पचमखण्ड अ॰ ५१ ५३

अनिरुद्ध के चित्र को वह पहचान लेती है। चित्रलेखा योगमाया से द्वारका जाती है और अपनी स्त्री के साथ मद्यपान करते अनिरुद्ध को तामसी माया का प्रयोग करके पलग सहित उठा लाती है तथा उपा के पास उसे ला रखती है। अनिरुद्ध और उपा भोग विलास कर रहे होते हैं कि अन्त पुर के रक्षको को पता चल जाता है। वे बाणासुर से शिकायत कर देते हैं। बाणासुर और अनिरुद्ध का घोर युद्ध होता है। बाणासुर अनिरुद्ध को नागपाश मे बाध देता है। अनिरुद्ध पार्वती का स्मरण करता है जिससे उसका नागपाश जल जाता है।

उधर अनिरुद्ध के गायब होने पर उसकी स्त्री विलाप करने लगी। कृष्ण-बलराम और प्रद्युम्न सभी चिन्तित हुए। चार महीने तक अनिरुद्ध का कोई पता न चला। शिव की प्रेरणा स नारद न जाकर अनिरुद्ध का समाचार द्वारका में सुनाया। सुनते ही कृष्ण गरुड पर सवार होकर बलराम, प्रद्युम्न आदि के साथ चल दिये। बाणासुर से युद्ध आरम्भ हुआ। शिव बाणासुर की ओर से लडने आये। कृष्ण और शिव मे खूब घमासान युद्ध हुआ। अत मे कृष्ण ने शिव की स्तुति की और उस शाप का स्मरण कराया जिसे उन्होंने बाणासुर को दिया था। शाप यह था कि कृष्ण तेरी भुजाएँ काट डालगे। शिव ने प्रसन्न होकर कृष्ण को सुझाया कि आप जम्भणास्त्र का प्रयोग करें, मैं सो जाऊँ, तो अपना काम बना लें। कृष्ण ने ऐसा ही किया। बाणासुर की सहस्र भुजाएँ उन्होने आरी स काट डाली केवल चार भुजाएँ छोड दी। शिव की कृपा से बाणासुर के घाव भर गये। कृष्ण बाणासुर का सिर काटने को हुए तो शिव ने वक्र दृष्टि से उन्ह देखा और कहा कि मैंने आपको अपने भक्तो का विनाश करने के लिए सुदर्शन चक्र थोडे ही दिया था। शिव ने बाणासुर और कृष्ण म मित्रता करा दी। बाणासुर उपा अनिरुद्ध का दान-दहेज के साथ लेकर उपस्थित हुआ। वह शिव की कृपा से महाकाल गणपति बनकर उनकी सेवा मे रहने लगा। कृष्ण उपा अनिरुद्ध को लेकर द्वारका आ गय।

'श्रीमद्भागवत पुराण'[1] मे उपा अनिरुद्ध की प्रेम-कथा बहुत कुछ 'विष्णु पुराण' की कथा के समान ही है। विशेषता के स्थल य हैं—(१) बाणासुर की हजार भुजाएँ थी। एक दिन जब भगवान् शकर ताण्डव नृत्य कर रहे थे, तब उसने अपने हजार हाथो से अनेक प्रकार के वाद्य बजा कर उन्ह प्रसन्न कर लिया। शकर ने उसस जब वर माँगने को कहा, तब उसने यह माँगा कि 'भगवान्! आप मेरे नगर की रक्षा करत हुए यही रहा करें।' (२) पार्वती और शकर की कामक्रीडा देखकर उपा के मन म पति-सगम की कामना नही जागती, अपितु स्वप्न मे वह देखती है कि 'परम सुन्दर अनिरुद्ध जी क साथ मेरा समागम हो रहा है[2]।' (३) बाणासुर के मत्री कुम्भाण्ड की कन्या चित्रलेखा उपा की सखी है। वह चित्रकर्त्री है। उसने विभिन्न योनियो क श्रेष्ठ पुरुषो के चित्र बनाये जिनम प्रद्युम्न का चित्र देखकर उपा लज्जित हो गयी। जब उसने

---

१ भागवत पुराण १ ।६२ ६२

२ वही १०।६२।१२

अनिरुद्ध का चित्र देखा, तब तो लज्जा के मारे उसका सिर नीचा हो गया। उसने मुस्करा कर कहा—'मेरा प्राणवल्लभ यही है यही है।' (४) चित्रलेखा योगिनी थी वह जान गयी कि उषा ने जिस चित्र को पहचाना था, वह चित्र कृष्ण के पौत्र अनिरुद्ध का था। (५) उषा ने अनिरुद्ध को अपने अन्त पुर मे कई दिन तक छिपाय रखा। उसका कौमार्य नष्ट हो गया। पहरेदारो को उसका रग-ढग देख सन्देह हुआ। उन्होंने बाणासुर को सूचना दी। (६) सुनते ही बाणासुर उषा के अन्त पुर म आया। अनिरुद्ध को उषा के साथ पासा खेलते पाया। अनिरुद्ध ने उसके बहुत के सनिको को धराशायी कर दिया तब क्रोधित होकर बाणासुर ने अनिरुद्ध को नागपाश म बाँध दिया। (७) श्रीकृष्ण ने नारदजी से सूचना पाकर जब बाणासुर पर चढाई की तब शकर जी नन्दी के साथ बाणासुर की ओर से कृष्ण से लडने के लिए आये। अनेक दिव्यास्त्रो का प्रयोग दोनो ने एक दूसरे पर किया। अन्त मे कृष्ण ने शकर पर जम्भणास्त्र का प्रयोग किया। युद्ध से विरत होकर शकर जँभाई लेने लगे। शकर ने कृष्ण पर माहेश्वर नामक ज्वर को छोडा तो कृष्ण ने वष्णव ज्वर को शकर पर। माहेश्वर ज्वर जिसके तीन सिर और तीन पैर थे कृष्ण भगवान की शरण मे आया। कृष्ण ने उसे अभयदान दिया। (८) कृष्ण ने बाणासुर की चार को छोडकर शेष भुजाए काट डाली पर प्राण नही लिये क्योकि उन्होने प्रह्लाद को वर द दिया था कि वे उसके वश म पदा होनेवाल किसी भी दत्य का वध नही करेंगे। बाणासुर को कृष्ण ने शिवजी का पार्षद होने का वर दिया। बाणासुर स्वय अपनी पुत्री उषा के साथ अनिरुद्ध को रथ पर बठाकर भगवान कृष्ण के पास ले आया (कृष्ण को उसके अन्त पुर मे जाकर अनिरुद्ध को नागपाश स मुक्त नही करना पडा)। (९) कृष्ण उषा अनिरुद्ध को गरुड पर बठाकर द्वारका नहीं लाते वरन महादेवजी की सम्मति स एक अक्षौहिणी सेना के साथ द्वारका भज देते हैं।

'अग्निपुराण'[१] मे यह कथा सक्षप मे आयी है। तपस्या के बल से बाणासुर शिव के लिए पुत्रवत हो गया। शिव ने उससे कहा कि जब तेरा मयूरध्वज गिर जाएगा तब किसी से तेरा युद्ध होगा। शिव पावती को क्रीडारत देखकर बाणासुर की पुत्री उषा न पति की कामना की। पावती ने उससे कहा कि वशाख की द्वादशी तिथि को जिस पुरुष को तू स्वप्न म देखेगी वही तेरा पति होगा। कुम्भाण्ड मन्त्री की कन्या चित्रलेखा की सहायता से अनिरुद्ध उषा के पास लाया जाता है और वह उसके साथ रमण करता है। फिर वह बाण की ध्वजा को तोड देता है। बाण और अनिरुद्ध म घोर युद्ध होता है। नारदजी से समाचार पाकर कृष्ण प्रद्युम्न और बलराम को लेकर शोणितपुर आ जाते हैं। वे अग्नि और माहेश्वर ज्वर को जीतते हैं। शिवजी से उनका युद्ध होता है। नन्दी विनायक स्कन्द आदि को कृष्ण ने पराजित कर दिया। शिव पर जम्भणास्त्र चलाया। बाण की हजार भुजाओ को वे काटने लगे, तो शिव की प्रार्थना पर उसकी दो भुजाएँ छोड दी। उषा और अनिरुद्ध को लेकर कृष्ण द्वारका आ गये।

१ अग्नि पुराण १२ ४१ ५२

'ब्रह्मवैवर्त पुराण'[1] मे इस कथा का उत्तरार्द्ध (अनिरुद्ध को छुडाने के लिए कृष्णादि का बाणासुर से युद्ध और बाणासुर की ओर से शिव, नन्दी, कार्त्तिकेय आदि का कृष्णादि से युद्ध, बाण की पराजय) तो बहुत-कुछ 'श्रीमदभागवत' के अनुसार ही है, परन्तु कथा के पूर्वार्द्ध मे यहा कुछ नवीनता मिलती है। पार्वती के वरदान के अनुसार अनिरुद्ध का स्वप्न मे आकर उषा के साथ समागम करने का उल्लेख तो उपर्युक्त सभी पुराणो में आया है किन्तु उनमे से किसी मे भी यह नही आया कि अनिरुद्ध को भी उषा स्वप्न मे दिखायी देती है बल्कि पहले वही स्वप्न म दिखायी देती है बाद मे उस अनिरुद्ध। कृष्ण के पौत्र तथा कामदेव के अवतार प्रद्युम्न के पुत्र एव ब्रह्मा के अशावतार अनिरुद्ध को एक रात स्वप्न मे एक सुन्दरी युवती दिखायी देती है। अनिरुद्ध अपना परिचय उसे देकर उसका परिचय पूछते हैं। वह कहती है कि मैं शकर के सेवक बाणासुर की कन्या उषा हूँ। यदि आप मेरे साथ विवाह करना चाहत हैं तो मेरे पिता अथवा शकर पार्वती से प्रार्थना करें। स्वप्न टूटने पर अनिरुद्ध उषा के विरह मे व्याकुल हो जाते हैं। रुक्मिणी द्वारा यह समाचार जब कृष्ण को मिला, तब उन्होने हँस कर कहा कि उषा ने वासना से अनिरुद्ध को व्याकुल बनाया है मैं उषा को प्रमत्त बना दूगा। इतना कहकर कृष्ण ने बाणासुर पुत्री को स्वप्न म एक सुन्दर पुरुष (अनिरुद्ध) का दर्शन कराया। उषा ने उस पुरुष से गान्धर्व विवाह करने का प्रस्ताव किया। अनिरुद्ध न स्वप्न मे ही उससे कहा कि मैं कृष्ण का पौत्र और कामदेव का पुत्र हूँ, उनकी अनुमति के बिना तुम्हे कैसे ग्रहण करूँ। इतना कहकर अनिरुद्ध अन्तर्द्धान हो गये। उषा स्वप्न को याद करके दुखी हुई। बाणासुर को पता चला तो वह भी शकर के पास जाकर कन्या के दुख मे मूर्च्छित हो गया।

उषा ने अपनी सखी चित्रलेखा से स्वप्न का विवरण बताया। चित्रलेखा न उसे सान्त्वना दी कि शिव और पार्वती जब तुम्हारे नगर मे ही विराजमान हैं तब तुम चिन्ता क्या करती हो। शिव के परामर्श से चित्रलेखा योगमाया द्वारा द्वारका जाकर निद्रित अनिरुद्ध को रथ मे बैठाकर शोणितपुर ले आती है। शकर ने मना कर दिया था, अत चित्रलेखा ने इस बात की खबर बाणासुर को न होने दी। उषा और अनिरुद्ध ने गान्धर्व विवाह कर लिया।

बाणासुर के अन्त पुर के रक्षको ने भरी सभा मे जाकर अनिरुद्ध के उषा के महल म छिपकर रहने और उषा के गर्भवती होने की सूचना बाणासुर को दी। बाणासुर बहुत लज्जित हुआ। उसने शकर गणेश, स्कन्द और पार्वती के रोकने पर भी युद्ध के लिए इच्छा प्रकट की। शकर ने बाणासुर को चेता दिया कि अनिरुद्ध को जीतना सम्भव नही है। परन्तु भरी सभा म दूतो द्वारा कहे हुए वचन बाणासुर को साल रहे थे, अत उसने कहा कि पहले अनिरुद्ध को मारकर मैं उषा को भी मारूगा, अन्यथा आग में जल मरूगा। माता कोटरी देवी ने भी बाण को समझाया कि उषा अनिरुद्ध अब विवाहित हैं तू उषा को दहेज सहित अनिरुद्ध को सौंप दे, नहीं तो युद्ध

१ ब्रह्मवैवर्त पुराण कृष्ण जन्म खण्ड अ ११४ १२०

म कृष्ण तुझे मार देंगे। उधर कृष्ण, बलराम, भीम, अर्जुन उग्रसेन, सात्यकि, अक्रूर उद्धव, जयत प्रद्युम्न आदि के साथ एक बडी सेना लेकर शोणितपुर पर चढ आये थे। शकर का कथन था कि बाणासुर को यो तो अनिरुद्ध को उषा सौंप देनी चाहिए किन्तु यदि बाणासुर लडने का ही निश्चय करता है तो मेरा भक्त और पुत्रवत होने के कारण मैं उसकी सहायता अवश्य करूगा।

युद्ध की घटनाएँ 'श्रीमद्भागवत' के अनुसार ही वर्णित हैं। इस कथा म चूकि उषा और अनिरुद्ध एक-दूसरे को स्वप्न मे दिखायी देकर अपना परिचय द लेत हैं इसलिए चित्रलेखा द्वारा देव, गधव मनुष्य आदि योनियो के श्रेष्ठ पुरुषो का चित्राकन करने की आवश्यकता नही उत्पन्न हुई है। अनिरुद्ध को नागपाश मे बाँधने का भी उल्लेख यहाँ नही है। जब कृष्ण अपने चक्र से बाणासुर की सारी भुजाएँ काट डालते हैं तब शकर उसको अपनी गोद मे लेकर रोते हैं। फिर, उसे लेकर कृष्ण के पास जाते हैं। कृष्ण अपना हाथ बाणासुर पर रखकर उसे अजर अमर बना देत हैं।

कथा सरित्सागर' म कलिंग सेना की कथा क अ तगत सदभ कथा के रूप म इस प्रेमाख्यान का उल्लेख हुआ है। कथा इस प्रकार है बाणासुर की पुत्री उषा अच्छे वर की प्राप्ति के लिए पावती की आराधना करती थी। पावती ने वर दिया कि जिस पुरुष को तू स्वप्न म अपने पास देखगी वही तेरा पति होगा। उसी रात एक सुन्दर राजकुमार उसके पास स्वप्न म आया। परन्तु प्रात काल जागने पर वह न मिला यद्यपि उसके रात भर वहाँ रहने के सारे चिह्न स्पष्ट थ। उषा की एक सखी थी चित्रलेखा जो अतिमानवीय शक्ति सम्पन्न थी। चित्रलेखा ने विश्व भर के सु दर पुरुषो के चित्र बनाय उनमे से उषा ने अनिरुद्ध का चित्र पहचान लिया। चित्रलेखा पातालपुरी से उडकर द्वारका पहुँची। सोते हुए अनिरुद्ध को जगाया। उससे उषा के प्रेम की बात कही। अनिरुद्ध ने भी उषा को स्वप्न मे देखा था। चित्रलेखा अनिरुद्ध को जादू के बल स अपने साथ आकाश माग स ले आयी। उषा अनिरुद्ध का मिलन हुआ। दोना साथ साथ कुछ ही दिन रह पाये थे कि बाणासुर को खबर मिली। वह क्रुद्ध हुआ। अनिरुद्ध से उसका युद्ध हुआ। कृष्ण भी सदल-बल अनिरुद्ध की सहायता करने आ पहुचे। बाणासुर मारा गया। उषा को लेकर अनिरुद्ध द्वारका चला आया। व दोनो शिव पावती की तरह सुख से रहने लगे।

(५) कच–देवयानी–प्रेमाख्यान

यह कथा महाभारत' के आदि पव[१] मे इस रूप म आयी है—देवताओ क गुरु बृहस्पति और दत्यो के गुरु शुक्राचाय थे। दोना मे परस्पर लाग डाट रहती थी। सुरा और असुरो म त्रलोक्य के ऐश्वय को हस्तगत करने के लिए जो सघष छिडा था उसम

१ अध्याय ७६ ७७

मरने वाले असुरों को शुक्राचार्य पुनः जिला देते थे क्योंकि उन्हें संजीवनी विद्या ज्ञात थी। बृहस्पति को यह विद्या ज्ञात न थी, अतः देवताओं का पक्ष निर्बल पड़ता जा रहा था। एक दिन देवगण बृहस्पति के ज्येष्ठ पुत्र कच के पास जाकर बोले कि इस संकट काल में आपकी सहायता की हमें आवश्यकता है। 'आप दैत्य गुरु शुक्राचार्य के पास जाइए और उनको प्रसन्न कर संजीवनी विद्या सीख आइए। इससे आप हम देवताओं के साथ यज्ञ में भाग प्राप्त कर सकेंगे। देवताओं ने इसके लिए उन्हें यह उपाय भी सुझाया कि शुक्राचार्य की पुत्री देवयानी को अनुकूल कर लेने पर कार्य सिद्धि सरल हो जाएगी'[1]।

देवताओं की प्रार्थना स्वीकार कर कच शुक्राचार्य के पास पहुँचे और अपना परिचय देकर, उनसे शिष्य बना लेने की प्रार्थना की। शुक्राचार्य ने उन्हें शिष्य बनाना स्वीकार कर लिया। एक सहस्र वर्ष के लिए ब्रह्मचर्य व्रत धारण कर कच शुक्राचार्य के समीप रहने लगे। वे सुन्दर युवक थे ही नृत्य और गान विद्या में भी निपुण थे इसलिए देवयानी का सहज आकर्षण उनकी ओर हो गया। कच और देवयानी एक-दूसरे को प्रसन्न करने और अपनी सेवा से संतुष्ट रखने की चेष्टा करते थे।[2]

कच को शुक्राचार्य के पास रहते जब पांच सौ वर्ष बीत गये, तब दैत्यों को उनके उद्देश्य का पता चला। एक दिन कच जब अपने गुरु की गौओं को चराने के लिए वन में गये हुए थे तब दैत्यों ने अवसर पाकर उनका वध कर डाला और उनके शरीर के टुकड़े टुकड़े कर मांस कुत्तों सियारों को खिला दिया। देवयानी ने जब कच के बिना ही गौओं को लौटते देखा तब उसके मन में खटका हुआ। अपने पिता के पास जाकर वह बोली कि निश्चय ही कच मारा गया है उसे जिलाइए अन्यथा मेरा जीना कठिन हो जाएगा।[3] शुक्राचार्य ने बेटी का अनुरोध मानकर संजीवनी विद्या का प्रयोग कर कच को पुनः जिला लिया। कच कुत्तों सियारों का शरीर फाड़ कर पूर्व रूप में ही हो गये। कुछ दिन बाद जब कच देवयानी के लिए फूल लाने गये थे, तब दैत्यों ने उन्हें देख लिया और उन्हें फिर मार कर पीस कर समुद्र के जल में मिला दिया। देवयानी के आग्रह पर इस बार भी शुक्राचार्य ने संजीवनी विद्या के प्रयोग से कच को जीवित कर दिया। कच ने अपने साथ जो घटित हुआ था, वह शुक्राचार्य को बताया।[4]

तीसरी बार फिर कच दैत्यों के हत्थे चढ़ गये। इस बार दैत्यों ने उन्हें मारकर आग में जलाकर भस्म बना लिया और उस भस्म को मदिरा में मिलाकर गुरु शुक्राचार्य को पिला दिया। देवयानी ने फिर शुक्राचार्य से कच को जिलाने का अनुरोध किया और कहा कि कच के बिना मैं भी जीवित नहीं रह सकूंगी। शुक्राचार्य ने कहा कि

---

१ महाभारत आदिपर्व ७६।१२-१६

२ वही आदिपर्व ७६।१७-२६

३ वही आदिपर्व ७६।२६-३२

४ वही आदिपर्व ७६।-३४२

मैं दो बार उसे जिला चुका, दत्य उसके पीछे पडे हैं अत अब उसे जिला भी दू तो उसका बचना कठिन है। इसलिए उसे जिलाना व्यथ है। बेटी के आग्रह के आगे पिता को झुकना पडा। शुक्राचाय ने सजीवनी विद्या का प्रयोग कर कच का नाम लेकर पुकारा तो वह उनके पेट म से बोला। कच ने शुक्राचाय को सब आप बीती बतला दी। शुक्राचाय बडे धम सकट मे पडे। यदि वे कच को जिलाते हैं तो स्वय मरते हैं। अन्तत उन्होंने यही निश्चय किया कि कच को सजीवनी विद्या सिखा दी जाय जिससे वह उनके उदर मे से निकल आने के बाद उन्हे भी जीवित कर सके। शुक्राचाय ने कच को सब समझा दिया। कच ने जीवित होने के बाद मत्र प्रयोग से अपने गुरु को भी जिला लिया।[1]

कच न एक सहस्र वष तक गुरु के समीप रहकर अपना व्रत पूरा कर लिया तब उन्हे देवलोक जाने की अनुमति गुरु ने दे दी।

दवयानी कच को प्यार करने ही लगी थी। जब उसे पता चला कि कच का व्रत पूरा हो गया है और उन्हे घर लौटने की अनुमति मिल गयी है तब उसने कच स अपना पाणिग्रहण करने का निवेदन किया। परन्तु गुरु पुत्री होने के कारण कच न तो उसे सदा पूज्या ही समझा था अत उसने ऊच नीच सब समझाकर उसका प्रणय निवेदन ठुकरा दिया। तब प्रणय-वचिता देवयानी ने कच को शाप दिया कि तुम्हारी सीखी सजीवनी विद्या तुम्हें सिद्ध न होगी।[2] कच ने भी देवयानी को प्रतिशाप दिया कि तुम काम के वशीभूत होकर मुझ निर्दोष को शाप दे रही हो इसलिए कोई भी ऋषि-कुमार (ब्राह्मण) तुम्हारा पाणिग्रहण नहीं करेगा। तुमने सजीवनी विद्या मुझ सिद्ध न होने की जो बात कही सो ठीक है किन्तु मैं जिसे यह विद्या पढा दूगा उसे तो यह सिद्ध होगी ही।[3] ऐसा कहकर कच शीघ्रता से देवलोक चले गये और इन्द्रादि देवताओ न उन पर प्रसन्न होकर उन्हें यज्ञ भाग का अधिकारी बना दिया। बाद मे दवयानी का विवाह भी एक क्षत्रिय राजा ययाति स हुआ। देवयानी और शर्मिष्ठा की कहानी इसी स सम्बन्धित है।

'स्कन्द पुराण'[4] म कच देवयानी क प्रेम का तो प्रसग नही मिलता किन्तु दत्य गुरु शुक्राचाय द्वारा मृत सजीवनी विद्या की प्राप्ति के लिए एक सहस्र वष तक कण धूम पीते हुए कठोर तपस्या करने उस तपस्या काल मे इन्द्र पुत्री जयन्ती द्वारा शुक्राचाय की सेवा करने शिवजी का प्रसन्न होकर इस विद्या का शुक्राचाय को देने आदि घटनाओ का वणन हुआ है।

'मत्स्य पुराण'[5] म भी कच देवयानी का प्रेम प्रसग मिलता है देवताओ की इच्छा से कच दत्य गुरु शुक्राचाय क पास जाते हैं। वहाँ देवयानी उन पर अनुरक्त

१ वही आदिपर्व ७६।४३ ६२
२ वही आदिपर्व ७७।१६
३ वही आदिपर्व ७७।१८ २
४ स्कन्द पुराण काशीखण्ड अ १६
५ मत्स्य पुराण अ० २५ २६

होती है। कच का दैत्य बार-बार मार डालते हैं और शुक्राचार्य देवयानी के अनुरोध पर उसे जिला देते हैं। अन्त में कच संजीवनी विद्या सीख लेते हैं। कच-देवयानी में परस्पर शाप तक की घटनाएँ 'मत्स्य पुराण' में वैसी ही वर्णित हैं जैसी 'महाभारत' के आदि पर्व में।

(६) कर्ण-जन्म की कथा

कर्ण के जन्म और पालन-पोषण आदि की कथा 'महाभारत' के आदिपर्व[1] और वन पर्व[2] में आती है। आदिपर्व के अध्याय ६३ में कर्ण-जन्म की कथा एक श्लोक[3] में कह दी गयी है कि कुन्तिभोज की कन्या कुन्ती के गर्भ से सूर्य के अंश से कर्ण की उत्पत्ति हुई। कर्ण जन्म से ही कवच और कुण्डल धारी था। आदिपर्व के अध्याय ६७[4] में यह कथा कुछ विस्तार के साथ कही गयी है और उसमें बताया गया है कि कुन्ती जब अपने पितृ-गृह में कुमारी ही थी तभी उसके अतिथि-सत्कार से सन्तुष्ट होकर महामुनि दुर्वासा ने उसे एक मन्त्र सिखाया जिसके बल से किसी भी देवता का आवाहन किया जा सकता था। कुन्ती ने मन्त्र का प्रभाव देखने के लिए कौतूहलवश सूर्य का आवाहन किया। सूर्य ने कुन्ती के उदर में गर्भ-स्थापन किया और उस गर्भ से एक ऐसा पुत्र उत्पन्न हुआ जो जन्म से ही कवच और कुण्डल पहने हुए था[5] और सूर्य के समान तेजस्वी था। कुन्ती ने लोक-लाज और पिता-माता के भय के कारण उस शिशु को एक पेटिका में रख कर जल में बहा दिया। यह पेटिका कौरवों के अधिरथ नामक सूत को मिली। वह और उसकी पत्नी राधा उस शिशु का जिसका नाम उन्होंने वसुषेण रखा, पालन पोषण करने लगे। बड़ा होने पर यह बालक कर्ण नाम से प्रसिद्ध हुआ और बड़ा वीर तथा योद्धा बना। वह दुर्योधन का मन्त्री और मित्र होने के साथ-साथ उसके शत्रुओं का नाश करने वाला था।[6]

आदिपर्व के ११० वें अध्याय में कर्ण जन्म की जो कथा कही गयी है उसमें कोई नयी बात नहीं, किन्तु कुन्ती के विषय में पता चलता है कि वह वसुदेव जी के पिता शूरसेन की पुत्री पृथा थी। शूरसेन ने अपने सन्तानहीन फुफेरे भाई कुन्तिभोज को पूर्व प्रतिज्ञा के अनुसार अपनी यह पहली सन्तान भेंट कर दी।[7] कुन्तिभोज ने पृथा या कुन्ती पर अपने अतिथियों के सत्कार का भार डाल रखा था। इसी सिलसिले में कुन्ती को

---

१ अध्याय ६३ ६७ ११ १३११३५

२ अध्याय ४ ८ ३ ६

३ ९८ वें श्लोक।

४ महाभारत आदिपर्व ६७।१३२ १५

५ वही आदिपर्व ६७।१३८

६ वही आदिपर्व ६७।१३९ १४३

७ वही आदिपर्व ११०।२ ३

दुर्वासा से दि॰य मत्र की प्राप्ति हुई थी। सूय ने कु ती को कण की उत्पत्ति के बाद पुन कयात्व प्रदान किया। कुन्ती द्वारा जल म प्रवाहित शिशु को वसु (कवच-कुण्डलादि धन) के साथ (शरीर के साथ चिपके हुए) उत्प॰न होन के कारण सूत अधिरथ और उसकी पत्नी राधा ने उसका नाम वसुषेण रखा। जब वह कुछ बडा हुआ तो कौरवा के साथ वह भी कण नाम स गुरु द्रोणाचाय से अस्त्र शस्त्र की शिक्षा ग्रहण करने लगा। अजुन से कण की सदा लाग डाँट रहती थी और उनको नीचा दिखाने के लिए वह सदा सचेष्ट रहता था।[1] जब कौरव पाण्डव द्रोणाचाय स सीखी अपनी अस्त्र शस्त्र विद्या का प्रदशन एक रगभूमि म करने लगे तब कण ने भी वे सब कौशल प्रदर्शित किये जो अजुन ने किये थे। कौरवा को इससे बडी प्रस॰नता हुई और उ॰होने कण का छाती से लगा लिया। दुर्योधन ने उसे अपने पास रह॰ और कौरव राज्य का अपना ही समझने का निमत्रण दिया।[2]

अजुन ने रगभूमि मे कण को कुछ कडे शब्द कह दिये। कण अजुन से द्वन्द्व युद्ध के लिए प्रस्तुत हो गया। पर॰तु कृपाचाय के यह कहने पर कि पहले तुम अपन कुन शील का परिचय दो, तब एक राजकुमार (अजुन) तुम्हारे साथ लडेगा। कण का मस्तक लज्जा स झुक गया। दुर्योधन ने उसी समय कण को अगदेश के राज पद पर अभिषिक्त किया।[3] उस समय भीष्म आदि क बीच बिचाव स कण और अजुन का युद्ध टल गया। पर॰तु कौरवा ने कण को अर्जुन की टक्कर का वीर मानकर उसकी अधिक आवभगत शुरू कर दी।

देवीभागवत पुराण' म भी दुर्वासा प्रदत्त मत्र के बल से कु॰ती द्वारा सूयदेव का आह्वान करना और उनके ससग से अविवाहितावस्था मे ही एक पुत्र (कण) को ज॰म दना लोक लाजवश उस सद्य जात पुत्र को मजूषा म बद करके दासी के द्वारा कही फेंकवा देना कौरवा के सूत अधिरथ द्वारा उस मजूषा को प्राप्त करना और कण का पालन-पोषण करना[4] कण का महापराक्रमी होना और दुर्योधन का प्रियत्व प्राप्त करना,[5] आदि वर्णित है।

अग्निपुराण' मे कण के विषय मे कहा गया है कि इसे कु॰ती ने कौमार्यावस्था म उत्प॰न किया था और यह दुर्योधन का आश्रित था।[6]

१ वही आदिपर्व १३१।११ १२
२ वही आदिपर्व १३५।११ १४
३ वही आदि पर्व १३५।३७ ३८
४ देवीभागवत पुराण २।६।१४ ३८
५ वही ६।२६।४५
६ अग्नि पुराण १३।११

(७) कर्ण द्वारा इन्द्र को कवच-दान

महर्षि दुर्वासा प्रदत्त मत्र के प्रभाव से कुन्ती ने अपनी कौमार्यावस्था म ही कतूहलवश सूयदेव का आवाहन किया। उनसे उसके एक पुत्र उत्पन्न हुआ। कुन्ती के इच्छानुसार यह शिशु जन्म से ही सूय प्रदत्त कवच और कुण्डल लेकर आया। ये उसके शरीर म चिपके हुए थे। य कवच और कुण्डल अमृतमय थे। सूय ने जो कुण्डल कर्ण को दिय वे उन्हें उनकी माता अदिति ने दिय थे। इनको धारण करने के प्रभाव से कण किसी के लिए भी अविजित हो गय थे।[1] अमृत से उत्पन्न कवच कुण्डल धारण करने के कारण ही कुन्ती द्वारा जल म प्रवाहित कर दिए जान की स्थिति म भी कण जीवित रह सक थे।[2] इनका पालन पोषण कौरवो के सारथि अधिरथ और उसकी पत्नी राधा न किया था।

कण दोपहरी म जल म खड होकर सूय क अभिमुख हो सूय की स्तुति करते थे और उस दशा म कोई भी ब्राह्मण उनसे कुछ भी माँग कर खाली हाथ नही लौट सकता था।[3] जब पाण्डवा के वनवास के बारह वष बीत गए और तेरहवाँ वष आरम्भ हुआ तब इन्द्र अपने पुत्र अजुन की सहायता करने का निश्चय कर ब्राह्मण का वेश धारण कर कण के सम्मुख भिक्षाथ उपस्थित हुए। किन्तु इसके पूव ही सूयदेव कण को स्वप्न म दशन दकर इन्द्र क ब्राह्मण रूप म कवच कुण्डल माँगने आने की सूचना दे चुके थे और उन्हे कवच कुण्डल देने स मना कर गय थे और कह गए थे कि कवच कुण्डल न देने पर तुम्हारी आयु क्षीण हो जाएगी अजुन स तुम जीत न सकोग और मृत्यु के अधीन हो जाओग। किन्तु कण अपने दान व्रत से विचलित होने को तैयार नही हुए थे।[4] अस्तु ब्राह्मण वेशधारी इन्द्र ने जब उनस कवच कुण्डल की याचना की और उनके बदले और कुछ ग्रहण करने को प्रस्तुत न हुए तब कण ने भी कवच-कुण्डल के बदल म इन्द्र से उनकी अमोघ शक्ति की माँग की। वस्तु विनिमय के आधार पर कण ने अपने शरीर से काट कर कवच कुण्डल इन्द्र को दे दिए और इन्द्र ने अपनी अमोघ शक्ति कण को प्रदान की। पहले कण' का नाम वसुषण था परन्तु कण (कत्तन) करने क कारण उनका नाम कण या विकत्तन हो गया। पाण्डवा ने जब यह सुना तो वे फूले न समाये और कौरवा ने सुना तो उनका घमण्ड चूर चूर हो गया।[5]

---

१ महाभारत आदि पर्व ६३।६८ ११०।१८
२ वही वन पव ३०८।४ ७ २७
३ वही आदि पव ६७।१४३ और वन पव ३०६।२३ २५
४ वही वन पर्व अ० ३ ० ३०२
५ वही वनपव अ० ३१० और आदि पव ६७।१४४ १४६ तथा ११ ।२८ २६

(८) कार्त्तिकेय-जन्म की कथा

सर्वप्रथम वाल्मीकि रामायण[1] में ही कार्त्तिकेय जन्म की कथा मिलती है। कथा इस प्रकार है—रुद्र (शिव) ने उमा के साथ विवाह कर दिव्य सौ वर्ष तक रति क्रीडा की, पर पार्वती के कोई सन्तान न हुई। देवता इससे प्रसन्न थे क्योंकि वे नहीं चाहते थे कि पार्वती के गर्भ से सन्तान उत्पन्न हो। शिव और शक्ति के संयोग से उत्पन्न संतान का तेज सहन करने की शक्ति उनमें न थी। उन्होंने शिव से अपना तेजस् (वीर्य) कुछ समय तक के लिए अपने शरीर में ही धारण करने की प्रार्थना की। शिव ने ऐसा ही किया। बाद में शिव स्खलित हो गये और उनका वीर्य पृथ्वी पर गिरा। पृथ्वी उस वीर्य के तेज को सह न सकी अतः देवताओं के कहने से अग्नि ने उस वीर्य को धारण किया। पार्वती शिव का शुक्र धारण करने से वंचित रह गयी इससे वे देवताओं पर बहुत क्रुद्ध हुई। उन्होंने देवताओं को शाप दिया कि वे अपनी पत्नियों से पुत्र नहीं पैदा कर सकेंगे। जब अग्नि भी उस वीर्य को धारण करने में असमर्थ रहा तब वह हिमालय की कन्या गंगा को सौंपा गया। गंगा भी उस तेजस्वी शुक्र को धारण न कर पायी अतः उसने उस शुक्र को हिमालय के समीप शरवन में डाल दिया। वह वन उस वीर्य के प्रभाव से स्वर्णमय हो गया। देवताओं ने छः कृत्तिकाओं को शरवन में उत्पन्न कुमार का पालन करने के लिए भेजा। कृत्तिकाओं ने यह शर्त रखी कि कुमार की माता मानी जाने पर ही हम उनका लालन पालन करेंगी। देवताओं ने शर्त मान ली। कृत्तिकाओं से लालित होने के कारण उनका नाम कार्त्तिकेय पड़ा। छः माताओं से पालित होने के कारण वे 'षण्मातृक' भी कहलाये। उन्हीं कुमार को देवताओं ने देव सेनापति बनाया और उन्होंने ही तारकासुर का वध किया।

इस कथा से पता चलता है कि देवतागण तारकासुर के वध के लिए शिव के वीर्य से उत्पन्न संतान के तो इच्छुक थे परन्तु वह सन्तान पार्वती के गर्भ से उत्पन्न हो यह वे नहीं चाहते थे।

'महाभारत' के वन पर्व[2] शल्य पर्व[3] और अनुशासन पर्व[4] में भी यह कथा आयी है। वन पर्व की कथा वाल्मीकि रामायण की कथा से पर्याप्त भिन्न है।

वन पर्व की कथा —वसिष्ठ आदि सप्तर्षियों ने यज्ञ किया उसमें अन्य देवताओं के साथ अग्निदेव भी आए। ऋषि-पत्नियों के सहज सौन्दर्य को देख अग्नि की इच्छा उनमें मग्न करने की हुई किन्तु यथाविधि के रूप में तो वे उनको छू नहीं सकते थे अतः गार्हपत्य अग्नि में उन्होंने प्रवेश किया। शरद ऋतु में ऋषि-पत्नियों के हाथ सेंकते समय अग्नि उनका स्पर्श सुख तो पा सके परन्तु उनको उस रूप में पूर्णतः पाना तो हो नहीं

1. वाल्मीकि रामायण बालकाण्ड सर्ग ३६ ३७
2. महाभारत वन पर्व अ० २२४-२३१
3. वही शल्य पर्व अ० ४४
4. वही अनुशासन पर्व अ० ८४

सकता था अत अग्नि व्याकुल होकर वन म चले गए। उन्ही दिनो दक्ष-कन्या स्वाहा अग्नि पर आसक्त हो रही थी। जब उसे पता चला कि अग्नि ऋषि पत्नियों पर आसक्त है तब उसन वसिष्ठ-पत्नी अरुन्धती को छोडकर शेष छ ऋषि पत्नियो का रूप धारण कर अग्नि से भोग किया। अरुन्धती बहुत पतिव्रता थी अत उसका रूप धारण करने का उसे साहस न हुआ। वह प्रत्येक प्रतिपदा को अग्नि के पास जाती और उनका वीय एक सुवण कुण्ड म डाल आती थी। अग्नि के छ बार के इस सचित वीय से उस सुवण कुण्ड स षडानन की उत्पत्ति हुई। उस कमार के तेज से सारा चराचर जगत उद-भासित हो उठा। शिव का धनुप और महाशक्ति आदि अस्त्र स्वत षडानन के पास आ गए। उन्होने उत्पन्न होते ही क्रौंच आदि पवतो को ढाह दिया। चूंकि स्वाहा ने ऋषि-पत्नियो का रूप धारण कर अग्नि से समोग किया था अत छओ ऋषियो ने अपनी पत्नियो को त्याग दिया। तब स्वाहा ने विश्वामित्र को साक्षी बनाकर यह बताया कि कुमार उससे उत्पन्न हैं। इधर इन्द्र आदि देवताओ ने कुमार के तेज को सहन न कर पान के कारण मातृकाओ को उनका वध करने के लिए भजा पर मातकाएँ उनका वध करने के बजाय उनको वात्सल्यवश अपना दूध पिलाने लगी। अग्नि ने भी कुमार की रक्षा की। फिर ईर्ष्यालु देवताओ से कुमार का युद्ध हुआ। कुमार न दवताओ को पराजित कर दिया। झख मार कर इन्द्र ने देवसेना के साथ कार्तिकेय का विवाह कर दिया। देवासुर-सग्राम मे कार्तिकेय ने ही देव सेना का सेनापतित्व किया। इस युद्ध म विजयी होने के बाद ब्रह्मा न कार्त्तिकेय को बताया कि त्रिपुर का सहार करन वाल शिव जी ही तुम्हारे पिता हैं। रुद्र ने अग्नि म प्रवेश कर स्वाहा रूपिणी उमा के सयोग से लोकहिताथ तुम्हे उत्पन्न किया है। ब्रह्मा की बात मानकर कुमार ने शिव जी की पूजा की।

'महाभारत' के शल्य पव की कथा 'वाल्मीकि रामायण' की कथा स मिलती-जुलती है। इसके अनुसार, एक बार महादेव जी का वीय अग्नि म गिर पडा। अग्नि उस वीय को भस्म नही कर पाए। ब्रह्मा की आज्ञा से अग्नि न वह वीय गगा म डाल दिया। गगा भी जब उसे न सँभाल सकी, तब उन्होने उसको शरवन म डाल दिया। शरवन मे कुमार की उत्पत्ति हुई। सयोग स कृत्तिकाएँ उधर से गुजरी। शिशु को अकेला देख व उसे दूध पिलाने लगी। उनके ममत्व को देख कुमार ने छ मुख धारण कर सभी का स्तन-पान किया।

अनुशासन पव की कथा का प्रारम्भिक अश तो "रामायण' के ही समान है, किन्तु बाद का अश कुछ भिन्न है। इसके अनुसार देवता शिव से पावती मे वीय स्थापित न करने की प्राथना करते हैं। खण्डित रति पावती दवताओ को अपनी पत्निया स पुत्र न उत्पन्न कर पाने का शाप देती हैं। दवताओ की प्राथना पर शिव ने अपना वीय ऊपर चढा लिया पर उसका कुछ अश अग्नि मे गिर पडा। अग्नि ने गगा मे वीय को स्थापित किया, उसी से कुमार की उत्पत्ति हुई। जिस समय पावती ने देवताओ को शाप दिया, उस समय अग्नि वहाँ उपस्थित न थे, अत अग्नि कुमार के पिता और गगा कुमार की माता हुई। यहाँ अग्नि को साक्षात् और शिव को परम्परा से कुमार का पिता बताया गया है। रामायण मे यह घटना इस रूप मे नही मिलती, शेष कथा 'रामायण'

के अनुसार है।

'ब्रह्म पुराण'[1] में कार्तिकेय जन्म की कथा संक्षेप में ही आयी है। इधर तो तारकासुर के अत्याचार के मारे देवताओं की नाक में दम हो रहा था उधर शिव शक्ति (पार्वती) के साथ सम्भोग रत थे। घबराकर देवताओं ने अग्नि को उनके पास रति भंग कराने के लिए भेजा। अग्नि ने शुक-वेश में गवाक्ष के मार्ग से रमण गृह में प्रवेश किया। शिव ने उसकी धृष्टता से रुष्ट होकर अपना वीर्य उसके मुँह में डाल दिया। अग्नि उसे धारण करने में असमर्थ हो गया तब उसने गंगा में उस वीर्य को डाल दिया। गंगा ने स्नानार्थ आयी कृत्तिकाओं में उसको स्थापित किया और कृत्तिकाओं ने शरवन में उस वीर्य को डाल दिया। वहीं कुमार का जन्म हुआ।

"पद्म पुराण"[2] में कार्तिकेय जन्म की कथा पूर्वोल्लिखित कथारूपों से भिन्न रूप में आयी है। तारकासुर ने ब्रह्मा से वर पाया था कि महादेव जी से उत्पन्न पुत्र जो पैदा होने के सात दिन के भीतर महापराक्रमी हो जाय, मुझे मारे, अन्य कोई न मार सके। यह वर पाकर वह देवताओं को सताने लगा। देवताओं ने महादेव जी से प्रार्थना की। महादेव जी ने पार्वती जी से विवाह किया। विवाहोपरान्त महादेव और पार्वती काम क्रीडा में रत हुए। एक सहस्र वर्ष ऐसे ही बीत गये। उधर तारकासुर का देवताओं पर अत्याचार बढ़ता गया। देवताओं ने महादेव जी को अपने कार्य का स्मरण दिलाने के लिए अग्नि को भेजा। अग्नि ने शुक पक्षी का रूप धारण कर झरोखे की राह रमण कक्ष में प्रवेश किया। पार्वती लज्जित हो शिव का आधा ही वीर्य ग्रहण कर चली गयी। शिव ने शेष आधा वीर्य अग्नि से ग्रहण करने को कहा। अग्नि ने अंजलि में शिव का वीर्य लेकर पी लिया। पर वीर्य उसके उदर में न टिक सका और सबका सब निकल पड़ा। उस वीर्य को सब दिशा देवियों और देवताओं ने ग्रहण कर लिया। किन्तु शंकर के उस वीर्य को पचाना सरल न था। वीर्य उनके पेट को फोड़ कर निकल पड़ा और सूर्य के रंग का होकर एक मैदान में एकत्र हो गया। वहाँ कई योजन लम्बा एक सरोवर बन गया। उसमें स्वर्ण कमल खिल आये। पार्वती भी उस जल में क्रीडा करने गयीं। उनके सामने ही कृत्तिका नाम की नक्षत्र रूपिणी ६ स्त्रियाँ वहाँ आयीं और उन्होंने कमल के पत्ते में लेकर सरोवर का जल पी लिया। फिर वे कृत्तिकाएँ पार्वती से बोलीं कि महादेव जी के वीर्य से उत्पन्न इस जल को हम लोगों ने पी लिया है। इससे हम लोग गर्भ धारण करेंगी और उससे जो पुत्र उत्पन्न होगा उसे हम तुम्हें दे देंगी। किन्तु वह हम लोगों का भी पुत्र होगा और हमारी भी रक्षा करेगा। फिर पार्वती ने भी वह जल पान किया। उनके पीते ही सरोवर तिरोहित हो गया। वह जल बालक रूप में पार्वती की दायीं कोख को फाड़कर बाहर निकल आया। उत्पन्न होते ही वह दैत्यों को मारने चल दिया। इससे इस बालक का एक नाम 'कुमार' भी हुआ। फिर

---

१ ब्रह्म पुराण १२८।७-२३

२ पद्म पुराण सृष्टि खण्ड अ० ४६

पार्वती की बायीं कोख को विदीर्ण कर एक बालक और हुआ। यह भी अग्नि के मुख से गिरे हुए महादेव जी के जल रूप वीर्य से ही उत्पन्न हुआ था। कृत्तिकाओं द्वारा एकत्र करके पार्वती को दिये हुए जल से यह बालक उत्पन्न हुआ इससे इसके ६ मुख हुए क्योंकि कृत्तिकाएं ६ होती हैं। ६ शाखाओं से यह बालक संयुक्त हुआ। वे शाखाएँ उस बालक के सब मुखों में जुड़ गयीं। इसी से उस बालक का एक नाम विशाख हुआ और षण्मुख' भी। उसके स्कन्द स्कन्ध, विशाख, षण्मुख और कार्त्तिकेय आदि कई नाम हुए। "स्कन्द' नाम सरोवर के जल के सूख जाने के कारण हुआ, विशाख शाखाओं से विशेष रीति से युक्त होने के कारण। शाखाओं के योग से होने के कारण स्कन्ध नाम हुआ। कृत्तिकाओं के दिये हुए जल से उत्पन्न होने के कारण उसका नाम कार्त्तिकेय भी प्रसिद्ध हुआ।

जब प्रथमतः अग्नि ने महादेव जी का वीर्य पीकर उगल दिया था तब वह एक विशाल शरपत के वन में गिरा था, वही सरोवर हो गया था। फिर उसी जल के पीने से कार्त्तिकेय पैदा हुए इससे उनका एक नाम शरजन्मा' या शरजात' भी हुआ। इन्द्र ने उन्हें अपनी देवसेना नामक कन्या पत्नी बनाने के लिए दी। विष्णु ने एक रथ तथा चक्र दिया, कुबेर ने दस लाख यक्ष सेवार्थ दिये अग्नि ने तेज दिया वायु ने वाहन दिया त्वष्टा ने एक खिलौना और एक कुंडल दिया। कार्त्तिकेय ने अपनी गदा से तारकासुर का वध किया।

'शिव पुराण' में यह कथा दो स्थलों[1] पर आयी है। रुद्र संहिता, कुमार खण्ड की कथा कुछ अधिक विस्तृत है। उसका सार यह है शिव पार्वती का विवाह हो जाने के बाद शिव पार्वती ने दिव्य सहस्र वर्षों तक एकान्त में क्रीडा की। देवतागण तारकासुर से पीड़ित थे। शिव शक्ति की इस अखण्ड रति से ब्रह्माण्ड कांपने लगा। विष्णु को साथ लेकर सब देवता शिव के पास गये। शिव रति भंग कर बाहर आये। उनका रेत स्खलित हुआ। देवताओं के कहने से अग्नि ने कपोत रूप धारण कर शुक्र को पी लिया। तभी पार्वती वहाँ आ गयीं। उन्होंने अग्नि को सर्वभक्षी होने का शाप दिया और देवताओं को अपनी पत्नियों से संतान न उत्पन्न करने का। देवता अग्नि में पकाकर अन्न खाते थे, अतः वीर्य का कुछ अंश उनके उदर में भी पहुँचा। इससे देवता जलने लगे। उन्होंने इस दाह से बचने के लिए शिव की स्तुति की। शिव की आज्ञा से वमन कर उन्होंने उन अन्न कणों को, जिनका संसर्ग अग्नि से हुआ था बाहर निकाला। अग्नि भी उस वीर्य को न झेल सकी। शिव ने उससे कहा कि शीतपीड़ित जो स्त्रियाँ आग तापने आयें उनमें इस वीर्य का आधान कर दो। सप्तर्षियों की पत्नियों में से वसिष्ठ-पत्नी अरुन्धती ने अन्य ऋषि पत्नियों को आग न तापने को कहा, पर वे न मानीं। अग्नि ने वह वीर्य नाद के माध्यम से उनमें पहुँचा दिया। वे गर्भवती हो गयीं। ऋषियों ने उन्हें त्याग दिया। किन्तु छओं ऋषि-पत्नियाँ भी दाह के मारे उस गर्भ को धारण न कर सकीं और उन्होंने उसे गंगा में डाल दिया। गंगा ने भी अपनी लहरों से उस गर्भ को

---

1 शिवपुराण रुद्र संहिता कुमार खण्ड अ० ११ और पूर्वार्द्ध अ० २४

तटवर्ती शरवन (सरपता की झाडियाँ) मे फेंक दिया। वही स्कन्द का जन्म हुआ। सयोग से विश्वामित्र वहाँ पहुँच गये। उन्होने कुमार का जातकम सस्कार आदि किया। अग्निदेव भी वहाँ पहुचे। उन्होने कुमार को शक्ति तथा शस्त्र दिये। इसी समय कुमार ने दस पदम राक्षसो को नष्ट कर दिया। इसमे सृष्टि म हाहाकार मच गया। इन्द्र भी आया। उसने स्कन्द पर वज्र प्रहार किया पर स्कन्द का बाल बाँका न हुआ। स्कद दूसरे रूप म पुन पुन उत्पन्न हो जाता था। इस प्रकार चार स्कद वहाँ उत्पन्न हो गय। इन्द्र डर कर भागा। इसी बीच षणमातकाएँ वहा नहाने आयी। उन्होंने शिशु को स्तन पान कराया। कार्तिकेय ने षण्मुख होकर छओ कृत्तिकाओ को सन्तुष्ट किया। कृत्तिकाए उस शिशु को लेकर चली गयी। एक दिन शिव से पावती न उनके अमाघ वीय के परिणाम के विषय म पूछा। शिव ने पथ्वी से पूछा, पथ्वी ने अग्नि स अग्नि ने गगा से गगा ने सूय स सूय ने चन्द्र स पूछा। अन्त मे पता चला कि शिशु तो कृत्तिकाओ के पास है। शिव कुमार को ससन्य लिवाने चले। शिव जब कार्तिकेय का लेकर आय तब उनक यहाँ पुत्रोत्सव मनाया गया। इस उत्सव म ब्रह्मा तथा अन्य दवताओ ने कुमार को दिव्यास्त्र दिय। इन्ही स उसने तारकासुर को युद्ध म हराया।

'शिव पुराण' पूर्वार्द्ध अध्याय २४ म आयी कथा पदमपुराण' की कथा स तो पर्याप्त भिन्न है किन्तु इसी पुराण की रुद्र सहिता कुमार खण्ड की कथा से उसम बहुत समानता है। भिन्नता बस यह है—(१) अग्नि के शरीर म प्रविष्ट शिव का वीय छ ऋषि पत्निया म रोम कूप द्वारा चला गया जिसस वे गभवती हो गयी। ऋषिया ने अपनी पत्नियो पर कोप किया तब पत्निया ने हिमालय की पीठ पर उस वीय को छोड दिया और फिर उठाकर गगा मे डाल दिया। (२) विश्वामित्र ने नवजात शिशु (कार्तिकेय) का सस्कार करते हुए बताया कि यह शिव और गिरिजा का पुत्र है। विश्वामित्र द्वारा प्रदत्त सागि अर्थात शक्ति के प्रयोग स कार्तिकेय ने एक पवत के दो टूक कर दिये। (३) जिन छओ ऋषि पत्नियो ने शिव का तेज धारण किया था वे पुन *गगा नहाने आयी।* शिशु कार्तिकेय को देखकर उनम से प्रत्येक *का मन चाहा* कि उसे उठा लें। सब आपस म झगडने लगी कि यह पुत्र मेरा है। शिशु ने उनका झगडा मिटाने के लिए छ मुख होकर सबके स्तना का दूध पिया। (४) देवता इस शिशु को लकर कैलास गये। शिव ने पावती को स्कद (कार्तिकेय) का परिचय दिया। पावती ने उसे अपना दूध पिलाया।

यहाँ छ कृत्तिकाओ के स्थान पर छ ऋषि पत्नियो का कुमार को दुग्ध-पान कराना विशेष है।

'ब्रह्मवैवत्त पुराण'[1] म आगत कथा शिव पुराण के कुमार-खण्ड की कथा क समान होते हुए भी कई बातो म भिन्न है। विवाह के बाद शकर पावती ने दिव्य सहस्र वष तक नमदा के तट पर रति लीला की। दोनो ही एक-दूसरे क अगस्पश से मूच्छित हो गये। इस अदभुत सम्भोग-लीला को देखकर जब दवता नारायण के पास पहुचे तब

१ ब्रह्मवैवत्त पुराण गणपति खण्ड अ १२ तथा १४ १७

नारायण ने उनसे कहा कि कोई उपाय ऐसा करो जिससे शिव का वीर्य भूमि पर गिरे, नहीं तो पार्वती के उदर में गर्भाधान होने पर जो सन्तान उत्पन्न होगी, वह देवों और असुरों दोनों के लिए ही घातक होगी। इन्द्र ने शिव की रति भंग करने के लिए कुबेर को कुबेर ने वरुण को वरुण ने वायु को, वायु ने यम को, यम ने अग्नि को, अग्नि ने सूर्य को सूर्य ने चन्द्रमा को और चन्द्रमा ने ईशान को कहा किन्तु किसी को साहस न हुआ। तब इन्द्र, चन्द्र, सूर्य और पवन ने बारी बारी से शिवजी को धीरे से उदबोधन किया। शिवजी जाग तो गये पर पार्वती जी के डर से सम्भोग अवस्था में उठने का प्रयत्न न कर सके। जब देवताओं ने फिर स्तुति की, तब उन्होंने पार्वती जी से अलग होने का प्रयत्न किया। इसी बीच उनका वीर्य पृथ्वी पर गिर गया। उसी से स्कन्द उत्पन्न हुए[1]। महादेव जी ने रति से उठकर देवताओं को परामर्श दिया कि आप सब यहाँ से भाग जाइए, अन्यथा पार्वती जी आप पर क्रोधित होंगी। जब पार्वती जी रति भंग हो जाने के बाद उठी तब शिव जी डर के मारे थर थर कांपने लगे। पार्वती ने देवताओं को व्यर्थवीर्य हो जाने का शाप दिया[2]।

शंकर का जो अमोघ वीर्य स्खलित हुआ, उसके विषय में पार्वती जी ने विष्णु भगवान से जिज्ञासा की। विष्णु ने देवताओं पर जोर डाला कि उस वीर्य की खोज की जाय। धर्म ने बताया कि वह पृथ्वी पर गिरा, पृथ्वी ने कहा कि मैंने उसे धारण न कर पाने के कारण अग्नि में डाल दिया अग्नि ने कहा कि मैंने भी असमर्थ होकर उसे शरपता के वन में डाल दिया। वायु ने बताया कि उस वीर्य से तो एक सुन्दर बालक उत्पन्न हुआ है। चन्द्रमा ने कृत्तिकाओं द्वारा उस बालक के पालन पोषण की बात कही और उसके कार्त्तिकेय नाम का रहस्य बताया। पार्वती ने प्रसन्न होकर बहुत दान पुण्य किया[3]। शंकर ने वीरभद्र, विशालाक्ष आदि पार्षदों को भेजकर कृत्तिकाओं के घर पर घेरा डलवा दिया। कृत्तिकाओं ने कार्त्तिकेय का पता बता दिया। नन्दी ने कार्त्तिकेय को अपने साथ चलने का कहा। कार्त्तिकेय आये और विष्णु ने वेदमंत्र से उनका अभिषेक किया। शिवजी ने उन्हें पाशुपतास्त्र दिया। अन्य देवताओं ने भी उनको विशेष आयुध दिये[4]।

'वाराह पुराण'[5] में कुमार कार्त्तिकेय की उत्पत्ति अनेक मन्वन्तरों में अनेक लोगों के द्वारा होने की बात कही गयी है। आदि मन्वन्तर में पुरुष-स्वरूप शिव और अव्यक्त प्रकृति स्वरूपा उमा से अहंकार स्वरूप कार्त्तिकेय की उत्पत्ति हुई। उत्पत्ति का कारण यह हुआ दैत्यों को पराजित करने के लिए देवताओं का एक योग्य सेनापति की आवश्यकता हुई। देवताओं ने इसके लिए शिव से प्रार्थना की। शिव ने शक्ति को

---

१ वही गणपति खण्ड अ १
२ वही गणपति खण्ड अ २
३ वही गणपति खण्ड अ १४
४ वही गणपति खण्ड अ १५
५ वाराह पुराण अ २५

क्षुब्ध किया। इससे अग्नि के समान तेजस्वी कार्त्तिकेय का जन्म हुआ। देवताओ ने उन्हे अपना सेनापति बनाया। अन्य म वन्तरो मे भी कृत्तिका अग्नि अम्बिका आदि स पथक पथक कुमार की उत्पत्ति होना कहा गया है।

'स्कद पुराण' म यह कथा पाच स्थलो[1] पर आयी है। सामान्य परिवतन के अतिरिक्त पाँचो स्थलो की कथा एक सी है। माहेश्वर खण्ड की कथा का सार यह है—तारक के तप से प्रसन्न होकर ब्रह्मा ने उसे वर दिया कि एक बालक को छोड अन्य सभी से वह अजेय होगा। वर पाकर तारक देवताओ को कष्ट देने लगा। आकाशवाणी से देवताओ को पता चला कि शिव के वीय स उत्पन्न पुत्र से ही तारक मारा जाएगा। इधर शिव सती के वियोग म घोर तपस्या मे लीन थ। देवताओ ने कामदेव को तपस्या भग कराने के लिए शिव के पास भेजा। कामदव भस्म कर दिया गया। काम के भस्म हो जाने के बाद भी पावती ने शिव को पति रूप मे प्राप्त करने के लिए कठोर तप किया। शिव प्रसन्न हुए। पावती से उनका विवाह हुआ। गन्धमादन पवत पर वे पावती के साथ विहार करने लगे। उनका रमण शिव शक्ति का रमण था अत वह लोक क लिए अहितकर था। ब्रह्मा और विष्णु ने अग्नि को हस क रूप मे शिव के पास भजा। हस रूपी अग्नि ने शिव से भिक्षा मे उनका वीय माँगा। पावती न अग्नि को भिक्षा मे शिव का शुक्र समर्पित किया। अग्नि ने उस वीय को खा लिया। पावती न अग्नि को सवभक्षी होने का शाप दिया। शापित अग्नि शिव शुक्र को न पचा सका। अरुन्धती के रोकने पर भी शीत पीडित कृत्तिकाए ताप पाने के लिए अग्नि के पास पहुची। अग्नि ने अपने ताप के द्वारा वह वीय कृतिकाओ के शरीर मे डाला। कृत्तिकाए गभवती हो गयी। लोक लाजवश उन्होने अपना गभ सुमेरु पवत पर डाल दिया। वहाँ से वह भ्रूण गगा म पहुँचा। गगा भी उस तेज को न सह सकी। उन्हाने उसे शरवन म फेंक दिया। इसी शरवन म कुमार का जन्म हुआ। नारद न कुमार के जन्म का वत्तान्त शिव को सुनाया। शिव अपने गणों के सहित जाकर कुमार को लिवा लाये। कुमार देवताओ क सेनापति बने। उन्होने नमुचि क पुत्र तारक का वध किया।

'स्कद पुराण' की इस कथा पर शिव पुराण की कथा का पर्याप्त प्रभाव दिखाई देता है।

वामन पुराण[2] की कार्त्तिकेय जन्म कथा महाभारत के शल्य पव की कथा से मिलती-जुलती है। इसमे विशेषता इतनी ही है कि प्रत्येक घटना क लिए समय का निर्देश हुआ है जसे—अग्नि ने शिव के वीय को पाँच हजार वप तक धारण किया। अग्नि ने जब उस वीय को छोड दिया तब कुटिला नदी मे वह वीय पाँच हजार वप तक रहा। शरवन म भी वह दस हजार वप तक पडा रहा। वहा कार्त्तिकेय की उत्पत्ति हुई।

---

१ स्कन्द पुराण माहेश्वर खण्ड (केदार खण्ड) अध्याय २ २७ कौमारिका खण्ड अ० १५ ३२ अवन्ती खण्ड अ ३४ वष्णव खण्ड अ ६ ब्रह्म खण्ड अ ३१

२ वामन पुराण अ ५७

"मत्स्य पुराण"[1] मे वर्णित कथा का 'रामायण' और महाभारत' के शल्यपव की कथा से पूण साम्य है। यहाँ चत्र शुक्ला पूर्णिमा को पावती की दक्षिण कुक्षि से दैत्यो को मारने वाले कुमार नामक पुत्र की उत्पत्ति हुई। इनके शरजात होने का यहाँ उल्लेख नही। शेष कथा पूववत है।

"ब्रह्माण्ड पुराण'[2] की कथा मे जब इन्द्र अग्नि को शिव पावती की रति क्रीडा म विघ्न डालन के लिए भजता है तब पावती अग्नि पर रुष्ट होकर उसे शाप देती हैं कि तुम शिव का गभ धारण करोगे। बाद म अग्नि ने उस वीय को गगा म और गगा ने उसको तट पर (शरवन म नहीं) डाल दिया। वही कुमार का ज म हुआ। शेष कथा पूववत है।

"कथा सरित्सागर" में यह कथा बहुत कुछ "शिव पुराण' के समान ही है फिर भी इसम कुछ नवीन उदभावनाए की गई हैं, जैसे—(१) कामदेव को भस्म करने के बाद भी शिव ने पावती क तप स प्रस न होकर उनसे विवाह किया और काम के बिना ही उ हें पुत्रवती बनाने का वचन दिया। उनका रमण अनेक वष तक चला। (२) देवताओं ने अग्नि से कहा कि वह रमण कक्ष मे जाकर शिव को अपनी रति समाप्त करन को कहे। किन्तु शिव के कोप का स्मरण कर अग्नि जल म जा छिपा। वहाँ मेढका न उसका पता दे दिया। फिर, अग्नि म दराचल पर जा छिपा, किन्तु वहाँ के हाथियो ने उसका सुराग देवताओ को दे दिया। अ तत देवताओ के बहुत कहन-सुनने पर अग्नि शिव और पावती के रमण-कक्ष म गया। (३) जब इतने समय की रति के बाद भी पावती पुत्रवती न हुई, तब शिव न उ हें गणेश जी की पूजा करने को कहा। पावती ने सहस्रा वष तक गणेश की आराधना की। गणेश प्रस न हुए। पावती ने एक षण्मुखी पुत्र को ज म दिया, जो 'षडानन या "कार्त्तिकेय' के नाम से प्रसिद्ध हुआ। इसी ने देव-सेनापति बनकर तारकासुर को मारा।

(९) कृष्णावतार की कथा

कृष्णावतार या कृष्ण चरित का वणन 'महाभारत'[3] ब्रह्मपुराण',[4] पदम पुराण',[5] 'विष्णु पुराण'[6] 'वायु पुराण',[7] 'भागवत पुराण',[8] 'देवीभागवत पुराण',[9]

---

१ मत्स्य पुराण अ० १५८ १६०

२ ब्रह्माण्ड पुराण मध्यभाग उपोद्घातपाद अ० १०

३ महाभारत सभापव अ ३८।२९ के बाद दाक्षिणात्य पाठ पृ० ७९७ ८२६

४ ब्रह्मपुराण अ १८२ १८४

५ पद्मपुराण उत्तर खण्ड अ० २४५ २५२

६ विष्णु पुराण ५।१४

७ वायु पुराण अ ९६

८ भागवत पुराण १०।२५

९ देवी भागवत पुराण ४।२३

'अग्नि पुराण',[1] ब्रह्मवैवर्त्त पुराण'[2] और 'लिंग पुराण'[3] मे मिलता है। उनमे आयी कृष्ण कथा के उस अश का जिसमे कृष्ण जन्म की पूर्व कथा, देवकी के गर्भ से कृष्ण की उत्पत्ति, वसुदेव द्वारा उन्हें गोकुल छोड आने और वहाँ से कन्या रूप मे उत्पन्न योगमाया को ले आने आदि का वर्णन है सर्वसम्मत रूप नीचे दिया जा रहा है। भिन्नता के स्थलो का भी निर्देश कर दिया गया है।

कृष्णावतार के कारण पर पद्म पुराण विष्णु पुराण' 'भागवत पुराण और 'ब्रह्मवैवर्त्त पुराण मे प्रकाश डाला गया है। पद्म पुराण' और 'विष्णु पुराण' मे उल्लेख है कि कस का अत्याचार जब बहुत बढ गया तब सत्रस्त होकर पृथ्वी विष्णु के पास पहुची और कस को मारने के लिए उनमे कृष्णावतार लेने को कहा। विष्णु ने पृथ्वी को ढाढस देकर विदा किया और देवकी के आठवें गर्भ से अवतरित होने का आश्वासन दिया। 'पद्म पुराण' मे पृथ्वी पहले ब्रह्मा के समीप गयी है फिर ब्रह्मा, पृथ्वी तथा अन्य देवताओ को लेकर विष्णु के पास गये हैं। विष्णु पुराण म पृथ्वी सीधे विष्णु के पास गयी है।

बन्दीगृह मे कृष्ण का जन्म हुआ। भगवान की योगमाया के प्रभाव से सभी पहरुए सो गये वसुदेव की हथकडी बेडी अपने आप खुल गयी ? द्वार भी खुल गए। कृष्ण को लेकर वसुदेव गोकुल को चले। मार्ग मे उफनती हुई यमुना मिली किन्तु उसने भी अपने को घटाकर वसुदेव को रास्ता दिया। जब वसुदेव गोकुल मे नन्द गोप के घर पहुँचे तब सारा घर सोया पडा था। वसुदेव ने कृष्ण को यशोदा के पास लिटा दिया और योगमाया स्वरूपा कन्या को लेकर मथुरा मे आ गए। पुन हथकडी बेडी द्वार पहरुए पूर्ववत हो गए। पहरेदारो ने कस को समाचार दिया। कस आया। देवकी के हाथ से कन्या को छीनकर उसने उसे शिला पर पटकना चाहा कि क या हाथ स छूटकर अष्टभुजा भवानी का रूप धारण कर आकाश मे चली गयी और बोली कि तुझे मारने वाला तो पहले ही ज म ले चुका है। यह सुन कस बहुत पछताया और भयभीत हुआ। उधर नन्द के घर मे पुत्रोत्सव मनाया गया। कृष्ण कुमारावस्था तक गोकुल म ही रहे।

उपर्युक्त सभी ग्रन्थो मे कथा का यह रूप मिलता है किन्तु कइयो म कुछ विशेषताए भी हैं, जसे— विष्णु पुराण मे उल्लेख है कि वसुदेव जब कृष्ण को ले जाने लगे, तब यमुना घुटनो तक उतर गयी थी। उनकी भेंट न द जी स जो कस को कर देने के लिए आये हुए थे यमुना तट पर ही हो गयी। श्रीमदभागवत पुराण म उल्लिखित है कि कृष्ण ने जन्म ग्रहण करते ही वसुदेव देवकी को शख चक्र गदा पद्मधारी बालक के रूप मे दर्शन दिया और उनके पूर्व जन्म का वृत्ता त उनसे बताते हुए कहा कि पहले देवकी थी पृश्नि और वसुदेव थे सुतपा नामक प्रजापति। उन दोनो न भगवान से

१ अग्नि पुराण अ १२
२ ब्रह्मवैवर्त्त पुराण कृष्ण जन्मखण्ड अ ७
३ लिंग पुराण अ १६९
४ विष्णु पुराण ५।३।१८

उनकी तरह का ही पुत्र माँगा था। उस वर की पूर्ति के लिए उस जन्म मे भगवान 'पृश्नि-गर्भ' के रूप मे उनके पुत्र हुए। पुन दूसरे जन्म में वसुदेव देवकी कश्यप और अदिति बने तथा भगवान बने उनके पुत्र उपेन्द्र या वामन। अब तीसरे जन्म में वसुदेव-देवकी के घर उनका पुन अवतार हुआ है[1]। 'विष्णुपुराण' और 'श्रीमद्भागवत पुराण' मे यह भी उल्लिखित है कि योगमाया की भविष्यवाणी के बाद कस को पश्चात्ताप हुआ और वसुदेव-देवकी को बन्दीगृह मे रखना व्यथ समझ उसने उन्हे मुक्त कर दिया[2]। 'देवी भागवत पुराण' मे प्रसव से पूव देवकी वसुदेव को बताती है कि पहले कभी यशोदा न उससे वादा किया था कि तुम अपने पुत्र को मेरे पास भेज देना मैं उसका पालन करूँगी। जब कृष्ण जन्म हो गया, तब आकाशवाणी भी हुई कि 'वसुदेव, तुम इस शिशु को लेकर शीघ्र गोकुल चले जाओ मैंने सभी रक्षपालो को निद्रा मे विमोहित कर दिया है[3]। ब्रह्मवैवर्त्त पुराण' मे कस देवकी की प्राथना पर यशोदा की कन्या को बिना मारे ही छोड़ देता है। कृष्ण की इसी बहन का पाणिग्रहण रुक्मिणी के विवाह के समय दुर्वासा ऋषि के साथ हुआ। यह वृत्त अन्य किसी पुराण मे नही मिला। 'महाभारत' म उल्लेख है कि कृष्ण सात वष की अवस्था तक तो ब्रजमण्डल मे रहे और तदनन्तर वे वृन्दावन म जाकर गौएँ चराते हुए लीला विहार करने लगे[4]।

(१०) कृष्ण-लीला-सदर्भ

कृष्ण जब गोकुल मे रहे और उसके अनन्तर जब व वृन्दावन चले गए तब उनके द्वारा की गई अनेक चमत्कारिक और वीरतापूण लीलाओ का उल्लेख महाभारत और पुराणों में आया है। उन लीलाओ म मुख्य हैं—शकट भजन[5] पूतना-वध,[6] यमलार्जुन-उद्धार,[7] कालियनाग-मदन,[8] धेनुकासुर-वध,[9] प्रलम्बासुर-वध,[1] वकासुर-वध,[11]

---

१ श्रीमद्भागवत पुराण १।३। २४३

२ विष्णु पुराण ५।५।१६ और भागवत पुराण १०।३।४८ ५०

३ देवी भागवत पुराण ४।२३।१६ २६

४ महाभारत सभापव ३८। पृष्ठ ७६६

५ महाभारत सभापव ३८।२९ के बाद प ७६८ ब्रह्म पुराण १८४ १६० पद्म पुराण उत्तर खण्ड २४५।८ ८३ विष्णु पुराण ५।६ भागवत पुराण १०।७।४ १७ देवी भा० पु ४।२४ अग्नि पुराण १२।१६ २७ ब्रह्म व० पु० कृष्ण० १४

६ महा सभा० ।२९ के बाद पृ० ७६८ ब्रह्म पु १८४ १६ पद्म पु० उत्तर २४५।७२ ७७ विष्णु० ५ ५ भागवत० १०।६ देवी भाग० ४।२४ अग्नि० १२।१६ २७ ब्रह्म व कृष्ण १०

७ महा० सभा ३८ प० ७६८ ब्रह्म० १८४ १६० पद्म० उत्तर २४५।८७ ६५ विष्णु० ५।६ भाग० १०।१० देवी भाग० ४,२४ अग्नि १२।१६ २७ ब्रह्म व० कृष्ण १४

८ महा० सभा० ८ प ८० ब्रह्म १८४ १६० पद्म उत्तर० २४५।१२७ १३२ विष्णु० ५।७ भाग १ ।१६ १७ देवी भाग ४।२४ अग्नि० १२।१६ २७ ब्रह्म व० कृष्ण० १६

६ ब्रह्म० १८४ १६० पद्म० उत्तर २४५ १३६ १३७ विष्णु० ५।८ भाग० १ ।१५।२० ४० देवी भाग० ४।२४ अग्नि १२।१६ २७ ब्रह्म व० कृष्ण० २२

1 ब्रह्म १८४ १६० पद्म उत्तर २४५।१३६ १४० विष्णु० ५।६ भाग० १०।१८ देवी भाग ४।२४ अग्नि० १२।१६ २७ ब्रह्म व० कृष्ण० १६

११ ब्रह्म० १८४ १६० भाग १०।११।४६ ५० ब्रह्म व० कृष्ण० १६

तृणावर्त-वध,[1] अरिष्टासुर-वध,[2] केशिन वध,[3] वत्सासुर-वध,[4] अघासुर वध,[5] दावानल पान,[6] गोवर्द्धन धारण[7] वरुण लोक से नन्द जी को छुड़ा लाना,[8] व्योमासुर-वध,[9] सुदर्शन और शंखचूड-उद्धार[10] कुवलयापीड-वध,[11] चाणूर और मुष्टिक-वध,[12] कंसासुर-वध,[13] तथा कंस वध।[14]

(११) कृष्ण द्वारा कालिय नाग का दमन

'महाभारत' में कृष्ण चरित्र के वर्णन प्रसंग में कृष्ण द्वारा बाल्यावस्था में की गयी चमत्कारी लीलाओं के साथ इस लीला का भी उल्लेख हुआ है। वृन्दावन में कदम्ब वन के पास जो ह्रद (कुण्ड) था, उसमें प्रवेश करके कृष्ण ने कालिय नाग के मस्तक पर नृत्य क्रीड़ा की थी। फिर सब लोगों के सम्मुख ही उसे अन्यत्र जाने का आदेश दिया था।[15]

'ब्रह्मपुराण'[16] में भी कालिय नाग का आख्यान आया है। कृष्ण बलराम के बिना ही गोपों के साथ कालिय दह पर जाते हैं। गोपों को विषादयुक्त देखकर कालियह्रद में कूदते हैं। वहाँ कालिय सपरिवार आता है और कृष्ण को डसता है। उधर कृष्ण के

---

१ पद्म उत्तर० २४५।८५ ८६ भाग १ ।७।२ २३ देवी भाग ४।२४ ब्रह्म वै कृष्ण ११
२ महा सभा ३८।प ८०१ ब्रह्म १८४ १९० पद्म उत्तर २४५।१४१ १४६ भाग० १ ।३५ १ १५ देवी भाग ४।२४ अग्नि १२।१६ २७
३ महा सभा ३८।प ८ १ ब्रह्म० १८४ १९ पद्म उत्तर २४५।१४७ १५५ विष्णु ५।१६ भाग० १ ।३७।१ ९ देवी भाग ४।२४ अग्नि १२।१६ २७ ब्रह्म वै कृष्ण १६
४ भाग १०।११।४१ ४४ देवी भाग० ४।२४
५ भागवत १ ।१२
६ भागवत १ ।१९ ब्रह्म वै कृष्ण १९ २२
७ महाभारत सभा० ३८।प ८०१ ब्रह्म १८४ १९० विष्णु० ५।१ ११ भाग० १ ।२४ २५ देवी भाग ४ २४ अग्नि १२।१६ २७ ब्रह्म वै कृष्ण० २१
८ भागवत १०।२८
९ भागवत १ ।३७।२७ २४
१० भागवत १ ।३४
११ महाभारत सभा ३८।प ८०१ हरिवंश पुराण विष्णु पर्व ३ विष्णु० ५ २ भाग १ ।४३।२ १४ देवी भाग ४।२४ अग्नि १२।१६ २७ ब्रह्म वै कृष्ण० २२
१२ महा सभा ३८।प ८०१ हरिवंश० विष्णु २८।१७ २६ और ३० ५५ विष्णु० ५।२ भाग १ ।४४।१ २५ देवी भाग० ४।२४ अग्नि १२।१६ ७
१३ महाभारत सभा पर्व ३८।प० ८२५
१४ महा सभा० ३८।प ८ १ हरिवंश विष्णु ३ ।६३ ६४ ब्रह्म १९३ पदम उत्तर २४५ ।७६ ३८ विष्णु ५।२०।८२ ८७ भाग १ ।४४।३ ३८ देवी भाग० ४।२४।६ १४ अग्नि १२।२७
१५ महाभारत सभापर्व अ ३८ २९ के बाद दाक्षिणात्य पाठ पृ ८ ०
१६ ब्रह्मपुराण १८५

ऊपर आने म विलम्ब होता देख गोपियाँ विलाप करने लगती हैं। बलराम नन्द को कृष्ण का वास्तविक रूप बतलाकर सान्त्वना देते हैं। ह्रद के भीतर नागपत्नी और कालिय कृष्ण की स्तुति करते हैं। कृष्ण कालिय को समुद्र म चले जाने की आज्ञा देते हैं। कालिय सपरिवार वृन्दावन को छोडकर समुद्र की ओर चल देता है। कृष्ण प्रसन्नता पूवक झील से बाहर आते हैं।

'पदम पुराण'[1] म भी कालिय नाग वध का उल्लेख आया है। वह कालिय ह्रद के जल को विषाक्त कर देता था। गायो का कष्ट दूर करने के लिए कृष्ण न उसके फण पर नत्य किया, उसे निर्विष बनाकर विवश किया कि वह दह को सपरिवार छोड जाय।

'विष्णु पुराण'[2] म कालिय नाग के दमन का वत्तान्त महाभारत, ब्रह्मपुराण और पदमपुराण की अपक्षा अधिक विस्तार से वर्णित हुआ है। यहाँ भी कृष्ण बलराम को साथ लिये बिना ही वृन्दावन के समीप यमुना-तट पर उस स्थान पर पहुँचते हैं जहाँ यमुना का जल आवत्त युक्त होकर फेनिल हो जाता था। उन्हे पता चला कि वह कालिय नाग का भयकर कुण्ड है जिसकी विषाग्नि से वक्ष और पक्षी तक जल जाते थे। उस ह्रद का जल प्यासे मनुष्यों तथा पशुओ के उपयोग मे लाने योग्य नही रहा था। कृष्ण नाग कुण्ड मे कूद गये। नागराज उनके सम्मुख आया। उसके साथ बहुत स सप और सकडो नाग पत्नियां थी। उन्होने कृष्ण को कुण्डलाकार होकर बाँध लिया और उन्हें काटने लगे। उधर गोप बालक कृष्ण को कालिय-कुण्ड म कूदता देख ब्रज मे चले आये। नन्द और यशोदा तथा बहुत से गोप सुनते ही दौडे आये। गोपियाँ भी बिलखती हुई आयी। बलराम जी न कृष्ण के ईश्वरत्व को बतलाकर सबको ढाढस बँधाया। ह्रद के भीतर कृष्ण ने उछलकर अपने को नागो क बधन स छुडा लिया और अपने दोनो हाथो से कालिय नाग के बीच का फण झुकाकर उस पर चढ गये और लगे नाचने। उनके नत्य और ताडन स नाग मूर्च्छित सा हो गया। नाग पत्नियो ने कृष्ण स उसे छोड देने का अनुरोध किया। पति के प्राणो की भिक्षा माँगी। उन्होने कृष्ण क ईश्वरत्व को स्वीकार किया। कालियनाग ने भी कृष्ण की स्तुति की। उसने कहा कि विषधर होने मे उसका अपना अपराध तो कुछ है ही नही यह तो विधाता रचित उसका जाति स्वभाव है। कृष्ण ने उसे यमुना का जल छोडकर परिवार सहित समुद्र मे चले जाने के लिए आज्ञा दी। यह भी कहा कि तेरे फण पर मेरे नत्तन के कारण बने हुए चरण चिह्नो को देखकर सप शत्रु गरुड तुझ पर आक्रमण नही करेंगे। कालिय नाग कृष्ण को प्रणाम कर बन्धु-बान्धवो सहित समुद्र को चला गया। सप के चले जाने पर कृष्ण ऊपर आये। गोपो ने जल को निर्विष और स्वच्छ हुआ जानकर प्रसन्नता प्रकट की। कृष्ण के लोक रक्षक रूप को देखकर उनकी प्रीति उन पर और बढ गयी।

'श्रीमदभागवत पुराण' म भी इस घटना का विस्तत उल्लेख है।[3] कालिय नाग

---

१ पद्मपुराण उत्तर खण्ड २४५।१२७ १३२

२ विष्णु पुराण ५।७

३ भागवत पुराण १ ।१६ १७

द्वारा अपने पाश म कृष्ण को जकडना, उनका अपने शरीर को फुलाकर नागपाश स मुक्त होना, उसके १०१ फना पर नत्य करके उस वेदम कर देना और नागपत्नियों की प्रार्थना पर कष्ण का अपना नत्तन बन्द करना तथा समुद्र म स्थित रमणक द्वीप मे रहने के लिए कालिय नाग का सपरिवार प्रस्थान आदि घटनाएँ उल्लिखित हैं। कालिय नाग के चले जान से कालिय दह का जल विषहीन और अमृत के समान मधुर हो गया। इस पुराण म कालिय नाग के रमणक द्वीप को छोडकर कालिय दह (यमुना क जल) मे आ बसन की कथा भी दी हुई है जो अन्य किसी पुराण मे नहीं मिलती। कथा यह है विनता के पुत्र गरुड कद्रू के नाग पुत्रा क शत्रु थे। गरुड सब सर्पों को खाकर शीघ्र ही समाप्त न कर दें, इसलिए ब्रह्मा जी ने नियम बना दिया कि प्रत्येक मास मे एक निर्दिष्ट वक्ष के नीचे गरुड को एक सप की भेंट दी जाय। प्रत्येक अमावस्या को गरुड को यह भेंट मिलती रहती थी। कद्रू का एक पुत्र कालिय बडा अभिमानी था। वह स्वय तो बलि देना दूर, दूसरे सर्पों द्वारा दी हुई बलि को भी खा लेता। गरुड और उसमे युद्ध हुआ। गरुड ने उसे भगा दिया। वहाँ से भाग कर कालिय नाग यमुना के दह मे आकर रहने लगा। यह कुण्ड ऐसा था जो सौभरि ऋषि क शाप के कारण गरुड के लिए अगम्य था। यदि गरुड वहाँ आते, तो प्राणो स हाथ धो बठत। कालिय को यह बात ज्ञात थी,इसीलिए वह इस कुण्ड मे जो बाद म 'कालियदह क नाम से प्रसिद्ध हुआ,आकर बेखटक रहन लगा। श्री कष्ण ने कालिय को अभय दान देकर पुन रमणक द्वीप म भेज दिया।[1]

'अग्निपुराण' म केवल इतना ही वणन आता है कि वृन्दावन जाकर कष्ण ने यमुना के दह म कालिय नाग को जीता और उसे वहा से निकाल दिया।[2]

'ब्रह्मवैवर्त्त पुराण'[3] म कालिय दमन की कथा अधिकाशत श्रीमदभागवत क अनुसार वर्णित है। कुछ विशेषताएँ ये हैं—(१) कालियदह का विषयुक्त जल पीने से कुछ गौआ की मत्यु हो जाती है कष्ण अपन योग बल स उन्हें जिला देते हैं फिर कालिय के स्थान पर जा कदते हैं। (२) कालिय नाग की पत्नी का, जो कष्ण की स्तुति करती है यहाँ सुरसा नाम लिखा है। कष्ण उसे अपनी धम पुत्री बना लेत हैं और कालिय को धम जामाता। व यह कहते हैं कि इसक फना पर नत्तन करते समय मेरे जो चरण चिह्न उन पर बन गये हैं उनको देखकर कालिय का शत्रु गरुड भी उसको प्रणाम करेगा। कालिय नाग और गरुड म शत्रुता का कारण गरुड को सौभरि ऋषि का शाप, जिसके कारण व कालिय दह म नही आ सकते थे और इसी कारण कालिय वहाँ रहता था आदि अन्तकथाओ को भी यहा स्पष्ट किया गया है किन्तु श्रीमदभागवत की अपेक्षा यहाँ उनम कोई नवीनता नही।

---

१ वही १ ।१७।१ २
२ अग्निपुराण १२।१८ १८१/२
ब्रह्मवैवर्त्त पुराण कृष्ण जन्म खण्ड अ १६

(१२) कृष्ण का गोपियो के साथ महारास

कृष्ण पर व्रज की गोपिया की अनुरक्ति का प्रमाण कृष्ण द्वारा की गयी चीर-हरण लीला[1] म तो मिलता ही है, परन्तु सबसे अधिक प्रमाण उस महारास लीला[2] मे मिलता है जिसम गोपियाँ कृष्ण प्रेम के आगे लोक मर्यादा को त्यागकर सर्वात्म-समपण की भावना से रास-लीला मे कृष्ण के साथ सम्मिलित हुई थी। शरद ऋतु की उजाली रात मे, जब कि वन का कोना-कोना स्निग्ध, धवल चाँदनी से मधुस्नात हो रहा था, तब कृष्ण ने अपनी बाँसुरी पर व्रज सुन्दरियो के मन को हरनेवाली कामबाज 'क्ली' की अस्पष्ट एव मधुर तान छेड दी। कृष्ण ने गोपिया के मन का तो पहले से ही अपने वश मे कर रखा था, वशी की मधुर तान ने तो उनका भय, सकोच, धैय मर्यादा आदि सब कुछ छीन लिया। वशी की ध्वनि सुनते ही, गोपियाँ एक-दूसरे को सूचना दिये बिना ही, घरवालो के चोरी छिपे, अपने हाथ का सब कुछ काम छोड कर, वन की दिशा म चल पडी। उनक पिता भाई, पति-परिवार ने रोकने की भी चेष्टा की, पर वे न रुकी और वशी क वशीकरण से खिचती हुई वहाँ आ गयी जहाँ कृष्ण अपनी वशी की धुन मे उनका आह्वान कर रहे थे। कृष्ण ने गोपिया के साथ यमुना-पुलिन पर क्रीडा की। कृष्ण का प्रम पाकर गोपिया ने अपने को ससार की स्त्रियो म श्रेष्ठ समझा। उन्हे कुछ मान भी हो आया। उनका गव दूर करने के लिए कृष्ण कुछ समय के लिए अतर्द्धान हो गय। प्रेम-मतवाली गोपियाँ कृष्णमय हो गयी। वे कृष्ण की गति मति भाव भगी का अनुकरण करती हुई एक वाडी मे जाकर कृष्ण को ढूढने लगी लता वर्क्षों से कृष्ण का पता पूछने लगी। कृष्ण के विरह म वह रोने-गाने और प्रलाप करने लगी। तभी कृष्ण उनके बीच प्रकट हो गये। उनके साथ उन्होने रासक्रीडा आरम्भ की। दो-दो गोपिया के बीच एक एक कृष्ण प्रकट हो गये। एक गोपी और एक कृष्ण यही क्रम था। सभी गोपियाँ ऐसा अनुभव करती थी कि उनके प्यारे कृष्ण उन्ही के पास हैं। गोपियो के साथ कृष्ण नाचने लगे। कृष्ण अपने भुजपाश को गोपिया के गले मे लपेटे हुए थे। नाचते-नाचते गोपिया के केश, वस्त्र और कचुकी के बधन शिथिल पड गये। फिर कृष्ण यमुना-जल म कूद पडे। गोपियाँ भी उनक पीछे पीछे कूद पडी। गोपिया के साथ कृष्ण ने कुछ दर तक जल क्रीडा की। फिर वे गोपिया के साथ घिरे हुए यमुना तट के उपवन मे गये और वहा उन्होने गोपियो क साथ विहार किया[3]।

'ब्रह्मवैवर्त पुराण'[4] में रास लीला का जो वणन हुआ है, उसमे कृष्ण की मुरली के मादक शब्द को सुनकर कई हजार गोपिया का कृष्ण के पास खिचे आने का उल्लेख है। राधा सुशीला आदि ३३ सखियों के साथ सुशीला अपनी १६ हजार सखिया के

---

१ भागवत पुराण १०। २२
२ वही १०। २६ ३३
६ वही १०। ३३ ।१ २६
४ ब्रह्मवैवर्त पुराण कृष्ण जन्मखण्ड अ २८ २६

वह यह कि इस प्रसग मे राधा का उल्लेख अन्य गोपियो के साथ हुआ है। राधिका और अन्य गोपियो के सो जाने के बाद रात के तीसरे पहर म कृष्ण मथुरा क लिए गमन करते हैं ताकि उनको जाता दखकर राधा तथा गोपियाँ दु खी न हो[१]।

(१४) कृष्ण द्वारा कुब्जा का कूबड ठीक कर देना

कस की एक दासी कुब्जा क कूबड को कृष्ण द्वारा ठीक कर दिय जान की घटना का वणन 'महाभारत' म नही आता किन्तु उसके खिल भाग हरिवश पुराण[२] मे आता है। वत्त इस प्रकार है जब कृष्ण और बलराम गोकुल से आकर मथुरापुरी (मधुपुरी) म प्रवेश कर रहे थे तब सडक पर उन्होने एक कुब्जा (कुबडी) स्त्री को देखा जो अपने हाथो म अनुलेपन (अगराग) का एक पात्र लिये हुए थी[३]। कृष्ण ने उस सम्बोधित करके पूछा कि वह किसके लिए अगराग आदि ले जा रही है। कृष्ण को देखते ही कुब्जा उन पर रीझ गई और उसने अपने हाथ का अगराग दोनो भाइयो को अनुलेपन क निमित्त दे दिया तथा कस की प्यारी दासी कहकर अपना परिचय दिया। उसने यह भी कहा—आओ मेरे घर तुम मेरे हृदयवल्लभ हो[४]। कुब्जा क मधुर व्यवहार से प्रसन्न होकर लीलाविधि को जानने वाले श्रीकृष्ण ने अपने हाथ की दो अगुलियो स कुब्जा के कूबड के मध्य भाग को धीरे से दबाया। इतने से ही उसका कूबड सीधा हो गया[५]। अपने कूबड का बठा दख वह सुन्दरी कुब्जा अत्यन्त अनुरागवती होकर कृष्ण स बोली—'प्रियतम ! अब तुम कहाँ जाओगे ? मैंने तुम्हें रोक लिया यही रहो और मुझे अगीकार करो। कृष्ण ने मुस्कराते हुए कामपीडित कुब्जा को वही छोड दिया और दोनो भाई कस क राजभवन की ओर चले[६]।

ब्रह्म पुराण[७] म वर्णित कुब्जोद्धार आख्यान पूणत हरिवश पुराण मे वर्णित आख्यान क समान है।

'पद्म पुराण'[८] म कुब्जा का कस का दासी होना नही लिखा है, परन्तु यह उल्लिखित है कि कुब्जा ने चदन पात्र को कृष्ण के अर्पित कर दिया और कृष्ण ने कुब्जा को ऊपर खीचकर उसका कूबड ठीक कर दिया तथा रसिक भाव से उसकी ओर देखा।

---

१ ब्रह्मवैवर्त्त पुराण कृष्ण जन्म खण्ड अ० ७ ७१
२ हरिवश पुराण विष्णु पव २७।२५ ३१
३ वही विष्ण २७।२५
४ वही विष्ण २७।२८ ४
५ वही विष्ण २७।३५
६ वही विष्णु २७।३६ ३६
७ ब्रह्म पुराण १९३
८ पद्म पुराण उत्तरखण्ड २४५।३३९ ,४

'विष्णु पुराण' मे कुब्जा पर कृष्ण की कृपा का आख्यान सरस रूप से वर्णित है[1]। उसका नाम अनेकवक्रा' सूचित हुआ है। कुब्जा बताती है कि कस को उसके सिवा किसी अन्य का पीसा उबटन पसन्द नही पडता, और वह कस की विशेष कृपापात्र है। शेष बातें हरिवश, ब्रह्म और पदम पुराणो की भाँति ही हैं।

'श्रीमदभागवत पुराण' म भी कुब्जा (त्रिवक्रा) पर श्रीकृष्ण द्वारा कृपा करने और उसके कृष्ण पर अनुरक्त होने का वणन हुआ है और वह 'विष्णु पुराण तथा पूर्वोल्लिखित पुराणा के समान है। यहाँ भी श्रीकृष्ण अपने चरणो से कुब्जा के पैर के दोना पजे दबा लेते हैं और हाथ की दो अगुलियो से उसके चिबुक का पकड कर उस ऊपर का उचका देते हैं। उचकाते ही तीन जगह स टेढा उसका शरीर सीधा हो जाता है और वह सुदरी युवती बन जाती है[2]। कुब्जा का मन रखने और उसके साथ रस केलि करने के लिए कृष्ण के उसके घर जाने का उल्लेख श्रीमदभागवत म आया है[3]।

'अग्नि पुराण म उल्लेख आया है कि अनुलेपन देने के कारण कृष्ण न कुब्जा को सीधा कर दिया[4]।

ब्रह्मववत्त पुराण[5] का कुब्जा प्रसग अब तक वर्णित कुब्जा प्रसगो से इस अथ मे विशिष्ट है कि यहा जो कुब्जा कृष्ण को मथुरा के राज माग पर मिलती है वह कोई नवोढा नही, प्रत्युत वद्धा एव हाथ म लकुटी लिये कुबडी है। उसने कृष्ण का चन्दन पुष्प स सत्कार किया। कृष्ण ने उसके भाव से प्रसन्न होकर उसे सुदर रूप दे दिया, वह नवोढा भी हो गयी। कस का वध करने के अनन्तर कृष्ण कुब्जा के साथ प्रेम मिलन करने के लिए उसके घर भी गये।

(१५) कृष्ण द्वारा कस का वध

महाभारत[6] मे कृष्ण द्वारा कस वध का उल्लेख कृष्ण चरित वणन के प्रसग मे हुआ है। कृष्ण ने कस को मार कर उग्रसेन को राज-पद पर अभिषिक्त कर दिया। फिर, उन्होने अपने माता पिता देवकी वसुदेव का चरणस्पश किया। महाभारत के सभा पव म कस को कात्तवीय के समान पराक्रमी बताया गया है। भूमण्डल के सब राजा उसस उद्विग्न रहते थ। ऐसे कस को भी बालक कृष्ण ने मार डाला। कस के मत्रिया और परिवार को भी उन्होने यमलोक भज दिया[7]।

---

१ विष्णु पुराण ५।२०।१ १३
२ भागवत पुराण १०।४२।१ १२ १/२
३ वही १०।४८।१ ११
४ अग्नि पुराण १२।२४
५ ब्रह्मववत्त पुराण कृष्ण जन्म खण्ड, अ ७२
६ महाभारत सभा पर्व अ० ३८।२९ के बाद दाक्षिणात्य पाठ पृ० ८०१
७ वही प ८ ३ ८ ४

'हरिवंश पुराण' म भी कस सहारका वणन है[1]। कृष्ण और बलराम जब कुवलयापीड और चाणूर तथा मुष्टिक आदि आ ध्रदेशीय मल्ला का मारते हुए कस के समीप पहुँचे तब कृष्ण को देखते ही कस के चेहरे पर पसीने की बूदें झलक आयीं[2]। उसने नन्द गोप और वसुदव आदि को अपश द कहना प्रारम्भ कर दिए। वसुदेव तथा नन्द पर आक्षेप आते ही कृष्ण कुपित हो उठे। उन्होने लपककर कस के केश पकड लिये और उसे मच स गिराकर रगभूमि म घसीटना आरम्भ किया। इतना घसीटा कि उसका शरीर निर्जीव हो गया[3]। उसका वध करके कृष्ण और बलराम अपने माता पिता के पास पहुचे और उनके चरणो मे प्रणाम किया। आनन्दातिरेक से देवकी क स्तनो स दूध की धार झरने लगी[4]।

ब्रह्मपुराण[5] और पदम पुराण[6] मे भी कस वध का उल्लेख कृष्णचरित वणन के प्रसग म किया गया है और उनकी घटनाओ म हरिवश से पूण साम्य है।

'विष्णु पुराण'[7] म कस वध का प्रसग तब उपस्थित हुआ है जब धनुष यज्ञ क धनुष का बात की बात म तोडकर कुवलयापीड हाथी को मार कर और तोशल, चाणूर एव मुष्टिक आदि मल्लो को यमलोक पहुचा कर कृष्ण सीधे कस पर टूटते हैं[8]। कृष्ण ने मच पर चढकर कस के केशो का पकड लिया और उसे खींचकर पथ्वी पर दे मारा। उसका मुकुट दूर जा गिरा। कृष्ण कस के ऊपर जा गिरे। उनक गिरते ही कस ने प्राण त्याग दिए[9]। फिर कृष्ण ने मृतक कस के केश पकडकर उसकी देह को रगभूमि म घसीटा। घसीटन स रगभूमि म दरार के समान परिखा बन गयी। कस के भाई सुमाली ने आक्रमण किया, तो कृष्ण ने उसे भी मार डाला। कस को मरा देख रगभूमि म उपस्थित जनता हाहाकार कर उठी। कृष्ण ने अपन माता पिता के चरण स्पश किए।

श्रीमदभागवत पुराण[1] म भी कस वध या कस उद्धार का उल्लेख आता है। जब चाणूर, मुष्टिक कूट शल और तोशल— कस के ये पाँचो पहलवान कृष्ण-बलराम द्वारा पछाडे और मारे जा चुके तब कस भयभीत होने के साथ साथ इन दोना भाइया से चिढ गया और लगा अनगल प्रलाप करने। कृष्ण को सामने पाते ही, उसने कृपाण का वार करने के लिए पतरा बदलना आरम्भ किया किन्तु कृष्ण ने झपट कर उसे पकड लिया, उसे मच स गिरा दिया उस पर कूद पडे। उनके कूदते ही कस मर गया। उसक शव

१ हरिवश पुराण विष्ण पव ६ ८८
२ वही विष्ण २ ।६३ ६४
३ वही विष्ण ३ ।७१ ८८
४ वही विष्णु २ ।६६ ६
५ ब्रह्म पुराण अ १९३
६ पदम पुराण उत्तर खण्ड २४५।३७६ ३८
७ विष्णु पुराण ५।२ ।८२ ९१
८ वही ५।२ ।७९ ८
९ वही ५ २ ।८५ ८७
१ भागवत पुराण १ ।४४।३ ३८

को उन्होंने रंगभूमि में खूब घसीटा।

'देवी भागवत पुराण' में देवकी वसुदेव विवाह के अवसर पर इस आकाश वाणी का वर्णन है कि 'देवकी के आठवें गर्भ से उत्पन्न संतान के हाथों तेरा (कंस का) वध होगा'[1]। कृष्ण जब गोकुल में पूतना, केशी आदि का वध कर देते हैं तब कंस धनुष यज्ञ का आयोजन करता है और उसे देखने के बहाने से अक्रूर के द्वारा कृष्ण को मथुरा बुलाता है। वहाँ आकर कृष्ण कंस के विश्वासपात्र महाबली मल्ल चाणूर, मुष्टिक, शल, तोशल आदि का वध कर देते हैं। कंस का भी केश पकड़ कर खींच लेते और मार डालते हैं। तदुपरान्त अपने माता पिता को बन्दीगृह से मुक्त करते हैं और उग्रसेन को राज्य दे देते हैं[2]।

'अग्नि पुराण' में कृष्ण द्वारा कंस को मारकर उसके पिता उग्रसेन को राज्य देने का उल्लेख है[3]।

(१६) कृष्ण द्वारा उद्धव को ब्रज भेजना

कृष्ण का सन्देश लेकर उनके सखा और मंत्री उद्धवजी के गोकुल आगमन का उल्लेख श्रीमद्भागवत पुराण[4] में हुआ है। एक दिन कृष्ण ने उद्धवजी से कहा कि गोपियाँ मेरे वियोग में बहुत दुखी हैं, मेरे लिए उन्होंने पति पुत्र आदि सभी सगे सम्बन्धियों को छोड़ दिया है। मैंने उनसे कह रखा है कि मैं आऊँगा। इसी आधार पर वे जीवित हैं। अतः तुम जाकर उनको बोध दो।

उद्धव कृष्ण का संदेश लेकर नन्दगाँव गए। रात को नन्द बाबा ने उनका यथोचित सत्कार किया। अगले दिन प्रातः गोपियाँ को नन्द जी के घर के आगे एक स्वर्ण रथ खड़ा देख उत्सुकता हुई। उन्होंने उद्धवजी को देखा जो कृष्ण के समान रूप रंग वाले थे और जिन्होंने पीताम्बर धारण कर रखा था। कृष्ण द्वारा बाल्यावस्था और किशोरावस्था में की गयी लीलाओं को याद कर करके गोपियाँ उद्धव के सामने रोने लगी। उसी समय एक भौंरा कहीं से उड़ता हुआ आ गया। एक गोपी ने उसी को लक्ष्य करके कृष्ण को उपालम्भ देना आरम्भ किया। भौंरे के मिस उसने कृष्ण को ही कपटी, रस लोभी और प्रेम वंचक कहा। गोपियों ने अपनी यह आशंका उद्धव के सम्मुख व्यक्त की कि कृष्ण नागर स्त्रियों के रंग रूप, हाव भाव से छले जा चुके होंगे, उन्हें ब्रज की गँवार ग्वालिनों की याद भला क्यों आती होगी?

गोपियों के प्रेमातिरेक से उद्धव भी अप्रभावित न रह सके। उन्होंने गोपियों के सर्वात्म समर्पण के लिए उनकी प्रशंसा की और कृष्ण का संदेश उनको सुनाया। कृष्ण

१ देवी भागवत पुराण ४।२०।६३ ६५
२ वही ४।२४।६ १४
३ अग्नि पुराण १२।२७
४ श्रीमद्भागवत पुराण १०।४६ ४७

ने महारास की रात्रि का स्मरण कराकर गोपियों को आश्वासन दिया था कि मैं फिर तुमसे मिलूंगा। गोपियाँ कृष्ण को भूलने में तो सर्वथा असमर्थ थीं किन्तु उद्धव के समझाने-बुझाने और कृष्ण के संदेश से उनकी विरह-व्यथा कुछ कम हो गयी। उद्धवजी कई महीनों तक ब्रज में ही रहे और कृष्ण की अनेक लीलाओं की चर्चा करके अपने और गोप गोपियों के मन को आनंदित करते रहे। गोपियों का कृष्ण के प्रति अनन्य भाव देखकर उनके मुंह से हठात निकल पड़ा— 'इस पृथ्वी पर केवल इन गोपियों का ही शरीर धारण करना श्रेष्ठ और सफल है'। भक्ति भाव की छूत उनको भी इतनी लगी कि वे सोचने लगे क्या ही अच्छा होता कि मैं वृन्दावन धाम की कोई झाड़ी, लता अथवा औषधि ही बन जाता। उन्होंने गोपियों के भाग्य को सराहा, जिन्होंने स्वजन सम्बन्धियों तथा लोक वेद की मर्यादा का परित्याग करके भगवान कृष्ण के साथ तन्मयता और प्रेमभाव स्थापित कर लिया था। नन्द बाबा के ब्रज में रहने वाली गोपांगनाओं की चरण धूलि को उन्होंने बार बार प्रणाम किया। उद्धवजी मथुरा लौट आये और ब्रजवासियों में, विशेषतया गोपियों में उन्होंने प्रेममयी भक्ति का जो उद्रेक देखा था उसका वर्णन श्री कृष्ण से किया।

ब्रह्मवैवर्त्त पुराण[1] में भी उद्धव के ब्रजगमन और वहाँ कृष्ण के प्रति राधा और गोपियों के भक्ति भाव को देखकर प्रभावित होने आदि का वर्णन आया है। उद्धव के वृन्दावन में पहुँचने तक नन्द मथुरा से लौटे नहीं होते। उद्धव राधा से कहते हैं कि कृष्ण, बलराम जी और नन्द जी सहित शीघ्र ही यहाँ आएंगे। प्रिय का यह समाचार जानकर राधा उद्धव को अपनी रत्नजटित अंगूठी दे देती हैं। राधा मूर्च्छित हो जाती हैं और सुध आने पर कृष्ण को मथुरा से लाने को कहती हैं। उद्धव जब वृन्दावन से मथुरा लौटकर कृष्ण के पास अपनी ब्रज यात्रा का समाचार सुनाने जाते हैं तब भी यही कहते हैं कि हे कृष्ण ! राधा की आप में अनन्य भक्ति है उसको छोड़ना उचित नहीं। मैंने राधा से कह दिया है कि कृष्ण तुम्हारे पास शीघ्र ही आएंगे। कृष्ण रात को स्वप्न में गोकुल जाते हैं और राधा तथा ब्रजवासियों को प्रसन्न कर पुनः मथुरा आ जाते हैं।

(१७) कृष्ण का राधा और गोपियों से पुनर्मिलन

कृष्ण के मथुरा और वहाँ से द्वारका चले जाने के बाद क्या उनका राधा और गोपियों से पुनः मिलन हुआ? लोकश्रुति और काव्यों के अनुसार तो एक बार गोकुल से मथुरा जाने के बाद कृष्ण फिर वहाँ नहीं लौटते और राधा तथा गोपिकाएं उनके विरह में सदैव संतप्त रहती हैं। देखें पुराणों का साक्ष्य इस सम्बन्ध में क्या है।

'हरिवंश पुराण'[2] में ऐसा वर्णन आता है कि यादवों और शाल्वप्रदेश के राजा

---

१ ब्रह्मवैवर्त्त पुराण कृष्ण जन्म खण्ड अ ९१ ९८
[illegible]

ब्रह्मदत्त के पुत्रो हस और डिम्भक के मध्य गोवद्ध न पवत के पास युद्ध हुआ था, क्योकि हस और डिम्भक ने राजा ब्रह्मदत्त द्वारा किये जा रहे राजसूय यज्ञ के लिए द्वारका धीश कृष्ण से दुस्साहसपूवक कर रूप मे नमक की माँग की थी।[१] उस युद्ध म कृष्ण ने हस को मार दिया और डिम्भक ने आत्महत्या कर ली। उस युद्ध से अवकाश पाकर कृष्ण और बलराम गोवद्ध न पवत पर एक वक्ष की छाया मे लेटे हुए अपने बाल्य जीवन की स्मतिया मे खोये हुए थे, कि उनके आगमन का समाचार पाकर उनसे भेंट करने के लिए गोप गोपिया सहित नन्द यशोदा आए। वे मक्खन, दही, खीर, खिचडी, मोरपख के बाजूबन्द आदि वस्तुओ की सौगात लेकर कृष्ण बलराम के समीप गये[२] कृष्ण ने गोप गापियो, गायो बछडो, गोरस-गोचर आदि सबका समाचार ऐसे पूछा मानो उनको छोड कर वे कुछ समय पूव ही आय हा। नन्द ने कृष्ण से कहा कि मुझे एक दु ख व्यथित किये रहता है कि मैं तुम्हें भर आँख देख नही पाता।[३]

परन्तु इस मिलन गोष्ठी मे राधा' का कही नाम नही आता। कृष्ण से मिलने वालों म 'राधा' नाम की कोई गोपी नही न कृष्ण ने अलग स उसका समाचार ही पूछा है। इनका कारण यही जान पडता है कि महाभारत के रचना काल मे राधा को कृष्ण के जीवन मे वह स्थान नही मिल पाया था, जो बाद मे पुराणा न दे दिया।

"श्रीमद्भागवत पुराण"[४] मे कृष्ण बलराम के पुन गोप गोपियो से मिलन का उल्लेख आया है। एक बार जब सवग्रास सूयग्रहण लगा तब बहुत से राजा और प्रजा वग के लोग कुरुक्षेत्र स्थित समन्तपचक तीथ म एकत्र हुए। उस अवसर पर वहाँ मत्स्य उशीनर कोसल विदभ, कुरु, स जय काम्बोज, केकय, मद्र, कुन्ति, आनत एव केरल आदि बहुत से देशो के सैंकडो नरपति आय थे। भीष्म पितामह धृतराष्ट्र दुर्योधनादि कौरव युधिष्ठिर आदि पाण्डव, गान्धारी, कुन्ती आदि बहुत से व्यक्ति वहा पहुचे। श्रीकृष्ण वसुदेव, उग्रसेन देवकी, बलराम प्रदयुम्न अनिरुद्ध आदि परिजना के साथ द्वारका से उस तीथ म गये। कृष्ण-बलराम का वहाँ आगमन सुनकर न द यशादा तथा बहुत-से गोप और गोपियाँ उत्कण्ठापूर्वक वहाँ पहुँची। नन्द-वसुदेव मिले यशादा से देवकी तथा राहिणी मिलीं। सबन एक-दूसरे का कुशल-क्षेम पूछा। देवकी और रोहिणी ने अपने पुत्रों का स्वपुत्रवत पालन करने के लिए यशोदा के प्रति आभार प्रकट किया। गोपिया ने भा चिरकाल के पश्चात अपन मोहन को देखा और मन ही मन उनका आलिगन किया। कृष्ण न जब देखा कि गोपियाँ उनसे तादात्म्य प्राप्त करना चाहती हैं, तब व एका त म उनके पास गये, उनको हृदय से लगाया उनका कुशल मगल पूछा और अपने प्रेम के प्रति उन्हें आश्वस्त किया। कृष्ण ने अपनी मधुर और रसपूण बातो स गोपियो के चित्त को परितोष दिया।[५]

१ वही भविष्य पव ११८।२५ २६
२ वही भविष्य पव १३०।१ ३
३ वही भविष्य पव १३०।६ १२
४ भागवत पुराण १०। २
५ वही १ ।८२।३२ ४५

अक्रूर द्वारा मथुरा ले जाये जाने के बाद कृष्ण का गोकुल के गोप-गोपियों से पुनर्मिलन का यही एक वर्णन 'श्रीमद्भागवत पुराण' में मिलता है किन्तु कृष्ण का पुनः दर्शन प्राप्त करने वाली गोपियों में राधा का कहीं नाम नहीं आता।

'ब्रह्मवैवर्त पुराण' में कृष्ण के साथ राधा और गोपियों का मिलन दो प्रकार से होने का उल्लेख मिलता है—एक स्वप्न दशा में, दूसरे प्रत्यक्षतः। राधा और गोपियों की सगुण कृष्ण भक्ति में सराबोर होकर जब उद्धव ब्रज से लौटते हैं तब कृष्ण से अपनी ब्रज-यात्रा का समाचार सुनाते हुए कहते हैं कि मैंने राधा से कह दिया है कि कृष्ण तुम्हारे पास शीघ्र ही आएंगे। अपने मित्र के वचन का सम्मान करते हुए कृष्ण रात को स्वप्न में गोकुल जाते हैं और राधा तथा ब्रजवासियों को प्रसन्न कर पुनः मथुरा आ जाते हैं[1]। प्रत्यक्ष मिलन के सन्दर्भ निम्नलिखित हैं

इसी पुराण में एक अन्य स्थल पर[2] उल्लेख है कि श्रीदामा के शाप से मुक्त होने के बाद राधा कृष्ण से पुनः मिलती हैं और कृष्ण पुनः राधा के साथ चौदह वर्ष तक रास क्रीड़ा करते हैं।

'ब्रह्मवैवर्त पुराण' में ही अन्यत्र[3] यह उल्लेख है कि अक्रूर के साथ कृष्ण के मथुरा जाने का जब समय उपस्थित होता है तब राधा एक दुःस्वप्न देखती हैं। कृष्ण राधा को सान्त्वना देते हैं कि श्रीदामा गोप के शापवश कुछ समय के लिए मेरा-तुम्हारा वियोग होगा, किन्तु फिर हम दोनों का मिलन होगा। इसी पुराण में एक दूसरी जगह[4] उल्लेख आता है कि राधा के साथ रासक्रीड़ा करने के बाद जब कृष्ण सो जाते हैं, तब ब्रह्मा उन्हें नींद में कहते हैं कि उठिए भक्त श्रीदामा के शाप का स्मरण कर सौ वर्ष तक राधा का बन्धन छोड़िए। गोलोक में पुनः उससे आपका मिलन होगा।

'ब्रह्मवैवर्त' में ही अन्यत्र[5] कृष्ण मथुरा से नन्द को विदा करते समय उनसे कहते हैं कि मेरी प्राणाधिष्ठात्री देवी राधा के साथ सौ वर्ष तक मेरा वियोग होगा फिर मैं उसके साथ गोलोक जाऊँगा, वहाँ मेरा उसका मिलन होगा।

किन्तु 'ब्रह्मवैवर्त पुराण' में ही यह वर्णन भी आया है कि सौ वर्ष बीत जाने पर जब राधा श्रीदामा के दिये हुए शाप (मानव-योनि में आकर ब्रजांगना गोपी बनने का) से मुक्त हुई, तब उन्होंने सिद्धाश्रम में आकर गणेश का पूजन किया। वहीं नन्द, यशोदा अन्य गोकुलवासी तथा कृष्ण भी आये थे। कृष्ण राधा का मिलन हुआ। वहीं से कृष्ण सबके साथ द्वारका आये। द्वारका से नन्द-यशोदा को कृष्ण ने वृन्दावन भेजा। स्वयं भी राधा के आग्रह पर वे वृन्दावन गये। वहाँ वन-उपवनों में गोपियों और राधा के साथ विहार किया यशोदा आदि से मिले। वहीं भाण्डीर वट के नीचे जहाँ पहले कभी उन्हें

---

1 ब्रह्मवैवर्त पुराण कृष्ण जन्म खण्ड अ० ६१ ६८
2 वही कृष्ण जन्म खण्ड अ० २४
3 वही कृष्ण जन्म खण्ड अ ६७
4 वही कृष्ण जन्म खण्ड अ ९९
5 वही कृष्ण जन्म खण्ड अ ७३

ब्राह्मण स्त्रियो द्वारा अन्न दिया गया था, कृष्ण ने राधा, नन्द, यशोदा और समस्त गोप गोपियो को एकत्र किया। स्वर्ग से विमान आया। सभी लोग उसमे बैठकर अपने नश्वर शरीरो को छोड गोलोक चले गये। इस प्रकार सबको सालोक्य मोक्ष देकर कृष्ण ने वृन्दावन को गोप गोपियो से शून्य देखकर अमृत वृष्टि से पुन गोप गोपिकाओ को जीवित कर दिया।[1]

(१८) कृष्ण द्वारा सादीपनि के पुत्र को यमपुर से वापस लाना—गुरु-दक्षिणा चुकाना

कृष्ण द्वारा अपने गुरु सादीपनि के अपहृरित मृत पुत्र को जीवित लाकर गुरु-दक्षिणा के रूप मे दिये जाने की घटना का उल्लेख पहले पहल 'महाभारत' म प्राप्त होना है।[2] कथा इस प्रकार है—

बलराम जी के साथ जब कृष्ण मथुरा आ गये और कस का मार कर उग्रसेन को वहा का राजा बना दिया, तब दोनो भाई विद्या प्राप्ति हेतु सादीपनि गुरु के यहाँ गये। कृष्ण और बलराम ने चौसठ दिन म ही चारो वेदो और छओ शास्त्रो का ज्ञान प्राप्त कर लिया तथा अन्य कलाएँ भी सीख ली। बारह दिन मे उन्होने गज और अश्व-विद्या तथा पचास दिन मे समग्र धनुर्वेद सीख लिया। जब उनका अध्ययन समाप्त हो गया, तब उन्होने अपने गुरु से दक्षिणा मागने को कहा। सादीपनि ने यह गुरु दक्षिणा माँगी— समुद्र मे नहाते समय मेरे पुत्र को तिमि नामक जल जन्तु पकड कर ले गया और खा गया। तुम दोनो उस मेरे मरे हुए पुत्र को जीवित करके यहाँ ला दो।' श्रीकृष्ण और बलराम ने समुद्र मे पठकर उस असुर को मार गिराया जिसने उनके गुरु पुत्र को मारा था। कृष्ण की कृपा से सादीपनि का पुत्र, जो बहुत समय से यमलोक मे जा चुका था पुन जीवित होकर पूर्वशरीर मे खडा हुआ। बलराम और श्रीकृष्ण ने अपने गुरु को उनका खोया पुत्र ला सौंपा।

हरिवश पुराण[3] मे भी यह कथा वर्णित है। महाभारत के सभापर्व की कथा से इसका कुछ अधिक विस्तार है। घटनाए तो इसमे सभापर्व के सदृश ही हैं किन्तु इसमे कुछ विशेष सूचनाएँ प्राप्त होती हैं—जसे, (१) सादीपनि काशिदेश के रहने वाले थे और उनका आश्रम अवन्तीपुरी (उज्जयिनी) म था। (२) सादीपनि गुरु का इकलौता पुत्र तीर्थयात्रा के अवसर पर तिमि' नामक मत्स्य द्वारा मार डाला गया था। (३) कृष्ण और बलराम दोनों उसे ढूढने नही जाते, अकेले कृष्ण जाते हैं।[4] (४) समुद्र ने

१ वही कृष्ण जन्म खण्ड अ० १२१ १२७
२ महाभारत सभा पर्व ३८।२९ के बाद दाक्षिणात्य पाठ पृ० ८०२
३ हरिवश पुराण विष्णु पर्व अ ३३
४ वही विष्णु, ३३।१३

कृष्ण को दर्शन दिया और उसी ने बताया कि सांदीपनि मुनि के पुत्र को पंचजन नामक एक दैत्य ने तिमि रूप धारण कर अपना ग्रास बना लिया है। कृष्ण ने पंचजन को मार डाला, पर वहाँ उन्हें गुरु का पुत्र नहीं मिला।[1] (५) पंचजन के यहाँ कृष्ण को उसका एक शंख मिला जिसे कृष्ण ने अपने उपयोग में ले लिया। वही उनका प्रिय शंख 'पाञ्चजन्य' कहलाया।[2] (६) पंचजन के यहाँ जब सांदीपनि का पुत्र नहीं मिला तब कृष्ण उसे ढूँढ़ने यमलोक पहुँचे। वहाँ यमराज ने जब उसे लौटाने से इंकार कर दिया तब यमराज से कृष्ण का युद्ध हुआ।[3] युद्ध में यमराज की पराजय हुई। यमराज ने सांदीपनि पुत्र को लौटा दिया। कृष्ण ने अपनी दिव्य शक्ति से उसे पूर्ववत् जीवित कर दिया।[4] उसे लाकर गुरु सांदीपनि को सौंप दिया। गुरु ने कृष्ण की भूरि भूरि प्रशंसा की। कृष्ण और बलराम गुरु की आज्ञा से मथुरा लौट आये।

'ब्रह्मपुराण' में इस प्रसंग का कोई उल्लेख नहीं है किन्तु पद्म पुराण में केवल एक श्लोक में इसका उल्लेख है कि गुरु सान्दीपनि से विद्यार्जन करने के उपरान्त उनके मृत पुत्र को लाकर कृष्ण ने उनकी गुरु-दक्षिणा चुकायी[5]।

'विष्णु पुराण' में भी अपने उपनयन-संस्कार के उपरान्त कृष्ण और बलराम का काशी में उत्पन्न और अवन्तीपुरवासी सान्दीपनि मुनि के पास विद्याध्ययन के लिए जाने चौसठ दिन में ही सब शास्त्र और अस्त्र विद्या का प्रयोग सीख लेने तथा गुरु दक्षिणा के रूप में गुरु सान्दीपनि के मृत पुत्र को जीवित करके ला देने का वर्णन हुआ है[6]। यहाँ पंचजन का समुद्र में शंख रूप में रहना, उसकी अस्थियों से उत्पन्न शंख—पाञ्चजन्य—को कृष्ण द्वारा ग्रहण कर लेना और कृष्ण बलराम दोनों का यमपुर जाकर सूर्य-पुत्र यम को जीतना एवं गुरु-पुत्र का शरीर-युक्त कर अपने गुरु को लौटा देने की घटनाएँ विशेष उल्लेखनीय हैं।

'श्रीमद्भागवत पुराण'[7] में वर्णित यह कथा अधिकांशतः हरिवंश और विष्णु पुराण' के समान ही है, किन्तु कुछ अन्तर भी है जैसे—(१) कृष्ण और बलराम दोनों मृत गुरु पुत्र की खोज में जाते हैं, अकेले कृष्ण नहीं। (२) इस सारे प्रयास में कृष्ण और बलराम को विरोध का सामना नहीं करना पड़ा—प्रभास क्षेत्र के समुद्र-तट पर उनके पहुँचते ही, उनको साक्षात् परमेश्वर जानकर, समुद्र अनेक प्रकार की पूजा सामग्री लेकर उनके सामने उपस्थित होता है और शंख के रूप में अपने भीतर रहने वाले एक असुर द्वारा सान्दीपनि के पुत्र को चुराये जाने की सूचना देता है। कृष्ण तुरन्त जल में जा घुसते हैं और शंखासुर को मार डालते हैं। (३) सान्दीपनि के पुत्र को

१ वही विष्णु ३३।१६
२ वही विष्णु० ३३।१७
३ वही विष्णु ३३।१६ २
४ वही विष्णु ३३।२१ २१ १/२
५ पद्म पुराण उत्तर खण्ड २४६। ४
६ विष्णुपुराण ५। २१। १८। १८ ३१
७ श्रीमद्भागवत पुराण १०। ४५।३१

शखासुर के पेट मे न पाकर जब दोनों भाई यमराज की पुरी सयमनी मे जाकर अपना शख बजाते हैं, तब यमराज उनके स्वागतार्थ उपस्थित होता है और उनके आदेशानुसार गुरु-पुत्र का ला देता है। यहाँ 'हरिवश' और 'विष्णु पुराण' की भाति यमराज से सघर्ष होने का उल्लेख नही आता। कृष्ण और बलराम उस जीवित बालक को लाकर अपने गुरु को सौंप देते हैं और इस रूप मे गुरु-दक्षिणा चुका कर गुरु की अनुमति प्राप्त कर मथुरा लौट आते हैं।

'अग्निपुराण' म केवल इतना ही उल्लेख है कि सान्दीपनि से शस्त्रास्त्र का ज्ञान प्राप्त कर कृष्ण ने उनको उनका पुत्र लाकर दे दिया। इस सिलसिले म उन्होंने पचजन दैत्य का जीता और यम की पूजा ग्रहण की[1]।

'ब्रह्मवैवर्त्त पुराण' म सान्दीपनि के आश्रम म जाकर कृष्ण का एक मास मे ही चारो वेदो का ज्ञान प्राप्त कर लेने और गुरु दक्षिणा मे उनके मृत पुत्र को यमलोक से लाकर, जीवित करके लौटाने तथा उसके साथ दशकोटि सुवर्ण मुद्राएँ भी देने का उल्लेख है[2]।

स्कदपुराण'[3] मे यह प्रसग हरिवश पुराण' के अनुसार ही वर्णित है। अन्तर इतना ही है कि पचजन यहाँ 'हरिवश' की भाँति तिमि के रूप म नही, शख के रूप म रहता है। हरिवश' मे पचजन के पास एक शख का होना उल्लिखित है जिसे कृष्ण ने ले लिया। स्कन्द पुराण म पचजन स्वय शख है। पचजन को मारकर कृष्ण ने उसकी खाल का अपना 'पाचजन्य' शख बना लिया। प्रभास-क्षेत्र मे गुरु पुत्र के समुद्र म डूबने का उल्लेख है। गुरु पुत्र पचजन के पास है इसकी सूचना कृष्ण को समुद्र देता है। जब पचजन को मारने के बाद उसके यहाँ कृष्ण को गुरु-पुत्र न मिला तब वे यमलोक गये। यम से लडने के लिए वरुण ने कृष्ण को रथ प्रदान किया।

(१९) कृष्ण द्वारा सुदामा का दारिद्र्य दूर किया जाना

'महाभारत' म कृष्ण के किसी ब्राह्मण मित्र सुदामा का उल्लेख नही मिलता। 'हरिवश,' 'ब्रह्म' पद्म, 'विष्णु,' 'शिव,' 'वायु' आदि पुराणों मे भी विप्र सुदामा का कोई उल्लेख नहीं है। सुदामा का दारिद्र्य दूर करने की कथा पहले-पहल श्रीमद्भागवत पुराण म ही मिलती है। कथा इस प्रकार है—

एक ब्राह्मण, जिनका नाम सुदामा था उन दिनों से ही कृष्ण के परम मित्र थे, जिन दिनों दोनो सान्दीपनि गुरु के पास साथ साथ विद्याध्ययन करते थे। कृष्ण तो कालान्तर

---

१ अग्निपुराण १२। ३, ३४
२ ब्रह्मवैवर्त्त पुराण कृष्ण जन्म खण्ड १०२
३ स्कन्द पुराण अवन्ती खण्ड अ० ३३
४ भागवत पुराण १०। ८ ८१

मे द्वारकाधीश हो गय किन्तु सुदामा एक अपरिग्रही, अनासक्त ब्राह्मण की भाति अपनी दीन हीन दशा म ही सन्तुष्ट रहते हुए अपनी पत्नी सहित काल यापन करत रहे। एक दिन उनकी पत्नी ने अपने दारिद्र्य स दु खी होकर, बार बार कहकर उनको श्री कृष्ण के पास द्वारका जाने क लिए प्रेरित किया। पत्नी ने पास-पडास स माँग कर चार मुट्ठी चिउडे ला दिये जिन्ह सौगात के रूप म कृष्ण का देन के लिए सुदामा ने अपने जीण शीण दुपटटे के एक छोर म बाँध लिया। वे चलते जाते थे और सोचते जात थे कि मुझे भगवान श्रीकृष्ण के दशन कसे प्राप्त होगे।[1]

द्वारका पहुँचकर सुदामा किसी प्रकार अनेक डयोढिया और द्वारपाला से रक्षित श्रीकृष्ण क अन्त पुर म पहुचे। उस समय कृष्ण रुक्मिणी के पलग पर विराज हुए थे और रुक्मिणी उनकी चरण सवा कर रही थी। सुदामा को देखते ही कृष्ण ने दौड कर उनको आलिगन म बाँध लिया उन्ह अपने पलग पर बठाया उनके चरण धाकर चरणोदक को सिर पर लिया और धूप दीप से उनका आरती उतारी। लक्ष्मी स्वरूपा रुक्मिणी सुदामा को चँवर डुला रही थीं। कृष्ण सुदामा अपने गुरुकुल जीवन क ससमरण सुन सुना रह थे। कृष्ण न सुदामा को स्मरण दिलाया कि कसे एक दिन गुरु पत्नी ने उन दोना को वन से लकडी लाने क लिए भेजा था कितने जोर का आधी-पानी उस दिन आ गया था—एक वक्ष क तले उन्हें भीगते ठिठुरते वह रात काटनी पडी थी और कस अगले दिन प्रात उनक गुरु कुछ शिष्या के साथ चिन्ताकुल होकर उन्हे ढूढन आय थे और उन लोगा की गुर भक्ति तथा कष्ट सहिष्णुता की प्रशसा की थी। गुरुकुल से लौटन क बाद सुदामा के जीवन क विषय म भी कष्ण ने जानकारी प्राप्त की। किन्तु सहज-सकोची और धन ऐश्वय के प्रति विरक्त सुदामा से अपने दु ख दारिद्र्य की चर्चा नही की। परन्तु अन्तर्यामी भगवान कष्ण स क्या छिपा था ? व जान गये थ कि सुदामा के आगमन का प्रयोजन क्या है[2]।

कष्ण ने सुदामा से पूछा—मित्र ! अपने घर से तुम मेरे लिए क्या उपहार लाये हो, देते क्या नही ? सुदामा त्रिलोकी के ऐश्वय के स्वामी भगवान का चार मुट्ठी चिउड की भेंट देते सकुचा रहे थे, अत इस प्रश्न के उत्तर म उन्हाने झेंपत हुए सिर नीचा कर लिया। अब कष्ण ने ही सुदामा की काख म दबी गठरी को छीन लिया और उसे खोल कर उसमे से एक मुट्ठी चिउडा लकर खाने लगे। उस खाकर कष्ण जसे ही दूसरी मुट्ठी भरने को हुए उनकी पत्नी रुक्मिणी जी ने उनका हाथ पकड लिया और कहा कि इहलाक और परलोक की सारी समृद्धि प्रदान करने के लिए यह एक मुट्ठी चिउडा ही बहुत है। सुदामा जी कष्ण का आतिथ्य सुख भोगते हुए जा उनके लिए अकल्पित था, वहाँ रात भर रहे। अगले दिन बिना कुछ माँगे वे द्वारका स विदा हुए। कष्ण ने भी प्रत्यक्ष रूप से उन्ह कुछ न दिया। माग म सुदामा कष्ण की मत्री उनके सौजन्य तथा

---

१ वही १ । ८ । ६१५

२ वही १० । ८ । १५४५

उनकी ब्राह्मण भक्ति की मन ही मन प्रशसा करते जाते थे[1]।

चलते चलते वे वहाँ आये, जहाँ उनकी मँडया थी। परन्तु यह क्या! वहाँ का तो नक्शा ही बदला हुआ था। रत्नजटित प्रासाद वहा खडे थे सुन्दर सरोवरा मे भाँति भाँति के पुष्प और पक्षी सुशोभित थे, सुन्दर-सुन्दर स्त्री पुरुष बन ठनकर इधर उधर घूम रहे थे। ब्राह्मण सुदामा सोचने लगे— मैं यह क्या देख रहा हूँ? यह किसका स्थान है? यदि यह वही स्थान हैं जहाँ मैं रहता था तो यह ऐसा कसे हो गया[2]? अपने पति का शभागमन सुनकर सुदामा की पत्नी स्वागत के लिए निकल आयी। उसका रूप और उसकी साज सज्जा भी पहले से बदली हुई दिखायी दी। उसने सोने का हार पहन रखा था। सुदामा ने अपने प्रासाद मे प्रवेश किया जो मणि माणिक, हाथी दात और स्वण रजत आदि के उपस्करा से सुसज्जित था। सुदामा ने विचारा कि उनकी यह अकस्मात समृद्धि श्रीकृष्ण की करुणा की देन है। उनकी प्रेम भक्ति कृष्ण के प्रति और बढ गयी[3]।

श्रीमदभागवत' के अतिरिक्त यह कथा अन्य किसी पुराण म नही मिलती।

(२०) कृष्ण से व्याध का प्रतिशोध लेना

'महाभारत के मौसल पव' म कृष्ण के जरा नामक एक व्याध से मारे जान का प्रसग उल्लिखित है। कृष्ण ने दुर्वासा की जूठी खीर को अपने सब अगा मे तो लपट लिया था पर भूल से अपने पैर के तलुवों मे नही लपेटा था। दुर्वासा के वरदान से उनका सारा शरीर (तलुवा को छोडकर) वज्र के समान दढ हो गया, किन्तु तलुवे निबल रह गये[4]। यादवा के आपस म लड भिडकर सवनाश को प्राप्त हो जाने और बलराम के परमधाम गमन के उपरान्त कृष्ण अपने पिता वसुदेव जो से विदा ले और अपनी रानिया की सुरक्षा के लिए शाघ्र द्वारका आने का सदेश अजुन के पास भेजकर, महायोग (समाधि) का आश्रय ले वन म पथ्वी पर लेटे हुए थे। तभी जरा नामक एक व्याध मगा का आखट करता आया। कृष्ण को भी एक मग समझकर उसने उन्हे अपने बाण का लक्ष्य बनाया। बाण कृष्ण के तलुवे म ही लगा, जो दुर्वासा की जूठी खीर न लपटने के कारण निबल रह गया था। कृष्ण मृत्यु के इस निमित्त को पाकर वकुण्ठ सिधार गये[5]।

किन्तु 'महाभारत' के इस प्रसग मे बहेलिया द्वारा अपना प्रतिशोध लने के लिए

---

१ वही १०।८१।१२
२ वही १।८१।२१२३
३ वही १०।८१।२४ ३८
४ अध्याय ४।८२ २४
५ महाभारत अनुशासन पव १५९।२५ ४४ १/२
६ वही मौसल पर्व अ० ४।८ २४

कृष्ण को मारने का अभिप्राय प्रकट नहीं होता।

'श्रीमदभागवत पुराण' म भी कृष्ण क परमधाम गमन के प्रसग म एक बहलिया द्वारा कृष्ण के पाँव म तीर मारने की घटना का उल्लेख हुआ है[1]। यदुवशियो के आपस म ही लड भिडकर कट मरने और बलराम द्वारा शरीर-त्याग के उपरान्त श्री कृष्ण ने भी अपने परमधाम जाने का निश्चय कर एक पीपल क वक्ष के नीचे आसन जमाया। जरा नामक व्याध ने उनके लाल लाल तलुवा को हरिण का थूथन समझकर तीर से उन्हें बींध दिया। परन्तु, जब उसे पता लगा कि उसने तो भगवान की ही हत्या कर डाली है तब वह बहुत घबडाया। कृष्ण से उसने क्षमा माँगी पश्चात्ताप प्रकट किया। कृष्ण ने उसे क्षमा ही नहीं किया उसे अपना दिव्य धाम भी प्रदान किया। वह व्याध विमान म बठकर सशरीर वकुण्ठ चला गया।

'ब्रह्मवैवत्त पुराण' म श्री कृष्ण के महाप्रयाण काल का वणन करते हुए कहा गया है कि कदम्ब मूल म लेटे हुए कृष्ण को एक व्याध ने अपने बाण का लक्ष्य बनाया। फिर, उस व्याध को कृष्ण ने वकुण्ठ भेज दिया।[2] लिंग पुराण म भी इस घटना का इसी रूप म वणन आया है।[3]

(२१) गरुड द्वारा स्वर्ग से अमृत-आनयन

प्रसिद्ध है कि गरुड जी अपने पखो पर स्वग से अमृत का घट रखकर लाये थे। अमृत की कुछ बूँद उनके पखो म लग गयी थी और उनके पख हिलाने से अमृत झडता था।

गरुड द्वारा स्वग से अमृत लाने की कथा 'महाभारत'[5] म इस प्रकार वर्णित है गरुड ने एक बार अपनी माता विनता से पूछा कि माँ मैं तुम्हारा क्या प्रिय करू? विनता ने कहा कि तुम मुझ कद्रू के दासीत्व से छुडाओ[6]। गरुड ने कद्रू के नागपुत्रो से

---

१ भागवत पुराण ११।३ ।२७ ४

२ ब्रह्मवैवत्त पुराण कृष्ण जन्म खण्ड अ १२७

लिग पुराण अ १६७

४ दे पदमावत सजीवनी टीका (वासुदेव शरण अग्रवाल) प २२६

५ महाभारत आदिपव २७ ३४

६ विनता द्वारा कद्रू का दासीत्व स्वीकार करने की कथा सक्षप में इस प्रकार है—कश्यप मनि की दो पत्नियाँ थी—कद्रू और विनता। कद्रू के पुत्र एक हजार नाग हुए और विनता के दो पुत्र वरुण और गरुड। एक बार कद्रू ने विनता से उच्च श्रवा घोडे की पूछ के रग को लेकर शत बदी। कद्रू कहती थी कि उसका रग काला है और विनता उसे सफेद बताती थी। यह निश्चय रहा कि जो शर्त हारे वह विजयिनी का दासीत्व स्वीकार करे। कद्रू ने अपने नागपुत्रों से अश्व की पूछ से लिपट जाने को कहा जिससे उसका रग काला दिखायी पडे। माता के शाप के डर से नागो ने एसा ही किया। कद्रू शत जीत गयी। और विनता को उसकी दासी बनना पडा। गरुड को भी अपनी माता के साथ ही कद्रू और उसके नागपुत्रों का वाहन होना पडा। यह कथा महाभारत आदि पव अ०१६ पदम पुराण' सष्टिखण्ड ४४।४० १८२ वायु पुराण ६६।३४३ ५० स्कद पुराण

अपनी माता को मुक्त कर देने की शत पूछी। नागो ने अमृत पाने पर विनता को दासीत्व स मुक्त कर देने की बात कही। माता की आज्ञा लेकर गरुड अमृत लाने चल दिये। स्वग से अमृत घट लेकर वे चले, तो इन्द्र ने अपने वज्र स उन पर प्रहार कर दिया, किन्तु गरुड का उससे बाल बाँका न हुआ। इन्द्र ने गरुड से मित्रता कर ली। इन्द्र ने उन्हें सपभक्षी होने का वर दिया। गरुड ने अमृत का घडा नागो को सौंप दिया, किन्तु तभी इन्द्र ने उसका अपहरण कर लिया। इससे लाभ यह हुआ कि अमृत नागो के हाथ भी न लगा और गरुड की माता दासीत्व से मुक्त हो गयी।

'पदम पुराण'[1] म यह कथा 'महाभारत' के अनुसार ही आयी है। 'वायु पुराण'[2] में कद्रू विनता के द्वेष भाव का तो उल्लेख है, परन्तु गरुड के स्वग से अमृत लाने की घटना का उल्लेख नहीं है। 'स्कदपुराण'[3] मे गरुड द्वारा स्वग स अमृत लाकर अपनी मा को दासीपन से मुक्त कराने की घटना का जो वणन है, वह 'महाभारत' और पदम पुराण' की कथा के लगभग समान है।

(२२) चन्द्रमा और सूर्य से राहु की शत्रुता

राहु द्वारा चद्रमा के ग्रसित होने का उल्लेख सवप्रथम अथववेद'[4] म मिलता है। 'ऋग्वेद'[5] म केवल इतना ही उल्लेख मिलता है कि चन्द्रमा म निरन्तर परिवतन होता रहता है। वाल्मीकि रामायण' म समुद्र मथन और उसके द्वारा प्राप्त अमृत के बँटवारे के समय देवो और दत्यो मे हुए सघष का वणन तो मिलता है,[6] किन्तु राहु के सिर काटे जाने की घटना का उसमे उल्लेख नही आता। सूय और चन्द्रमा के साथ राहु की शत्रुता के कारण का सवप्रथम पता 'महाभारत' से चलता है। महाभारत' मे समुद्र मथन की घटना का वणन[7] हो चुकने के उपरान्त जब मोहिनी रूपधारी विष्णु द्वारा अमृत पिलाने का प्रसग उपस्थित होता है तब इसका उल्लेख हुआ है।[8] विष्णु केवल देवताओं को ही अमृत पिलाये जा रहे थे और दानव उनके इस अन्याय को टुकुर-टुकुर ताक रहे थे। राहु नामक एक दानव से यह न देखा गया, उसने माया शक्ति से देवता

काशीखण्ड अ० ५० और ब्रह्मखण्ड सेतु-माहात्म्य अ० ३८ और कथा सरित्सागर' खण्ड ४ अ० ४ में आयी है। स्कन्द पुराण क ब्रह्मखण्ड और कथासरित्सागर में उच्च श्रवा का जगह सूय क घोड़े क रग पर शत लगायी गयी है।

१ पद्म पुराण सृष्टि खण्ड ४४।४० १८२

२ वायु पुराण ६६।६४ ५०

३ स्कन्द पुराण काशी खण्ड अ० ५०

४ अथववेद १९।९।१०

५ ऋग्वेद १०।६८।१० तथा १०।८५।१८ १९

६ वाल्मीकि रामायण बालकाण्ड ४५।१५ ४२

७ महाभारत आदि पव १७।१८

८. महा आदि पव १९

का रूप बनाया और देवताओ म आ मिला। विष्णु ने उसे भी अमत दे दिया और वह उसे पीने भी लगा। कि तु अमृत अभी उसके कण्ठ तक ही पहुँचा था कि सूय और चन्द्रमा की शिकायत पर विष्णु भगवान ने अपने चक्र से उस दानव का सिर काट दिया। चूकि अमत की बूँदें धड तक नहीं पहुँची थी इसलिए धड तो मत होकर पृथ्वी पर आ गिरा, किन्तु अमत पी लेने के कारण राहु का सिर अमर हो गया। वह भयकर सिर सूय और चन्द्रमा स उसी दिन स वर मानन लगा और इसीलिए वह आज भी दोनो पर ग्रहण लगाता है।[1] पौराणिक मान्यताओ के आधार पर राहु चन्द्रमा और सूय स प्रतिशोध लेने के लिए ही उन पर ग्रहण लगाता है।

(राहु का सिर काटे जाने और चन्द्रमा तथा सूय से उसकी शत्रुता का वणन प्राय उन सभी स्थानो पर प्रसगवश हुआ है जहाँ समुद्र मथन और उसके फलस्वरूप प्राप्त अमत के वितरण का वणन किया गया है। अत इस वत्त म पाये जानेवाले ववियो के लिए इस अध्याय का समुद्र मथन की कथा वाला अश देखिए।)

'ब्रह्मववर्त्त पुराण'[2] म चन्द्रमा के राहु ग्रस्त हान का कारण दवगुरु बृहस्पति की पत्नी तारा द्वारा चद्रमा को दिया गया शाप बताया है। कथा इस प्रकार है भाद्रपद शुक्ला चतुर्थी को गुरु पत्नी तारा म दाकिनी नदी म स्नान कर रहा थी। वहीं स चन्द्रमा ने उसका हरण कर लिया। तारा ने उसको बहुत समझाया कि ब्राह्मणी और गुरु-पत्नी होने के नाते मैं तुम्हारी माता तुल्य हू, गुर पत्नी गमन से सौ ब्रह्म हत्या का पाप लगता है। किन्तु चन्द्रमा ने उसे नहीं छोडा। जब वह उस भोगने को उद्यत हुआ तब तारा न उस शाप दिया कि तुम कलकी, यक्ष्मा से पीडित तथा राहुग्रस्त होआगे। चन्द्रमा न रानी हुई तारा को गोदी म बिठाकर नाना नदी नद तथा पवतो मे रमण किया।

पर तु 'ब्रह्मववत्त पुराण'[3] मे सूय के राहु ग्रस्त होने का कारण जमदग्नि ऋषि द्वारा उसका शापित होना बताया गया है। कथा इस प्रकार है—एक समय परशुराम के पिता जमदग्नि ऋषि रेणुका के साथ नमदा तट पर दिन म ही सम्भोग कर रहे थ। यह देख सूय ने कहा कि ऋषि! आप ब्रह्मा के प्रपौत्र हैं, वेदो के ज्ञाता हैं, आप धम का त्याग क्यो कर रहे हैं क्याकि दिन म मथन को शास्त्रो म वर्जित माना है। सूय के टोकने पर जमदग्नि ने मथुन तो त्याग दिया, पर सूय पर बहुत रुष्ट हुए और लगे कहन कि मेरे आगे पाण्डित्य और शास्त्र ज्ञान बघारने वाला तू कौन? जमदग्नि न क्रुद्ध होकर सूय को शाप दिया कि चूकि तुमने हमारा रस भग किया अत तुम राहु ग्रस्त होओगे। सूय ने भी जमदग्नि को शाप दिया कि क्षत्रिय क शस्त्र से तुम्हारा मरण होगा। दोनो का कलह देख ब्रह्मा न बीच बिचाव किया और सूय से कहा कि यून एव अधिक वष म ही तुम राहुग्रस्त होओगे और वह ग्रहण कही दिखाई देगा और कही नही। जमदग्नि को ब्रह्मा ने बताया कि तुम्हारी मृत्यु कार्त्तवीर्याजु न से होगी, तुम्हारा पुत्र २१ बार पथ्वी

१ द भा आदि पव १९।६

२ ब्रह्मववत्त पुराण कृष्ण जन्म खण्ड अ० ८० ८१

३ वही अ ७६

को क्षत्रियविहीन करेगा।

'ब्रह्मवैवर्त पुराण' की इस कथा मे नवीनता यह है कि यहाँ अमृत पीते समय राहु की शिकायत विष्णु से करने की घटना को लेकर राहु और सूय म वैर भाव का उल्लेख नही होकर उसका कारण जमदग्नि का शाप बताया गया है।

(२३) चन्द्रमा का कलकी होना

चन्द्रमा के कलकी होने से तात्पय उसके द्वारा अपने गुरु बृहस्पति की पत्नी तारा का अपहरण करने वाले आख्यान से है। यह आख्यान वैदिक साहित्य मे नहीं मिलता। इसका उद्भव और विकास पौराणिक साहित्य म ही हुआ है।

'हरिवंश पुराण'[1] मे इस आख्यान का उल्लेख इस रूप में हुआ है—जब अत्रि-मुनि की आँखो से सोम रूप तेज जल के आकाश में चढने लगा, तब ब्रह्मा जी ने चन्द्रमा का बीज, औषधि ब्राह्मण और जल का राजा बना दिया। प्रचेताओं के पुत्र दक्ष ने अपनी नक्षत्र रूपिणी सत्ताईस कन्याएँ चन्द्रमा का ब्याह दीं। चन्द्रमा ने राजसूय यज्ञ किया। उसे अहकार हो गया। अनीतिवश उसने बृहस्पति की भार्या तारा का बल पूवक अपहरण कर लिया। देवताओं तथा देवर्षियों के कहने पर भी उसने उस नही लौटाया। बृहस्पति बहुत क्रुद्ध हुए। चन्द्रमा शुक्राचाय की शरण म चला गया। इस प्रश्न को लेकर देवताओ और दानवो म सग्राम ही छिड गया। रुद्र ने बृहस्पति की सहायता की, क्योंकि वे बृहस्पति के पिता अंगिरा के शिष्य थे। ब्रह्मा ने दोनो पक्षो को समझा-बुझाकर यह युद्ध बन्द कराया और तारा को लाकर बृहस्पति को दे दिया। उस समय तारा गभवती थी। बृहस्पति न अपने क्षेत्र में पराये बीज पर आपत्ति की। तारा ने सींकों के झुरमुट में जाकर तेजस्वी बुध को जन्म दिया। ब्रह्मा के पूछने पर तारा ने बता दिया कि यह सोम (चन्द्रमा) का पुत्र है।

'ब्रह्म पुराण' मे चन्द्रमा की उत्पत्ति और उसके द्वारा तारा हरण की कथा दो स्थलों[2] पर आयी है। अध्याय ६ की कथा म तारा के बलात भोग आदि का वत्तान्त तो वसा ही है जसा हरिवंश पुराण मे, किन्तु चन्द्रमा की उत्पत्ति की कथा इसमे कुछ भिन्न रूप मे दी हुई है। तपस्या करते हुए अत्रिमुनि के नेत्रों से जो सात्विक आँसू गिरे, उनको दश दिशाओ ने गभ मे धारण कर लिया, किन्तु वे तेजोमय अश्रु को न झेल पायीं और उन्हें पृथ्वी पर गिरा दिया। ब्रह्मा ने उन गभ खण्डो को लेकर एक पुरुष की रचना कर दी। वही चन्द्रमा, ओषधीश तथा ब्राह्मणो का स्वामी हुआ।

अध्याय १५२ की कथा म कुछ विशेषताए हैं। अत्रि पुत्र चन्द्रमा बृहस्पति का शिष्य था। उनसे उसने सब विद्याएँ पढीं। जब गुरु दक्षिणा देने का प्रश्न उठा, तब गुरु ने चन्द्रमा को अपनी पत्नी तारा के पास परामर्श करने के लिए भेजा। चन्द्रमा तारा के सौन्दर्य को देख कामासक्त हो गया। उसे बलात् अपने घर ले आया और उससे भाग

---

१ हरिवंश पुराण, हरिवंश पर्व २५।३६ और २५।२०४६

२ ब्रह्म पुराण अ० ६ तथा १५२

किया। कि्तु चन्द्रमा देवताओ के कोप से डरा भी इसलिए वह शुक्र की शरण म चला गया। बहस्पति ने शुक्र के पास जाकर अपना दुखडा रोया। शुक्र ने बहस्पति के सम्मुख प्रतिज्ञा की कि तारा को दिलाकर ही अन-जल ग्रहण करूँगा। शुक्र ने शिव की आराधना की। शिव ने मनोरथ सिद्धि का आशीर्वाद दिया। वर पाकर शुक्र बहस्पति को साथ ले च द्रमा के पास गए परन्तु चन्द्रमा ने तारा का लौटान सम्बन्धी उनकी बात भी अनसुनी कर दी। तब शुक्र ने क्रोधित होकर चन्द्रमा को कोढी हो जाने का शाप दिया। कुष्ट से विकृत गलित अग वाले चन्द्रमा ने तारा को छोड दिया। तारा ने गौतमी गगा मे स्नान किया। जिससे उसका पाप धुल गया।

'पदम पुराण' मे भी यह कथा दो स्थलो[1] पर आयी है। दोना स्थलो पर कथा अधिकाशत तो ब्रह्मपुराण के समान है कि्तु कुछ भिन्नताएँ भी हैं। सष्टि खण्ड की कथा मे ये विशेषताएँ हैं—साम (चन्द्रमा) न राजसूय यज्ञ किया। यज्ञान्त पर चन्द्रमा की सुन्दरता पर लक्ष्मी दिति तुष्टि प्रभा कहू कीर्ति, वसु धति आदि रीझ गयी। सोम ने सबका भोग किया। वाटिका म घूमती हुई श्रृगारवती तारा का चन्द्रमा ने बलात हरण किया और वही भोग किया। इसके अनन्तर वह उस अपने घर भी ले गया। बहस्पति की ओर से रुद्र और चन्द्रमा की ओर से नक्षत्र तथा दत्य युद्ध में उतरे। इस घटना के एक वष बाद बहस्पति के घर पर ही तारा के पुत्र उत्पन्न हुआ। सब देवता उपस्थित हुए। उनके बार बार पूछने पर तारा ने बताया कि उस पुत्र का पिता चन्द्रमा है[2]।

उत्तर खण्ड अ० २११ की कथा म चन्द्रमा की उत्पत्ति चन्द्रमा द्वारा राजसूय यज्ञ चन्द्रमा द्वारा तारा का हरण, तारा के कारण देव दानवो का तारकामय' युद्ध आदि घटनाए सष्टि खण्ड अ० १२ के अनुसार ही हैं। उत्तराश मे कुछ अन्तर है। ब्रह्मा ने देव दानवा का युद्ध रुकवाकर तारा बहस्पति को दिला दी। बहस्पति ने तारा को गभवती पाया। उन्होंने सब देवताओ के सामन तारा से उसके गभ क विषय मे पूछा। तारा चुप रही। इस पर गभस्थ शिशु बाहर आकर तारा स क्रोधपूवक बोला कि यदि तू मरे पिता का नाम नही बताएगी तो मैं शाप दे दूगा। पुत्र के शाप के भय से तारा ने उसका चन्द्रमा का पुत्र होना सबके सामने स्वीकार किया।

'विष्णु पुराण'[3] मे यह कथा सक्षप म आयी है। पदम पुराण के उत्तर खण्ड के समान ही कथा है। अन्तर इतना ही है कि जब तारा को वापस पाकर बहस्पति ने अपने क्षत्र म दूसरे के बीज पर आपत्ति की तब तारा ने वह गभ इषीकास्तम्ब (सीक की झाडी) म त्याग दिया। वही बुध था। चन्द्रमा उसे अपने पास ले गया।

वायु पुराण'[4] मे इस कथा का पूर्वार्द्ध तो हरिवश पुराण और ब्रह्म पुराण के स दृश है परन्तु उत्तरार्द्ध पदम पुराण उत्तर खण्ड म आयी कथा के। अन्तर यह है

---

१ पद्म पुराण सष्टि खण्ड अ० १२ तथा उत्तर खण्ड अ २११
२ वही सष्टि खण्ड अ १२
३ विष्णु पुराण ४।६
४ वायु पुराण अ० ६

बुध की प्राप्ति के बाद चन्द्रमा यक्ष्मा-ग्रस्त होकर तेजहीन होने लगा। अपने पिता अत्रि के पास गया। अत्रि ने उसका पाप शमन कर उसे पुनः तेजयुक्त कर दिया। यक्ष्मा-ग्रस्त होने का कारण यहाँ भी पद्म पुराण सृष्टि खण्ड के ही समान नहीं बताया गया है।

'श्रीमद्भागवत पुराण'[1] की कथा 'पद्म पुराण' उत्तर खण्ड और विष्णु पुराण की कथा के समान है। अन्तर इतना ही है कि जब बृहस्पति ने अपने क्षेत्र में दूसरे का बीज धारण करने पर तारा का शाप देने की धमकी दी तब तारा ने गर्भ को त्याग दिया। परन्तु शिशु को अत्यन्त सुन्दर और कांतिमान देख बृहस्पति का मन उसे अपने पास ही रख लेने को ललचाया। चन्द्रमा और बृहस्पति में उस पुत्र के पितृत्व के प्रश्न को लेकर धींगा धींगी हो गयी। बाद में ब्रह्मा के सामने तारा ने चन्द्रमा को उस कुमार का पिता स्वीकार किया।

'देवी भागवत'[2] की कथा पूर्वोल्लिखित रूपों से कुछ भिन्न है। रूप और यौवन में मत्त तारा एक बार अपने यजमान चन्द्रमा के यहाँ गयी। चन्द्रमा उसे देखकर कामासक्त हो गया। तारा भी उसके वैभव को देखकर कामपीडित हो गयी। दोनों ने स्वेच्छा से भोग किया। जब काफी देर होने पर भी तारा घर न लौटी तब बृहस्पति ने एक शिष्य को उसे लिवाने के लिए भेजा, किन्तु तारा ने चन्द्रमा के पास से आना स्वीकार नहीं किया। बृहस्पति भी बुलाने गये, पर चन्द्रमा ने कह दिया कि तारा स्वयं आयी है, यदि वह नहीं जाना चाहती तो मैं उसे बलात् नहीं भेज सकता। बृहस्पति क्रुद्ध तो बहुत हुए पर क्या करते, अपना-सा मुँह लेकर लौट आये। कुछ दिन बाद कामार्त होकर वे पुनः चन्द्रमा के पास पहुँचे और तारा को न लौटाने पर शाप देकर भस्म कर देने की धमकी दी। चन्द्रमा ने कहा कि क्रोधी और कामार्त का शाप निष्फल रहता है। बृहस्पति निराश हो लौटे। इन्द्र के पास गये। इन्द्र ने सोम के पास दूत भेजा। चन्द्रमा ने टका सा जवाब दे दिया कि अनुरक्ता तारा को मैं नहीं लौटाऊँगा, करना हो सो कर लो। बृहस्पति के द्वेषवश शुक्राचार्य स्वयं चन्द्रमा के पास अपनी और दैत्यों की सहायता का आश्वासन देने के लिए पहुँचे। इसके बाद देवासुर संग्राम होने और ब्रह्मा के प्रयत्न से गर्भवती तारा के बृहस्पति के पास लौटाने आदि की घटनाएँ 'पद्म पुराण' उत्तर खण्ड के समान हैं। बुध के लिए पुनः दोनों पक्षों में संग्राम होने की घटना एक नया विकास है।

इसके पूर्व इस कथा के जितने रूप प्राप्त हुए, उनमें तारा के बलात् हरण की ही बात कही गयी थी। देवी भागवत' में ही पहली बार तारा के स्वेच्छया चन्द्रमा के घर जाने का उल्लेख आया है।

'अग्नि पुराण'[3] में कथा को अधिक विस्तार नहीं मिला है। पद्म पुराण के सृष्टि

---

१ भागवत पुराण ६।१४

२ देवी भागवत स्कन्ध १ अ० ११

३ अग्निपुराण अ० २७४

खण्ड की तरह यहाँ भी चन्द्रमा राजसूय यज्ञ की समाप्ति पर अवभृथ स्नान के उपरान्त नौ देवियों से भोग करता है। तारा का हरण करता है। देव-दानव म युद्ध होता है। ब्रह्मा बृहस्पति को तारा वापस दिलाते हैं। यह सब तो पूर्ववत वर्णित है। एक ही नयी बात है जो इससे पूव नहीं मिली थी, वह यह कि गर्भ-त्याग के बाद तारा को जो पुत्र हुआ, उसने स्वय यह रहस्य बताया कि मैं चन्द्रमा के बीज से तारा के गभ से पदा हुआ हूँ।

'भविष्य पुराण'[1] म तारा को दक्ष प्रजापति की कन्या कहा गया है। चन्द्रमा जब तारा के साथ बलात्कार करने लगता है तब तारा उसे परदारगमन के दोष बताती है। इस कथा मे चन्द्रमा और दत्यों से एक बार हार जाने के बाद देवता विष्णु को लेकर पुन युद्ध करने आते हैं। विष्णु सुदशन चक्र से चन्द्रमा का सिर काटने को तयार हो जाते हैं, तब ब्रह्मा उन्हें रोक देते हैं। विष्णु ने दक्ष प्रजापति के शाप से मिलता जुलता शाप चन्द्रमा को दिया कि अमावस्या को वह नष्ट हो जाएगा और फिर जन्म लेकर पूर्णिमा तक वृद्धिगत होता रहेगा। ब्रह्मा ने जब तारा को वापस दिला दिया तब चन्द्रमा ने सब देवताओ के सामने कहा कि इसको मेरा गभ है अत जो सन्तान होगी वह मेरी होगी। बृहस्पति ने तक दिया कि जिसका क्षेत्र होता है, उसी का उसके बीज पर अधिकार होता है। अन्त मे ब्रह्मा ने ही समझौता कराया। बुध चन्द्रमा को दिला दिया और तारा बृहस्पति को। शेष कथा पद्म पुराण उत्तर खण्ड के समान है।

'ब्रह्मवैवर्त पुराण'[2] मे यह कथा दो बार आयी है। प्रकृति खण्ड की कथा के अनुसार चन्द्रमा ने जाह्नवी तट पर तारा को देखा। प्रणय भिक्षा माँगी। तारा ने कहा कि गुरु पत्नी होने के नाते मैं तुम्हारे लिए माता के समान हूँ। उसने चन्द्रमा को धिक्कारा भी। पर, चन्द्रमा ने बलात् उसका अपहरण कर लिया और अपने रथ मे बैठाकर सौ वष तक भिन्न भिन्न स्थानो म उससे रमण किया। यहाँ चन्द्रमा ब्रह्मा तथा सनकादि ऋषियों के समझाने बुझाने पर, बिना युद्ध किये तारा को बृहस्पति को लौटा देता है। इसके आगे की घटना का इसमे कोई उल्लेख नहीं है।

कृष्ण जन्म खण्ड की कथा में जब चन्द्रमा तारा को बलात् भोगने को तयार होता है तब तारा उसे कलकी यक्ष्मा पीडित तथा राहुग्रस्त होने का शाप देती है। चन्द्रमा तारा को शुक्र के आश्रम म ले जाता है। शुक्र जब चन्द्रमा को समझा रहे होते हैं, तभी ब्रह्मा, शिव आदि सेना सहित वहाँ पहुच जाते हैं। शिव ने जब चन्द्रमा को त्रिशूल से मारने की धमकी दी, तब वह शिव की शरण मे आया। शिव ने चन्द्रमा को क्षीरसागर मे स्नान कराके पवित्र किया और उसके दो खण्ड करके, एक खण्ड को अपने मस्तक पर धारण किया और दूसरे खण्ड को ब्रह्मा के सामने छोड दिया। चन्द्रमा न लज्जित होकर समुद्र मे कूदकर आत्महत्या कर ली। पुत्र वियोग म अत्रि की आँखो से जो आँसू समुद्र

१ भविष्य पुराण उत्तरार्द्ध अ० ८८ पूर्णिमा व्रत के प्रसग में।

२ ब्रह्मवैवर्त पुराण प्रकृति खण्ड अ० ५८ ६१ तथा कृष्ण-जन्म खण्ड अ० ८० ८१

में गिरे, उन्ही से चन्द्रमा निष्पाप होकर पुनः समुद्र से प्रकट हुआ। शिव ने चन्द्रमा से कहा कि तारा के शाप के कारण तुम्हें यक्ष्मा रोग होगा, पर मेरे आशीर्वाद से उसका प्रतीकार हो जाएगा। तुमने भाद्रपद शुक्ल चतुर्थी को गुरु-पत्नी से भोग किया इसलिए उस दिन तुम्हें देखने वाला पाप का भागी होगा। तारा के हरण के कारण तुम युग युग तक कलंकित माने जाओगे और तुम्हारे बिम्ब में भगाकृति बनी रहेगी। शिवजी की आज्ञा से तारा भी चन्द्रमा के गर्भ को त्यागकर शुद्ध हो गयी। शिव ने तारा को बृहस्पति को सौंप दिया।

"वाराह पुराण"[1] मे जो कथा आयी है, उसमे तारा के बृहस्पति पत्नी होने का उल्लेख नहीं है उसे चन्द्रमा के भाई धर्म की पत्नी बताया गया है। तारा-हरण, देवासुर संग्राम और ब्रह्मा द्वारा शान्ति एवं मध्यस्थता का प्रयास आदि घटनाएं अन्य पुराणो के समान यहाँ भी वर्णित हैं। कथा का भिन्न अंश यह है—ब्रह्मा ने प्रजापालन के लिए धर्म को उत्पन्न किया। चन्द्रमा ने अपने भाई धर्म की पत्नी तारा का अपहरण किया। धर्म दुःखी होकर वन मे चला गया। सृष्टि मे घोर अव्यवस्था फैल गयी। देवता और असुर आपस मे लड़ने लगे। नारद ने ब्रह्मा से इस युद्ध की सूचना दी। ब्रह्मा ने युद्ध रुकवाया। उनके कहने से धर्म वन से वापस आ गया।

'स्कंद पुराण'[2] की कथा श्रीमद्भागवत की कथा के अनुसार है। मत्स्य पुराण[3] की कथा पद्म पुराण उत्तर खण्ड की कथा से मिलती जुलती है और 'ब्रह्माण्ड पुराण'[4] की कथा ब्रह्म पुराण अध्याय ९ के अनुसार वर्णित है। इनमे कोई नवीन तत्त्व कथा में नहीं जुड़ा है।

'गरुड़ पुराण'[5] मे केवल दो श्लोको मे कथा का संकेत मात्र दिया गया। सोम वंश का परिचय देते हुए चन्द्रमा द्वारा गुरु-पत्नी तारा से बुध की उत्पत्ति का उल्लेख हुआ है। इसी बुध से पुरूरवा का जन्म भी हुआ।

इस कथा का आध्यात्मिक अर्थ "पुराण धर्म"[6] में इस कथा को एक आध्यात्मिक रूपक बतलाया गया है। बृहस्पति और चन्द्रमा तो गुरु शिष्य के प्रतीक हैं। गुरु विद्या मे रमण करता है इसलिए वह उसकी पत्नी हुई। परन्तु विद्या साधारण नहीं, वह तारा' है। जो संसार सागर से तारती है वही तारा विद्या है ('तारयति संसार सागरात् या सा तारा विद्या')। शिष्य गुरु की विद्या को ग्रहण करता है, इसे ही गुरु पत्नी तारा का शिष्य चन्द्रमा द्वारा अपहरण कहा गया। गुरु की विद्या को पाकर शिष्य के अन्तःकरण में ज्ञान पैदा होता है, उसे ही बुध कहा गया है। जब शिष्य को ज्ञान मिल जाता

---

१ वाराह पुराण अ० ३२
२ स्कन्द पुराण काशी खण्ड पूर्वार्द्ध अ० १५
३ मत्स्य पुराण, अ० २३ २४
४ ब्रह्माण्ड पुराण मध्यभाग उपोद्घात पाद अ० ६५
५ गरुड़ पुराण पूर्व खण्ड १३९।१२
६ पुराण धर्म श्री कालूराम शास्त्री प्रकाशक श्री कृष्ण प्रेस अमरोधा (कानपुर) सं० १९८६ वि द्वि० सं०

है तब उसे विद्या की आवश्यकता नही रहती, अत वह विद्या पुन गुरु के पास लौट जाती है जसे कि तारा बृहस्पति के पास चली गयी।

(२४) चन्द्रमा का क्षयी होना

वदिक साहित्य क सहिता[1] तथा ब्राह्मण[2] ग्र थो म नक्षत्रो के साथ चन्द्रमा के विवाह का उल्लेख हुआ है। ऐतरेय आरण्यक[3] मे ही पहली बार चन्द्रमा का रोहिणी पर विशष प्रेम तथा अन्य नक्षत्रा के प्रति उदासीनता उल्लिखित है। परवर्ती पुराण साहित्य मे दक्ष द्वारा चन्द्रमा को शाप देने की घटना का विकास हुआ, किन्तु उसका आधार लोकवार्त्ता ही रही होगी क्योकि जन मानस ने एक पिता द्वारा दारिद्र्य के कारण अपनी कई कन्याओ को एक ही व्यक्ति स व्याहने जामाता का उनम से किसी एक पर विशेष प्रेम और अन्यो क प्रति उपेक्षा भाव रखने, अन्य बहनो द्वारा असतुष्ट होकर अपने पिता से शिकायत करने पिता का जामाता से सब पत्नियो को समान समझने का उपदेश देने और उसे न मानने पर शाप देने की कल्पना सहज ही करके इसे कथा रूप दे दिया होगा। वहाँ से इसने पुराणो मे स्थान पा लिया होगा। महाभारत तथा पुराणो म इस कथा क निम्नलिखित रूप प्राप्त होते हैं—

'महाभारत'[4] मे वशम्पायन और जनमेजय के सवाद रूप मे यह आख्यान कहा गया है। दक्ष ने अपनी सत्ताईस कन्याओ का विवाह चन्द्रमा से कर दिया। उन सभी बहना मे स राहिणी पर चन्द्रमा का सर्वाधिक प्यार था। उपेक्षिता बहना ने अपने पिता स शिकायत की। दक्ष ने पहले ता चन्द्रमा को समझाया पर जब चन्द्रमा के व्यवहार म सुधार नहीं हुआ तब दक्ष ने राजयक्ष्मा की सष्टि की और उसे चन्द्रमा के शरीर म प्रविष्ट कराके चन्द्रमा को कातिविहीन कर दिया। चन्द्रमा का क्षय हो जान से समस्त वनस्पतियाँ तथा ओषधियाँ सूखने लगी। प्रजा को कष्ट होने लगा। दक्ष ने कहा कि यदि चन्द्रमा अपनी सभी पत्नियो पर समान रूप से स्नेह करे और शिव की आराधना कर सरस्वती तीथ म स्नान कर, तो वह पुन रोग रहित हो सकता है, किन्तु शाप क कारण उसे पन्द्रह दिन तो क्षयग्रस्त होना ही पडेगा। दूसरे पखवारे म वह उपचय (वद्धि) को प्राप्त होगा।

ब्रह्मपुराण[5] मे चन्द्रमा द्वारा तारा हरण के प्रसग मे इस घटना की ओर भी सकेत किया गया है। 'वायुपुराण'[6] म तारा हरण के प्रसग म ही चन्द्रमा का यक्ष्माग्रस्त होना और उसके पिता अग्नि द्वारा उसे रोगमुक्त करना उल्लिखित है किन्तु उसम यह

१ काठक सहिता ११।३ तत्तिरीय सहिता २।३।५।१ ३ ३।४।७।१ वाजसनेयि सहिता १८।४
२ शतपथ ब्राह्मण ६।४।१।६ षडब्राह्मण ३।१२।५
३ एतरेय आरण्यक १।११।६ ५।१२।१
४ महाभारत शल्य पव अ ३५
५ ब्रह्मपुराण अ १५२
६ वायु पुराण अ ६

नहीं बनाया गया कि चन्द्रमा को राजयक्ष्मा क्यों हुआ ? 'महाभारत की कथा में शाप देने वाले भी दक्ष हैं और उसका मोचन करने वाले भी वही, किन्तु 'ब्रह्मपुराण' में शाप दाता का उल्लेख नहीं है और मोचनकर्त्ता अत्रि मुनि हैं। यही दोनों में अन्तर है।

'शिव पुराण'[1] की कथा 'महाभारत' के शल्य पर्व वाली कथा से बहुत मिलती जुलती है। यहाँ भी दक्ष के शाप के कारण चन्द्रमा को यक्ष्मा हुआ है। देवतागण चन्द्रमा की रोग मुक्ति के लिए ब्रह्मा से प्रार्थना करते हैं। ब्रह्मा ने शाप मोचन का उपाय यह बताया है कि चन्द्रमा प्रभास-क्षेत्र में जाकर शिव की आराधना करे। चन्द्रमा ने ६ मास तक मृत्युंजय मन्त्र का दस करोड़ जप किया। शिव ने प्रसन्न होकर उसे पन्द्रह दिन तक क्षय और पन्द्रह दिन तक उपचय का वर दिया।

'भविष्य पुराण'[2] में तारा हरण प्रसंग में विष्णु दक्ष के शाप से मिलता-जुलता शाप चन्द्रमा को देते हैं। इससे पता चलता है कि चन्द्रमा द्वारा तारा-हरण करने के पूर्व ही उसे दक्ष का क्षय-ग्रस्त होने का शाप मिल चुका था। इस पुराण में दक्ष के शाप की ओर संकेत मात्र किया गया है।

'ब्रह्मवैवर्त्त पुराण'[3] में भी, तारा-हरण के प्रसंग में ही चन्द्रमा को राजयक्ष्मा-ग्रस्त दिखाया गया है। जब चन्द्रमा तारा पर बलात्कार करने पर उद्यत हुआ तब तारा ने उसे कलंकी यक्ष्मापीड़ित और राहु-ग्रस्त होने का शाप दिया। यहाँ शाप निवृत्ति का उपाय नहीं दिया गया है।

वाराह पुराण[4] की कथा महाभारत वाली कथा से मिलती-जुलती है। सब पत्नियों से समान भाव से प्रेम न करने के कारण चन्द्रमा को दक्ष के शाप से यक्ष्मा-ग्रस्त होना पड़ता है। समुद्र मथन के समय जब समुद्र में से चन्द्रमा का पुनर्जन्म होता है तब शाप मोचन होता है।

स्कन्द पुराण[5] में यह कथा चार स्थलों पर आयी है। रेवा खण्ड और अर्बुद खण्ड के अन्तर्गत आयी हुई कथाएँ पूर्णत: शिव पुराण की कथा के समान हैं। प्रभास खण्ड की कथाएँ महाभारत वाली कथा से साम्य रखती हैं। नागर खंड की कथा भी महाभारत के समान है। एक ही अन्तर है कि यहाँ चन्द्रमा की शाप मुक्ति हाटकेश्वर-क्षेत्र में शिवलिंग स्थापित करने से होती है और महाभारत में सरस्वती तीर्थ में स्नान करने से।

---

१ शिव पुराण कोटि रुद्र संहिता अ० १४
२ भविष्य पुराण उत्तरार्द्ध अ० ८८
३ ब्रह्मवैवर्त्त पुराण कृष्णजन्म खण्ड अ० ८ ८१
४ वाराह पुराण अ० ३५
५ स्कन्द पुराण अवन्ती खण्ड (रेवा खण्ड) अ० ८५ प्रभास खण्ड (अर्बुद खण्ड) अ० २० नागर खण्ड अ० ६३ प्रभास खण्ड (प्रभास-क्षेत्र माहात्म्य) अ० २०-२३

(२५) जनमेजय का नाग-यज्ञ

अभिमन्यु के पौत्र और परीक्षित के पुत्र राजा जनमेजय ने जब अपने पिता की मृत्यु का बदला लेने के लिए सर्प-यज्ञ का अनुष्ठान किया और ऋत्विजों के मन्त्रों से खिंच खिंचकर सर्प यज्ञ कुण्ड मे गिरने लगे यहाँ तक कि वासुकि को भी लगा कि अब उसकी भी बारी है, तभी वासुकि की बहिन नागकन्या जरत्कारु का पुत्र आस्तीक आकर जनमेजय और उसके यज्ञ की छलपूर्वक प्रशंसा करने लगा। उससे प्रसन्न होकर जनमेजय ने उससे कहा कि वर माँगो। जनमेजय के ऋत्विजों ने राजा को वर देने के लिए मना किया क्योंकि जिस नागराज तक्षक ने उसके पिता परीक्षित को डँसा था, वह तो सर्प-यज्ञ से डर कर इन्द्र की शरण में जा छिपा था और बहुत से नागों के यज्ञ-कुण्ड में जल मरने के बाद भी वास्तविक शत्रु तक्षक जीवित था। पहले तो जनमेजय ठहर गया किन्तु जब ऋत्विजों ने प्रबल मन्त्रों को बार बार पढ़कर तक्षक का नाम ले लेकर आह्वान करना आरम्भ किया और तक्षक उनके बल से खिंचकर आने लगा—वह यज्ञ-मण्डप के समीप आ ही गया था कि तभी जनमेजय ने आस्तीक को वर देने की इच्छा प्रकट की। आस्तीक ने वर माँगा कि सर्प यज्ञ बन्द कर दिया जाय। वचन हार जाने के कारण जनमेजय ने यज्ञ बन्द कर दिया, किन्तु उसे इसका पश्चात्ताप बना रहा क्योंकि वह अपने पिता की मृत्यु के मूल कारण तक्षक को यज्ञ-कुण्ड में भस्म नहीं कर सका। इतने सर्पों की जान लेने पर भी वास्तविक शत्रु बेदाग ही बच गया[1]!

'महाभारत' के आदि पर्व में ही अन्य दो स्थलों[2] पर जनमेजय के नाग यज्ञ की कथा आयी है। आदि पर्व के अध्याय ३ में उतंक ऋषि राजा जनमेजय को उनके पिता के हत्यारे नागराज तक्षक से प्रतिशोध लेने के लिए उकसाते हैं। निरपराध परीक्षित को डसकर तक्षक ने जो अनुचित कर्म किया उसका उसे दण्ड देने के लिए सर्प यज्ञ का अनुष्ठान करने का परामर्श वे जनमेजय को देते हैं। उतंक तक्षक पर इसलिए कुपित हैं क्योंकि उसने उनको अपने गुरु का एक कार्य करने में बाधा डाली थी। जनमेजय उतंक से अपने पिता के स्वर्गवास का कारण जानकर शोक संतप्त हो जाते हैं।

आदि पर्व के अध्याय ४९-५८ में यह कथा पूर्वापर प्रसंग के साथ वर्णित है। राजा जनमेजय से उनके मन्त्रिगण उनके पिता महाराज परीक्षित की मृत्यु का वृत्तान्त इस प्रकार बताते हैं—

परीक्षित का वन में मृगया करने जाना। एक मृग का पीछा करते हुए शमीक ऋषि के आश्रम में पहुँचना। शमीक से मृग का पता पूछना। शमीक मौन-व्रती। पता न बतला सके। परीक्षित क्रुद्ध। वहीं पृथ्वी पर पड़े एक मृत सर्प को उठाकर ऋषि के गले में डाल देना। ऋषि का शान्त रहना।[3] परीक्षित राजधानी में वापस। शमीक के पुत्र शृंगी बहुत क्रोधित। पिता के अपमान का वृत्त जानकर परीक्षित

१ देखिए महाभारत आदि पर्व अ० ५२-५६

२ वही आदि पर्व अ० ३ और ४९-५८

३ वही आदि पर्व ४९।२२-३१

को शाप कि 'आज से सात रात के बाद मेरी वाक शक्ति से प्रेरित प्रचण्ड विषधर तक्षक नाग उस व्यक्ति को डँस लेगा जिसने मेरे निरपराध पिता पर मरा साँप डाला है।'[1] शमीक द्वारा परीक्षित को श्रृंगी के शाप की तथा सावधान रहने की सूचना भिजवाना। सुनकर परीक्षित भयभीत। सातवाँ दिन आया, तब ब्रह्मर्षि कश्यप का राजा परीक्षित को अपने तपोबल से बचाने की नीयत से जाना। मार्ग में ब्राह्मण वेशधारी नागराज तक्षक से उनकी भेंट। तक्षक द्वारा अपने विष का प्रभाव देखने के लिए एक वृक्ष को डँसना। वृक्ष विष से जलकर भस्म। कश्यप द्वारा उस वृक्ष को मंत्र बल से हरा भरा कर देना। तक्षक का प्रभूत धन देकर कश्यप को बीच में से ही लौटा देना। परीक्षित पूरी तरह सतर्क, पर तक्षक का घात लगा कर उन्हें जा डँसना। परीक्षित की मृत्यु। मंत्रियों से परीक्षित का मृत्यु वृत्तान्त जानकर जनमेजय का सर्पयज्ञ करने का निश्चय।[2]

जनमेजय द्वारा ऋत्विजों को बुलाकर यज्ञ-मण्डप तयार करवाना। सेवकों को आदेश देना कि बिना मुझे सूचित किये किसी अपरिचित व्यक्ति को यज्ञ मण्डप में प्रवेश न करने दिया जाय।[3] सर्पयज्ञ का विधिपूर्वक प्रारम्भ। मंत्राहूत होकर सर्पों का आ-आकर स्वयमेव यज्ञकुण्ड में गिरना। छोटे-बड़े, बच्चे बूढ़े, सफेद-काले पीले सभी तरह के सर्प।[4] उस यज्ञ में ऋत्विज के रूप में चण्डभार्गव, कौत्सउद्गाता, शार्ङ्गरव, वेदव्यास, उद्दालक श्वेतकेतु नारद, पर्वत आदि ऋषि उपस्थित।[5] सर्पों के जलने से चतुर्दिक चिरांयध की दुर्गन्ध। नागराज तक्षक का भयभीत होकर इन्द्र की शरण में जाना। वासुकि का अपनी बहिन जरत्कारु (जिसका विवाह जरत्कारु ऋषि से हुआ था) से यह कहना कि वह अपने पुत्र आस्तीक को जनमेजय के पास यज्ञ बन्द कराने के लिए भेजे।[6] (यहाँ नागकन्या जरत्कारु सर्पों को उनकी माता कद्रू द्वारा दिये शाप की बात आस्तीक को बताती है। कद्रू और विनता में इन्द्र के अश्व उच्चैश्रवा के रंग को लेकर शर्त बद गयी। कद्रू ने पुत्रों से कहा—उच्चैश्रवा की पूँछ से लिपटकर उसे काला कर दो क्योंकि कद्रू ने उसका रंग काला बतलाया था। परन्तु उसके पुत्रों ने इन्कार कर दिया। कद्रू का शाप कि तुम जनमेजय के नागयज्ञ में भस्म होगे। उस शाप से मुक्ति के लिए ही जरत्कारु मुनि से जरत्कारु का विवाह हुआ, जिससे आस्तीक की उत्पत्ति। उसी में यज्ञ बन्द कराने की सामर्थ्य")। आस्तीक का यज्ञमण्डप के समीप जाकर यज्ञ-अनुष्ठान और जनमेजय की प्रशंसा। जनमेजय का आस्तीक से वर माँगने को कहना। तभी तक्षक के नाम की आहुतियाँ डाली जाने लगीं। इन्द्र के दुपट्टे में छिपकर तक्षक

---

१ वही आदि पर्व ४०।१० ११
२ वही आदि पर्व ४०।१२ ४४
३ वही आदि० ५१।११ १७
४ वही आदि० अ ५२
५ वही आदि० ५३।४ १०
६ वही आदि० ५३।११ २६
७ वही आदि० ५४।१ १३

का आना। तक्षक को अकेला छोड इन्द्र का भाग जाना। आस्तीक का जनमेजय से सर्प यज्ञ बन्द करने का वर माँगना। वर देना। यज्ञ बीच मे ही बन्द। तक्षक, वासुकि आदि नाग बच गये।[1]

पद्मपुराण[2] मे जनमेजय के नागयज्ञ का तो प्रत्यक्षत वर्णन नही हुआ है, किन्तु नागो के विनाश के पीछे एक शाप कथा के होने का वर्णन हुआ है। अनन्त, वासुकि, तक्षक, महाबल, कर्कोटक, नागेन्द्र, पद्म महापद्म, शख कुलिक और अपराजित आदि सर्पों से ससार के भर जाने पर इन विषधरो से सत्रस्त होकर प्रजा ब्रह्मा जी के पास फरियाद लेकर पहुँची। ब्रह्मा ने प्रजा को अभय देकर विदा किया और उसके जाते ही वासुकि आदि नाग प्रमुखो को बुलाकर उन्हे डाँट फटकार बतायी और शाप दिया कि चूँकि तुम लोग प्रतिदिन मनुष्यों का नाश करते हो अत भावी वैवस्वत म वन्तर मे तुम्हारा घोर क्षय होगा एव सोमवशीय राजा जनमेजय द्वारा तुम्हारा विनाश होगा। शापित सर्पों ने ब्रह्माजी के पैर पकडकर कहा कि आपने ही तो हमे विषधर और क्रूर बनाया है फिर आप ही हम शाप देते हैं यह क्या? उन्होने जनमेजय के सर्प-यज्ञ से अपनी रक्षा का उपाय पूछा। ब्रह्माजी ने बताया कि जरत्कारु नामक एक ब्राह्मण होगा, उसको वासुकि अपनी बहिन जरत्कन्या को दे देवें। उनसे जो सन्तान होगी वह तुम्हारी रक्षा करेगा। तुम लोग सुतल वितल और तलातल इन तीन स्थानो म जाकर रहो। ब्रह्माजी के ऐसा कहने पर वे सब रसातल म चल गये।

श्रीमद्भागवत पुराण मे जनमेजय के नाग यज्ञ का वर्णन दो स्थलो[3] पर हुआ है। नवम स्कध म शुकदेवजी परीक्षित को भविष्य की बात बताते हुए इस यज्ञ की चर्चा करते हैं। वे कहते हैं कि तक्षक द्वारा काट लेने स जब तुम्हारी मृत्यु हो जाएगी तब तुम्हारा पुत्र जनमेजय क्रुद्ध होकर सर्पयज्ञ कराएगा और आग म सर्पों का हवन करेगा। द्वादश स्कन्ध की कथा म बताया गया है कि जब बहुत भयकर विषधर सर्प भी आ आकर जनमेजय के यज्ञ कुण्ड म गिरने लगे किन्तु अन्त तक तक्षक आता नही दिखायी दिया तब जनमेजय न ऋत्विजों से कहा कि अधम तक्षक क्यो नहीं आ रहा? ऋत्विजो ने कहा कि वह इन्द्र की शरण म चला गया है और इन्द्र उसकी रक्षा कर रहे हैं। तब, जनमेजय न झुझलाकर कहा कि आप लोग इन्द्र सहित तक्षक को क्यो नही अग्निकुण्ड म आवाहन करते? तब ऋत्विजो ने तक्षक के साथ ही इन्द्र का आवाहन करना आरम्भ किया। मन्त्र-बल से इन्द्र भी खिंचकर आने लगे और यज्ञ कुण्ड म गिरने वाले ही थे कि बृहस्पति ने जनमेजय से कहा कि सर्पराज तक्षक को मारना तुम्हारे लिए उचित नहीं। वह अमृत पीने के कारण अजर-अमर हो चुका है। तुमने पहले ही बहुत से निरपराध सर्पों को जला दिया है अब अपना यह अभिचार-यज्ञ बन्द करो। बृहस्पति के कहने स जनमेजय ने यज्ञ बन्द करा दिया।

---

१ वही आदि ५२ ५६

२ पद्म पुराण सृष्टि खण्ड ३१

३ भागवत पुराण ९।२२।३६ और १२।६।१६ २७

श्रीमदभागवत की इस कथा मे दो नयी बातें हैं (१) महाभारत के आदि पर्व मे जिस प्रकार इन्द्र अग्नि कुण्ड मे गिरने से बचने के लिए मन्त्राहूत होकर अपने शरणागत तक्षक को छोडकर भाग खडे होते हैं, उस प्रकार का हीन आचरण दिखाने से इन्द्र को यहाँ बचा लिया गया है। (२) तक्षक को अग्निकुण्ड मे गिरने से बचाने और सर्प यज्ञ को बन्द कराने का श्रेय जरत्कारु पुत्र आस्तीक के स्थान पर यहाँ देवगुरु बृहस्पति को मिला है।

(२६) द्रौपदी का भण्डार अखूट होना

द्रौपदी के भण्डार के अखूट होने की कल्पना सच्चरित्रिया से सम्बन्धित है। द्रौपदी की गणना पाँच महासतियो मे की जाती है। सत्ययुग की ब्रह्मविद्या रूपिणी वेदवती का ही त्रेता में सीता होना और सीता का ही द्वापर मे द्रौपदी होना कहा गया है।[1] महाभारत' के वन पर्व[2] मे एक कथा आयी है जिससे द्रौपदी के भण्डार के अखूट होने की लोक कल्पना को बल मिला है। कथा इस प्रकार है—द्रौपदी के पास सूर्य की दी हुई एक अक्षय बटलोही (पतीली) थी जिसकी विशेषता यह थी कि जब तक द्रौपदी अपने पतियो को भोजन कराकर स्वयं भी भोजन न कर ले, तब तक उसमे का भोजन कभी समाप्त नहीं होता था। पाण्डव उस पात्र की सहायता से वन मे रहते हुए भी ब्राह्मणो का अन्न दान से तृप्त करते थे।[3] पर दुर्योधनादि ने जब यह सुना तो उनकी छाती पर साँप लोट गया। उन्हीं दिनो दुर्वासा ऋषि अतिथि बनकर दुर्योधन के यहा पधारे और दुर्योधन के सेवा सत्कार से बहुत सन्तुष्ट हुए। उन्होने जब कुछ मागने के लिए कहा, तब दुर्योधन ने उनसे यही माँगा कि आप इसी तरह हमारे बडे भाई युधिष्ठिर के भी कभी अतिथि बनिए और ऐसे समय मे वहाँ पधारिए जब द्रौपदी समस्त ब्राह्मणो पाँचो पतियो को भोजन कराकर तथा स्वयं भी भोजन करके विश्राम कर रही हो।[4] दुर्वासा ने ऐसा करने का वचन दिया। दुर्योधनादि की इसमें चाल यह थी कि ऐसे समय अक्षय पात्र का प्रभाव समाप्त हो चुका रहेगा पाण्डव दुर्वासा का समुचित आतिथ्य कर न सकेंगे, फलत उनके शाप के भागी होंगे। एक दिन ऐसी ही स्थिति में दुर्वासा ऋषि अपने दस हजार शिष्यो के साथ पाण्डवाश्रम मे पहुचे। युधिष्ठिर ने अर्घ्य आसनादि से उनका सत्कार करके भोजन करने के लिए कहा। ऋषि अपने शिष्यो सहित स्नानादि से निवृत्त होने चले गये। किन्तु द्रौपदी के चित्त पर चिन्ता सवार हो गयी। ऐसी दशा मे अन्न कहाँ से आवे इतने व्यक्तियो के लिए? यदि आतिथ्य न हुआ तो दुर्वासा से शापित होना निश्चित था। द्रौपदी मन ही मन कृष्ण का स्मरण करने लगी। स्मरण करते ही कृष्ण वहाँ

१ ब्रह्मवैवर्त पुराण प्रकृति खड १४।५० ५४
२ महाभारत वनपर्व अ० २६२ २६३
३ वही वनपर्व २६२।१४
४ वही २६२।२१ २३

उपस्थित हो गये। द्रौपदी ने दुर्वासा और उनके शिष्यों के आगमन का समाचार सुनाया। पर कृष्ण बोले— 'कृष्णा मुझे बहुत जोर की भूख लग रही है पहले कुछ खिला, तब बात कर।' द्रौपदी न कृष्ण को वस्तुस्थिति बतलायी और कहा कि मेरे भोजन कर चुकने के कारण सूयनारायण की दी हुई बटलोही मे अब कुछ भी नही है। कृष्ण ने बटलोही मँगाकर देखी। उसमें कहीं जरा सा साग चिपटा हुआ था। उसे लेकर ही कृष्ण ने खा लिया और कहा—"इस शाक से सम्पूण विश्व के आत्मा यज्ञभोक्ता सर्वेश्वर भगवान श्रीहरि तप्त और सतुष्ट हों।"[1] यह कहकर कृष्ण ने सहदेव से कहा कि दुर्वासा को भोजन के लिए लिवा लाओ। उधर, दुर्वासा के जो शिष्य स्नानादि के उपरान्त जप आदि कर रहे थे उन्हें अचानक ऐसा अनुभव हुआ कि उनका पेट भर गया है। उन्हे डकार पर डकार आने लगी। अब तो उन्हे लेने के देने पड़े। उन्होंने दुर्वासा से कहा कि हमे भूख बिल्कुल नहीं है और उधर युधिष्ठिर के यहाँ रसोई तयार हो चुकी है। दुर्वासा ने सोचा कि अब चुपचाप भाग चलने मे ही कुशल है अत उन्होंने शिष्यों को जल्दी से जल्दी वहाँ स चल देने की आज्ञा दी।[2] उन्हें डर था कि कहीं युधिष्ठिर अन्न बिगडवाने के लिए उन्हें शाप न दे दें।

सूयनारायण द्वारा प्रदत्त बटलोही ही द्रौपदी के भण्डार के अखूट होने का कारण बनी।

(२७) नल-दमयन्ती-प्रेमाख्यान

नल दमयन्ती की कथा सव प्रथम 'महाभारत'[3] के अतगत मिलती है। किन्तु इस आख्यान मे जो अकृत्रिमता, नतिकता और मार्मिकता है उसके आधार पर पेंजर का अनुमान है कि इसका मूल स्रोत वदिक युग म होना चाहिये। पेंजर ने अपने इस अनुमान के लिए तीन कारण दिये हैं —(१) नलोपाख्यान महाभारत' की मूल कथा का अग नही है। (२) इसकी भाषा और रचना शली वदिक साहित्य के अनुरूप है और (३) इसम जिन इन्द्र, वरुण, यम अग्नि आदि देवताओ का उल्लेख आया है वे भी पौराणिक नहीं वदिक देवकुल स सम्बन्धित हैं[4]। इस धारणा म सत्याश हो सकता है

१ वही वनपव २६३।२२ २५
२ वही वनपव २६३।२६ ३५
३ वही वनपव अ ५२ ७६।४
४ 'The ocean of Story Penzer page 275 और भी देखिए—'Story of Nala Ed Monier Williams 2nd Ed Oxford Preface pp vi The story of Nala is not part of the main plot of the poem and probably belongs to a much earl er period of India Agni Varuna and Yama and the absence of all allusions to the great Hindu Triad connect the narrative more with Vedic than with the Epic and Puranic periods वही, पष्ठ ६

परन्तु हमारे पास कोई ऐसा साधन नहीं जिससे इसके वैदिक युगीन होने के पुष्ट प्रमाण दिये जा सकें। यह तो स्पष्ट ही है कि ऋग्वेद आदि मे जो इने गिने आख्यान बीज रूप मे आये हैं उनमें नल दमयन्ती का आख्यान नहीं आता है। अत हम यही मानकर चलना पड़ेगा कि इस आख्यान का आदि स्रोत महाभारत के वनपर्व में उल्लिखित नलोपाख्यान ही है।

महाभारत के परवर्ती पुराण साहित्य[1] म दो नलो का उल्लेख आता है एक निषध देश के राजा नल का, जो राजा वीरसेन के पुत्र थे और दूसरे, इक्ष्वाकुवंशी राजा नल का, जो रामायण के कथा-नायक श्री रामचन्द्र के बाद के सूर्यवंशी राजाओ मे चौथे स्थान पर आते हैं और जिनके पिता का नाम निषध[2] था। इसी कारण उनको नैषध भी कहा गया। प्रथम नल चन्द्रवंशी थे और द्वितीय नल सूर्यवंशी। नल दमयन्ती आख्यान के साथ जिस नल का सम्बन्ध है, वे अयोध्या के सूर्यवंशी इक्ष्वाकु-कुलीन राजा ऋतुपर्ण के मित्र थे। नल के आख्यान के जितने रूप मिले हैं उनमे ('नैषधीय चरितम्' और 'नल चम्पू' को छोड़कर) अयोध्या नरेश राजा ऋतुपर्ण का उल्लेख अपरिहार्यत आया है। अयुतायु का पुत्र यह ऋतुपर्ण राजा नल का सहायक और द्यूतक्रीडा का पारदर्शी कहा गया है[3]। उसने बदले मे नल से अश्वविद्या सीखी थी[4]। ऋतुपर्ण रामचन्द्र से भी पहले हुआ था। उसके और राम के मध्य तेरह राजा हो चुके थे—ऋतुपर्ण > सर्वकाम > सुदास > सौदास मित्रसह (कल्मषपाद) > अश्मक > मूलक > दशरथ > इलिविल > विश्वसह > खट्वांग > दीर्घबाहु > रघु > अज > दशरथ > राम[5]। इस प्रकार यदि नल को सूर्यवंशी (इक्ष्वाकुवंशी) माना जाय, तो उनका काल ऋतुपर्ण से बहुत बाद का सिद्ध होता है, और इससे उनके और ऋतुपर्ण की मित्रता की संगति नहीं बैठती। अत नल दमयन्ती आख्यान के नल चन्द्रवंशी, निषध देश के राजा वीरसेन के पुत्र एवं ऋतुपर्ण के समकालीन थे और वे रामचन्द्र से बहुत पुराकालीन।

पुराणों में इन राजा नल का आख्यान विस्तार मे नहीं मिलता। विष्णु पुराण, 'भागवत पुराण' और वायु पुराण मे इनके विषय मे केवल इतना ही उल्लेख आया है कि ये इक्ष्वाकुवंशी राजा ऋतुपर्ण के मित्र थे। ऋतुपर्ण ने इनकी सहायता की थी और

---

१ वायु पुराण अध्याय ८८ श्लोक १७४ १७५ और मत्स्य पुराण द्वादश अध्याय श्लोक ५६

२ राम > कुश > अतिथि > निषध > नल > नभस्। देखिये > स्टोरी आफ नल संपादक श्री मोनियर विलियम्स आक्सफोर्ड द्वि सं० प्रस्तावना प ११ और मत्स्य पुराण द्वादश अध्याय श्लोक ५०—५२

३ विष्णु पुराण चतुर्थ अंश चतुर्थ अध्याय श्लोक ३६ ३७

४ श्रीमद्भागवत पुराण नवम स्कंध नवम अध्याय श्लोक १६ १७

५ विष्णु पुराण चतुर्थ अंश चतुर्थ अध्याय श्लोक ३८ ८७

इन्होने ऋतुपर्ण से द्यूत क्रीडा सीखी थी और ऋतुपर्ण ने इनसे अश्व विद्या[1]। किस प्रसग म ऋतुपर्ण ने नल की सहायता की थी इसका कोई उल्लेख उक्त पुराणो म नहीं मिलता। विष्णु पुराण' म आहुक और आहुकी नामक शिवभक्त भील दम्पति की कथा आयी है जिन्होने अतिथि क रूप म आय साधुवेशधारी शिव की रक्षा के लिए अपन प्राण दे दिये। शिव न उन्हें वर दिया कि अगले जन्म म तुम नल दमयन्ती के नाम स निषध देश क राजा रानी बनोगे[2]। स्कन्द पुराण' म अवश्य दमयन्ती का उपाख्यान आया है[3]। पर उसम कथा की दृष्टि से कोई नवीनता नहीं।

'महाभारत के अनन्तर उत्तरकालीन सस्कृत साहित्य म पुन नल दमयन्ती का प्रेमाख्यान कवियो का प्रिय विषय बन गया। इस प्रमाख्यान के आधार पर लिखित काव्यो मे 'नलोदय काव्यम,[4] नलचम्पू' ('दमयन्ती कथा',[5] और 'नषधीय चरितम[6] *आदि मुख्यत उल्लेखनीय हैं। 'कथा सरित्सागर म भी नल कथा मिलती है।*

यहाँ हम 'महाभारत मे आगत नलोपाख्यान को सक्षप म देकर और उसको आधार मानकर यह देखने का प्रयास करेंगे कि 'नलोदय काव्यम् 'नलचम्पू ('दमयती

---

१ विष्णु पुराण चतुथ अश चतुथ अध्याय श्लोक ३६ ३७
भागवत पुराण नवम स्कध, नवम अध्याय श्लोक १६ १७
वायु पुराण अध्याय ८८ श्लोक ११४

२ शिवपुराण शतरुद्र सहिता अध्याय ३७। यही कथा शिवपुराण के एक अन्य सस्करण में ज्ञान सहिता अध्याय ६२ मे भी आयी है।

३ स्कन्द पुराण नागरखण्ड १ ५ १ ६

४ 'नलोदय काव्यम् के रचयिता महाकवि कालिदास माने जाते हैं। (दे 'स्टोरी आफ नल सं० श्री मोनियर विलियम्स प्रस्तावना पृ ६ और 'नलोदय काव्यम्' प्रका वेंकटश्वर प्रेस बम्बई पृ १)। इस काव्य के चार उच्छवासों एव २१६ श्लोकों में नल-दमयन्ती की कथा दी हुई है। ए बी कीथ कालिदास का समय ४०० ई० के आसपास मानते हैं किन्तु कुछ लोग इनका काल पहली शती ई पू० तक ले जाते हैं। (दे० ए हिस्ट्री आफ सस्कृत लिटरेचर' श्री ए बी० कीथ और सस्कृत साहित्य का संक्षिप्त इतिहास श्री वाचस्पति गरोला)।

५ नल-चम्पू या दमयन्ती कथा रचयिता त्रिविक्रम भट्ट १०वी शती ई पूर्वार्द्ध इस काव्य की शली दुरूह। इसमें नल-कथा का पूर्वार्द्ध ही वर्णित उत्तरार्द्ध नही। प्रकाशक निर्णयसागर प्रस बम्बई तृ स १९३१

६ 'नषधीय चरितम् श्री हर्ष १२ वी शती ई उत्तरार्द्ध। टीकाकार प शिवदत्त शर्मा प्रका० निर्णयसागर प्रेस बम्बई १९३३ ई सप्तम सस्करण। इस काव्य के २२ सर्गों के २८३० श्लोकों में आलकारिक शली में उन्मुक्त कल्पना विलास के साथ नल-दमयन्ती प्रमाख्यान वर्णित।

७ कथा सरित्सागर कश्मीरी कवि सोमदेव प्रथम खण्ड प्रका० बिहार राष्ट्रभाषा परिषद् पटना भूमिका डा० वासुदेवशरण अग्रवाल पृ० ५ अलकारवती शीर्षक नवम लम्बक छठी तरग। कथा-सरित्सागर की रचना १ ६३ १ ८१ ई० के मध्य। प्रथम शती ई में गुणाढ्य ने पशाची में बडडकहा (बृहत्कथा) लिखी। उसका सार कश्मीरी कवि क्षमेन्द्र ने बृहत्कथा मजरी में दिया। कथा सरित्सागर में भी बृहत्कथा का वस्तु। क्षमेन्द्र के ग्रन्थ के २ वष बाद यह रचा गया। इससे यह सूचित होता है कि कथा सरित्सागर में आया हुआ नलाख्यान कभी 'बडडकहा' में आ चुका होगा।

कथा), 'कथा सरित्सागर' और 'नषधीय चरितम' मे नल-कथा मे क्या परिवतन-परिवद्ध न हुए। समान अ शों को पुनरावत्ति न करके केवल भिन्नता के स्थलो का ही उल्लेख किया जाएगा।

'महाभारत के वन पव मे, ५२ से ७९ तक के अध्यायों मे द्यूत क्रीडा मे सब कुछ हारे खिन्न मन युधिष्ठिर को बहुदश्व ऋषि द्वारा द्यूत के ही कारण सब कुछ गँवाने वाले विपत्ति-ग्रस्त नल की कथा सुनायी गयी है। यह एक प्रकार की दृष्टान्त कथा बन गयी है। इस नलोपाख्यान का सक्षिप्त रूप यह है

नल निषध देश के राजा। वीरसेन के पुत्र नल के छोटे भाई का नाम पुष्कर। दमयती विदभ नरेश भीम की पुत्री। कुण्डिनपुर विदभ की राजधानी। दमयती-जन्म की कथा भीम नि सतान होने से दु खी—दमन ऋषि का भीम के राजभवन म स्वत पदापण—राजा द्वारा उनकी बडी आवभगत—ऋषि प्रसन्न—रानी को एक कन्या, तीन पुत्र होने का वरदान दिया कन्या—दमयती। पुत्र दम, दान्त और दमन।

नल और दमयती दोनो रूपवान। लोगो से एक दूसरे के रूप-गुण की प्रशसा सुनकर दोनो के हृदय मे बिना देखे ही प्रेमोत्पन्न। नल ने स्वण पखा वाला एक हस पकडा। हस ने कहा कि मुझ छोड दो तो दमयती के हृदय मे तुम्हारे लिए अनुराग उत्पन्न करूँगा। वह तुम्ह छोड किसी से विवाह न करेगी। नल ने हस को मुक्त कर दिया। हस ने दमयती के पास जाकर नल के रूप गुण की प्रशसा बढा चढाकर की। दमयती और भी अनुरक्त हो गयी। उसने हस के द्वारा अपना प्रेम-सदेश नल के पास भजा।

पुत्री को विवाह के योग्य जानकर भीम ने स्वयवर का आयोजन किया। नारद और पवत ऋषि ने स्वयवर का समाचार देवलोक म पहुँचाया। इन्द्र अग्नि, यम वरुण स्वयवर में भाग लेने के लिए चले। माग मे नल से भेंट। नल भी कुण्डिनपुर ही जा रहा था। इन्द्रादि देवताओ ने नल को अपना दूत बनाकर दमयती के पास भेजा यह कहने को कि वह उनमे से किसी को अपना पति चुन ले। इन्द्र की कृपा से नल अदृश्य होकर अन्त पुर म प्रविष्ट हो गये। दमयती नल को दखकर मोहित। पूछने पर नल न अपना परिचय दिया। देवताओं का सदेश भी कहा। देव कोप न हो, इस डर से दमयती ने भरे स्वयवर म नल को वरण करने का अपना निश्चय दुहराया।

स्वयवर आरम्भ होते ही चारा देवता नल का रूप धारण कर उसके पास जा बठे। दमयती दुविधा में पड गयी कि इनमे से असली नल कौन से हैं? देवताओ के जो लक्षण वह जानती थी, वे उनम नहीं दिखायी दिये। उसने देवताओं से प्राथना की कि वे अपना वास्तविक रूप प्रकट कर दें। देवताओ द्वारा दमयती मे वह शक्ति उत्पन्न कर दी गयी जिससे वह मनुष्य और देवता मे पहचान कर सके। पसीना न आना, पलकें न गिरना धारण किये पुष्पहार का न मुरझाना, धूलिकण न पडना, पृथ्वी-तल को चरणा का स्पश न करना, परछाइ न पडना—ये सब देवताओ के लक्षण।

नल के प्रति दमयती की अनन्य प्रेम निष्ठा देखकर चारो देवता प्रसन्न हो गये। प्रत्येक न दो-दो वर नल को दिये। इन्द्र ने कहा—यज्ञ मे प्रत्यक्ष दशन और

मरने पर शुभ गति दूंगा।' अग्नि ने कहा— इच्छा करते ही मैं प्रकट हो जाऊँगा। मरने पर तेजस्वी लोक दूंगा। यम ने कहा— तुम्हारी बनायी रसोई म उत्तमोत्तम स्वाद होगा। धम म तुम्हारी निष्ठा अविचल रहेगी।' वरुण ने वर दिया—'इच्छा करते ही मैं प्रकट हो जाऊँगा। तुम्हारी पुष्पमाला कभी न मुरझाएगी। सदा सुर्गधित बनी रहेगी।'

राजा भीम ने नल दमयती का विधिवत् विवाह सस्कार कर दिया। कुछ दिन तक ससुराल म रहने के बाद नल निषध देश को वापस। नल स दमयती को एक पुत्र (इन्द्रसेन) और एक पुत्री (इन्द्रसेना) उत्पन्न।

स्वयवर से वापसी में लोकपालों (इन्द्रादि देवताओं) की भेंट कलि और द्वापर से हुई। दमयती ने देवताओं को छोड मत्य नल को वरा, यह सुनकर कलि अत्यन्त क्रुद्ध हुआ। उसने निश्चय किया कि नल के भीतर प्रविष्ट होकर उनकी मति भ्रष्ट करूगा और उन्हें राज्य च्युत कराऊगा। कलि ने द्वापर से कहा कि तुम जुए के पासों मे प्रवेश कर मेरी सहायता करना।

कलि ने बारह वष तक प्रतीक्षा की। नल ने अपना आचरण ऐसा रखा कि कलि को कोई अवसर ही न मिला। एक दिन मूत्रत्याग के बाद नल न हाथ मुँह तो धो लिये किन्तु पर नहीं धोये। इसी अशौचावस्था में वे सध्या करने बठ गये। बस कलि को मौका मिला वह नल के भीतर प्रविष्ट हो गया। दूसरा रूप धारणकर कलि न पुष्कर के पास जाकर उसे नल से जुआ खेलने के लिए उकसाया। वृषभ (साँड) के रूप म कलि पुष्कर के साथ नल के पास आया।

नल और पुष्कर में द्यूत क्रीडा हुई। नल की हार पर हार होने लगी। मन्त्रियों और प्रजा के अनुरोध पर दमयती ने नल को मना किया, परन्तु नल ने उसकी एक न सुनी।

आसन्न दुर्भाग्य को देखकर दमयती ने अपने पुत्र पुत्री को नल के सारथी वार्ष्णेय के साथ अपने पीहर भेज दिया। वार्ष्णेय वापस नहीं आया। वह वहाँ से राजा ऋतुपर्ण की चाकरी करने के लिए अयोध्या चला गया।

द्यूत क्रीडा मे नल वस्त्राभूषण सब हार गये। कुछ भी शेष न रहा। तब, पुष्कर ने दमयती को भी दाँव पर लगाने को कहा। नल ने ऐसा नहीं किया। वे दमयती के साथ राज भवन को छोड गये। नल दमयती के तन पर एक एक धोती रह गयी। पुष्कर के डर से किसी प्रजाजन ने उनकी बात भी न पूछी।

वन मे, भूख प्यास से व्याकुल नल ने स्वर्णिम पखो वाले पक्षियो के झुण्ड पर अपना अधोवस्त्र फेंका। पक्षी उसे ले उडे। कहते गये हम द्यूत के पासे हैं। तुम्हें निपट नगा करके अब हमें सतोष है।'

नल का दमयती को विदभ देश की ओर जाने वाला माग दिखाना। दमयती शकित। एक वस्त्र से दोनो अपनी लज्जा ढँक वन वन घूमने लगे। एक रात वे एक धमशाला मे सोये। दमयती को वहीं सोयी छोडकर नल तलवार से उसकी आधी धोती काटकर और उसे पहनकर चल दिये। दमयती को इस प्रकार वन मे अकेली

छोडते उन्हें मोह ता हुआ, पर अन्तत उस पर उन्होंने विजय पा ली।

दमयती जब प्रात काल जागी, तब उसने अपने पार्श्व मे नल को नही पाया। वह विलाप करने लगी। कोई चारा न देखकर उसने विदर्भ की राह ली। वन मे एक अजगर ने उसे परो की ओर से निगलना आरम्भ किया। अभी वह उसे आधा ही निगल पाया था कि एक व्याध आया। उसने अजगर को मारकर दमयती की रक्षा की।

परन्तु व्याध दमयती के सौन्दय पर लुभा गया। कामातुर होकर उसने बलात्कार करना चाहा। पतिव्रता दमयती के शाप से वह निष्प्राण हो गया।

वहाँ से चलकर दमयती वन मे तपस्वियों के आश्रम म पहुँची। तपस्वियो की भविष्यवाणी 'शीघ्र ही पति से तुम्हारा मिलन होगा। तुम पुन राज सुख भोगोगी।' इतना कहकर तपस्वीगण तथा आश्रम सब अदृश्य हो गए।

आगे जाने पर दमयती की भेंट एक साथ (व्यापारी दल) से हुई। साथ राजा सुबाहु के नगर चेदि की ओर जा रहा था। दमयती भी उसके साथ हो ली। रात म उनका पडाव एक सरोवर पर पडा। जगली हाथिया ने दमयती और कुछ ब्राह्मणा को छोडकर, शेष सबको रौंद डाला। दमयती को सबने अशुभ बताया। उनके साथ वह चेदि नगर म आयी। चेदि की राजमाता ने दमयती को अपने पास बुला भेजा। दमयती इस शत पर उनके पास रही कि किसी का उच्छिष्ट नही खाऊँगी किसी के पर नही धोऊँगी, पर पुरुष से वार्त्तालाप नही करूँगी। राजमाता ने उसकी सारी शर्तें स्वीकार कर लीं और उसे अपनी पुत्री सुनन्दा की सहेली बना दिया।

दमयती को वन म अकेली सोती छोडकर नल चले तो एक अन्य वन मे पहुँचे। वहाँ दावानल प्रज्ज्वलित था। ज्वाला से घिरा एक नाग उनको सहायता के लिए पुकारने लगा। नारद मुनि के शाप से वह नाग स्थावर बन गया था। उसका नाम कर्कोटक था। कर्कोटक ने अपना शरीर अगुष्ठ मात्र कर लिया। उसने नल से कहा कि कुछ दूर तक मुझे ले चलो तो मेरा शाप छूटे। मैं तुम्हारा उपकार करूँगा। नल उसे लेकर एक एक पग गिनते हुए चले दश कहते ही नाग ने उन्हें डँस लिया।

विष के प्रभाव से नल का रग काला पड गया। वे कुरूप हो गये। नाग ने कहा—'चिंता न करो। कलि मरे विष-दाह से जल जाएगा'। उसी ने सुझाया कि तुम अयोध्या-नरेश ऋतुपर्ण के पास जाओ, अपना नाम 'बाहुक' रख लो। तुम ऋतुपर्ण को अश्वविद्या सिखाकर उससे द्यूत विद्या सीखना। शीघ्र ही तुम्हें पत्नी पुत्र तथा राज्य की प्राप्ति होगी। कर्कोटक ने नल को दो दिव्य वस्त्र दिए। वह बोला मेरा स्मरण कर लेना और इन वस्त्रो को पहन लेना, ऐसा करते ही तुम्हे तुम्हारा पूव रूप प्राप्त हो जाएगा।

नल अयोध्या म आये। ऋतुपर्ण के सामने उन्होंने अपने गुणो का बखान किया। ऋतुपर्ण ने नल को अश्वशालाध्यक्ष बना दिया।

उधर राजा भीम ने अपनी पुत्री और जामाता को खोजने के लिए पुरस्कार का लालच देकर, बहुत से ब्राह्मणो को यत्र-तत्र भेज दिया। उनम से एक, सुदेव नामक

ब्राह्मण चेदि पहुँचा। वह दमयती को पहचान गया। चेदि की राजमाता दमयती की मौसी निकली। उसने दमयती को आदरपूर्वक विदा किया।

दमयती ने सकोच छोडकर अपनी माँ से कहा कि नल का पता लगाओ अन्यथा मेरे प्राण न बचेंगे। राजा भीम ने नल को खोजने के लिए दिशा दिशा मे ब्राह्मण भेजे। दमयती ने नल की खोज म जानेवाले ब्राह्मणों को बुलाकर कहा कि जहाँ भी जाओ इस बात का जोर-जोर से कहना कि नल ने मुझ अकेली को वन मे छोडकर बडा अत्याचार किया। धोती फाडने वाली बात भी कहना।

पर्णाद नामक ब्राह्मण अयोध्या पहुँचा। ऋतुपण की राजसभा म उपस्थित होकर उसने ऐसा ही कहा। बाहुक ने एकात म उससे कहा—जिसने भी यह निष्ठुरता की होगी विवशतावश ही की होगी। दमयती तो पतिव्रता है उसे अपने पति की निदा नही करनी चाहिए। पर्णाद ने लौटकर, दमयती से जो देखा था कह सुनाया।

माता का परामश लेकर दमयती ने सुदेव को अयोध्या भेजा—ऋतुपण से यह कहने को कि अगले दिन ही प्रात दमयती का दूसरा स्वयवर है और उनका उसमे पहुँचना आवश्यक है।

सुदेव स इतने शाघ्र स्वयवर होने का समाचार पाकर ऋतुपण को बाहुक की अश्वविद्या की याद आयी। बाहुक ने स ध्या स पूव कुण्डिनपुर पहुँचाने का आश्वासन दिया। अच्छी नस्ल के चार दुबल घोडे छाँटकर उसने रथ म जोते। घोडे पवन वेग से चले। माग म ऋतुपण का उत्तरीय गिर पडा। क्षण मात्र में वह चार कोस पीछे रह गया। ऋतुपण न कहा कि तुम अश्वचालन म निश्चय ही प्रवीण हो, पर तु मैं गणित शास्त्र म पारगत हू। प्रमाणस्वरूप उ होन एक बहडा वक्ष के फलो की गिनती क्षण भर म कर दी। बाहुक ने रथ रोककर पेड को काट डाला। फल गिने तो ऋतुपण द्वारा बतायी सख्या को सही पाया। ऋतुपण ने बाहुक को द्यूत विद्या सिखा दी। कलि नल के शरीर से निकल गया। उसने नल से क्षमा मागी और बहेडे के वक्ष म समा गया।

सध्या स पूव ही बाहुक ने ऋतुपण को कुण्डिनपुर पहुचा दिया। पर तु वहा स्वयवर का कोई समारोह न देखकर ऋतुपण का आश्चय हुआ। भीम को भी उन्हें आया देखकर आश्चय हुआ।

दमयती ने नल की परीक्षा लेने के लिए अपनी सखी केशिनी को उस स्थान म भेजा जहा बाहुक नामधारी नल को ठहराया गया था। दमयती ने केशिनी को आदेश दे दिया था कि 'माँगने पर भी बाहुक को पानी और आग न दना। जो देखो, उसकी सूचना देना।" केशिनी ने दखा कि नल ने खाली घडों को दृष्टिमात्र से भर दिया। एक मुट्ठा तिनके को सूय की ओर दिखाकर आग जला ली। बात की बात म भोजन तयार कर लिया। छोटे द्वार बाहुक क प्रवेश करत समय स्वयमव ऊचे हो जाते थे। मसले जान पर भी फूल और अधिक खिल जात थे और उनकी सुग ध बढ जाती थी। दमयती न बाहुक द्वारा बनाए हुए भाजन म से थोडी सी बानगी मगाकर चखी। उसम उसे वही स्वाद आया जो नल की रसाई म आता था। फिर उसने केशिनी के साथ अपने

दोनो बच्चो को बाहुक के पास भेजे। बाहुक उन्हें छाती से लगाकर रो पडा। दमयती का रहा सहा सन्देह भी दूर हो गया।

उसने अपनी माता से कहकर बाहुक को अत पुर म बुलाया। दोनो एक दूसरे को देखते ही रो पडे। नल की आंखो के किनारे कुछ कुछ लाल थे। आखो मे आंसू लाल दिखायी देते थे और गिरते समय श्वेत लगते थे। दम्पति ने परस्पर उपालम्भ दिया।

दमयनी ने अपने पातिव्रत का साक्ष्य देने के लिए वायु सूय और चन्द्र का आह्वान किया। अतरिक्ष से वायु ने कहा कि हमने तीन वष तक दमयती की शील रक्षा की है। दमयती पवित्र सती है। नल को पूण विश्वास आ गया।

अब, नल न कर्कोटक का स्मरण किया। उन्होने उसके दिए दोनो दिव्य वस्त्र पहन लिए। उनके प्रभाव से उन्हें अपना पूव रूप प्राप्त हो गया। सब बडे हर्षित हुए। ऋतुपण ने वस्तुस्थिति जानी, तो सेवा कम कराने के लिए नल से क्षमा मांगी। नल ने ऋतुपण को शालिहोत्र विद्या (अश्वविद्या) सिखायी और उनसे द्यूत विद्या सीखी।

दमयती और बच्चो को ससुराल म छोडकर नल ससै य निषध देश आये। उन्होने पुष्कर के सामने जूआ खेलने का प्रस्ताव रखा। जूआ न खेलने पर युद्ध करने की धमकी दी। नल ने इस बार दाँव पर अपनी सारी सम्पत्ति और दमयती तक को लगा दिया। इस बार द्यूत-क्रीडा में नल की जीत हुई। पुष्कर अप ने दुर्व्यवहार की याद कर डरा। नल ने उसे क्षमा कर दिया। राज्य का एक अश उसे निर्वाह के लिए दे दिया।

नल दमयती को विदभ से विदा करा लाये। पुत्र-पुत्री पत्नी सहित वे सुखपूवक वर्षों तक न्यायपूण शासन करते रहे।

'नलोदय काव्यम म 'महाभारत के उपयु क्त नलोपाख्यान की भांति ही नल-दमयती म रूप गुण श्रवण जनित प्रेम है, हस यहां भी दूतत्व करता है इसम भी कामात्त व्याध दमयती के शाप से मर जाता है। कथा मे भिन्नता के अश ये हैं—
(i) दमन ऋषि का तथा राजा भीम के पुत्रो का इसमे उल्लेख नही। (ii) इन्द्र, अग्नि, वरुण यम के अतिरिक्त वायु भी स्वयवर मे आता है। नल को दमयती के अत पुर म जाने का आदेश इन्द्र देते हैं। (iii) देवता यहां स्वयवर के उपरान्त नल को वरदान नहीं दते जसा उन्होने 'महाभारत मे दिया है। (iv) देवताओं की भेंट केवल कलि से होता है, द्वापर से नही। (v) नल ने वन म हसो के झुण्ड पर क्षघात्त होकर धोती नही फेंकी, वल्कि दमयती के अनुरोध से फेंकी। (vi) इसम हाथियो द्वारा साथ को रौंद जाने की घटना का उल्लेख नही है। दमयती साथ के साथ ही चेदि पहुँचती है। शेष कथा 'महाभारत के अनुसार है।

त्रिविक्रम भट्ट रचित नल चम्पू' या दमयती कथा मे भी राजा भीम का नि सन्तान होना उल्लिखित है। रानी को रात मे स्व न म शिवजी के दशन होते हैं, शिवजी उसे पारिजात मञ्जरी देते हैं और दमन ऋषि के आगमन की पूव सूचना द दते हैं। दमन ऋषि आकर राजा भीम को कन्या रत्न पाने का आशीर्वाद देते हैं। यहां भी

नल तथा दमयती मे परस्पर रूप गुण श्रवण जनित अनुराग है। इसमे जब नल हस को नही छोडते तब आकाशवाणी होती है कि यह दमयती को प्राप्त कराने में सहायक होगा, नल का दूतत्व करेगा। दोनो के हृदय मे एक दूसरे के लिए अनुरक्ति उत्पन्न करने का श्रेय हस को होता है। नल दमयती स पूव परिचित नही। आकाशवाणी से दमयती का नाम सुनकर नल हस से दमयती के बारे मे जानना चाहते हैं। इन्द्र वरुण, यम तथा कुवेर स ('महाभारत' म कुवेर की जगह अग्नि हैं) नल की भेंट तब होती है जब वे दमयती स्वयवर मे भाग लेने के लिए जा रहे होते हैं। इन्द्र आदि लोकपालो से स्वय नल ने ही पूछा कि मैं आपका क्या प्रिय करूँ ? इन्द्रादि देवो ने नल को दमयती के पास इस निमित्त भेजा कि वे दमयती के सामने देवों की प्रशसा करें और उनके प्रति उसम अनुराग उत्पन्न करें। नल ने भीम के अत पुर मे अदृश्य रूप म प्रवेश किया। दमयती अपने अत पुर म नल से प्रत्यक्ष वार्त्तालाप नही करती एक सखी के माध्यम से करती है। शील की दृष्टि से यह उद्भावना उत्तम है। 'नल चम्पू' म नल दमयती के अत पुर से लौटते ही नही। स्वयवर का क्या हुआ, पता नहीं। काव्य यहीं समाप्त हो गया है। 'महाभारत' के नलोपाख्यान का केवल पूर्वाद्ध ही इसमें है उत्तराद्ध इसम वर्णित नहीं है। दमयती स्वयवर का सन्देश ले जानेवाल ब्राह्मण के हाथ नल को श्लेषार्थ-गर्भित प्रेम सदेश भजती है जिसे पढकर नल और भी विरहाकुल हो जाते हैं।

'कथा सरित्सागर' के नवम लम्बक की छठी तरग म नल का जो आख्यान आया है वह मुख्यत महाभारत के नलोपाख्यान पर ही आधारित है। महाभारत की कथा जैसी सरलता इसम भी है। यहा भी यह दृष्टान्त कथा के रूप मे वर्णित है। महाभारत' मे नलोपाख्यान द्यूत क्रीडा मे सवस्व हार जाने के कारण होनेवाले दु ख को उदाहृत करने के लिए आया है किन्तु यहाँ राजा महिपाल की प्रोषितपतिका रानी वन्धुमति से एक ब्राह्मण यह कथा यह बताने के लिए कहता है कि वियोग के बाद सयोग अवश्यम्भावी है। यहाँ भी नल दमयती का आपस म रूप गुण-श्रवण जनित पूवराग चित्रित है। पर तु इसमे महाभारत के नलोपाख्यान की तुलना मे कुछ भिन्नताएँ भी हैं जो ये हैं (i) हस को पहले नल नही, दमयती पकडती है। हस मानव वाणी म अपने को छोड़ देने की प्राथना करता है और कहता है कि छोड दोगी तो नल के साथ तुम्हारा मिलन कराऊँगा। (ii) राजा भीम स्वयवर का आयोजन दमयती के कहने पर करते हैं। स्वयवर के लिए जाते हुए माग म नल की भेंट इन्द्र अग्नि वरुण और यम के अतिरिक्त वायु से भी होती है। दमयती जब लोकपालो (इन्द्रादि देवताओ) की निन्दा कर चुकती है तब नल अपने को प्रकट करते हैं। इन्द्रादि देवता स्वयवर स पहले ही नल का वर दते हैं—सबने यह वर दिया कि तुम्हारे इच्छा करते ही हम उपस्थित हो जाएँगे। (iv) यहाँ कलि और द्वापर दोनो नल स समान रूप से कुपित हैं। दोनो ही दम्पति का बिछोह कराने की प्रतिज्ञा करते हैं। (v) अधिक मदिरा पान स बेसुध होकर नल बिना सध्या वदन किये ही और बिना पर धोए शय्या पर चले जाते हैं। कलि को नल की देह मे प्रवेश करने का अच्छा अवसर हाथ लगता है। द्वापर पुष्कर की देह म

प्रवेश कर जाता है और उसे सत्य भ्रष्ट कर देता है। (vi) नल और पुष्कर म एक बल के लिए जूआ होता है। पुष्कर के पास दान्त नामक एक श्वेत और सुन्दर बल था। नल ने उस बल को मांगा। पुष्कर ने इ कार कर दिया। पुष्कर ने जूआ खेलने का प्रस्ताव रखा। शत यह रखी गयी कि जो जूआ में जीते, वह बल को ले। तीन दिनों तक जूआ होता रहा। बल के लिए जूआ होना कथा म नयी उद्भावना है। 'महाभारत' म इतना ही उल्लेख है कि कलि सांड के रूप में पुष्कर के साथ गया। 'महाभारत' मे दान्त भीम के एक पुत्र का नाम है किन्तु यहाँ बैल का है। (vii) इसम पुष्कर दमयती को दाँव पर लगाने का अपमानजनक सुझाव देता है। नल उसकी बात नही मानते और जूए म अपना सवस्व गवा बठता है। (viii) नल अपना उत्तरीय दो हसो पर फेंकते हैं। वे निपट नगे नहा हो जाते। आकाशवाणी होती है कि ये दोनो हस जूए की गोटें हैं। (ix) कामात व्याध जब दमयती पर बलात्कार करने को उद्यत होना है तब उसकी मृत्यु सप दश स हा जाती है। (x) कर्कोटक के विष प्रभाव स नल काले-कुरूप ही नही हो जाते, उनकी भुजाए भी छोटी हो जाती हैं। इस काव्य म नल का नाम 'बाहुक' नहीं 'ह्रस्वबाहु' है। कर्कोटक ने नल को 'अग्निधौत नामक' दो वस्त्र प्रदान किए जिनको पहनने से पूव रूप की प्राप्ति सम्भव हो सकती थी। (xi) चेदि जानेवाले ब्राह्मण का नाम इसमे सुदेव नहीं, सुषेण है और वह राजा भीम का मत्री है। (xii) पुष्कर की देह मे से जब द्वापर निकल गया, तब वह पुन धर्मात्मा हो गया। नल ने उस अपना आधा राज्य दे दिया। इन भिन्नताओं के अतिरिक्त कथासरित्सागर की कथा 'महाभारत' की कथा क समान है।

श्री हर्ष के नवषीय चरितम म नल हस को अपना दूत बनाकर दमयती के पास कुण्डिनपुर भेजते हैं। हस दमयती के सामने नल के रूप गुण और पराक्रम की प्रशसा करता है और उसके हृदय म नल के लिए अनुराग उत्पन्न करता है। इसम दमयती-स्वयवर म उपस्थित लोकपाल हैं इन्द्र अग्नि, वरुण और यम। यहाँ दमयती के पातिव्रत से प्रसन्न होकर देवता अपने असली रूप मे आ जाते हैं। इन्द्रादि देवता वापसी यात्रा में कलि से तक वितक करते हैं। कथा के अन्त म बताया गया है कि नल दमयती सुखपूवक रहने लगे, उनका दाम्पत्य प्रेम आदश था। देवहूरा—धन सम्पत्ति तथा सतति सब प्रकार स उनका जीवन आदश था। कथा मे कोई उत्तराद्ध नहीं है। अधिकाश कथा 'महाभारत' के आधार पर ही चली है।

(२८) नागो का पाताल लोक में वास

पाताल को नागलोक भी कहते हैं। कद्रू के महाविषधर नाग-पुत्रा के पाताल मे वास करने से ही उसका यह नाम पडा होगा। पुराणों में नागों के पाताल वास के निम्नलिखित उल्लेख मिले हैं—

'हरिवंश पुराण'[1] *म प्रसग आया है कि विष्णु ने बलि स प्राप्त त्रिलोक के राज्य* का जब विभाजन किया तब उन्होने नागराज अनन्त को नीचे की दिशा का राज्य दिया।

'पद्मपुराण'[2] मे नागतीर्थ महात्म्य के प्रसग म ऐसा उल्लेख आया है कि कश्यप मुनि की कद्रू स उत्पन्न नाग सतानो जिनम से अनन्त, वासुकि तक्षक महाबल, कर्कोटक, नागेन्द्र पद्म, महापद्म, शख कुलिक और अपराजित आदि मुख्य हैं के विष से जब मनुष्यो का नाश होने लगा तब प्रजा व्याकुल होकर ब्रह्माजी की शरण में गयी। ब्रह्मा न प्रजा को आश्वासन देकर विदा किया। फिर उन्हाने वासुकि आदि बड बडे सर्पो को बुलाया और उन्ह शाप दिया कि वैवस्वत मन्वन्तर म सोमवशी राजा जनमेजय के सर्प-यज्ञ म तुम्हारा विनाश होगा और गरुड तुम्हारा भक्षण किया करेंगे। तुम नागो के १०० कुल हैं, किन्तु जब तक तुम्हारा एक कुल भी बचा रहेगा, तब तक ऐसा ही होता रहेगा। ब्रह्मा के इस शाप का सुनकर समस्त नाग ब्रह्मा के चरणों म लोटने लगे और शाप मोचन का उपाय पूछने लगे। ब्रह्माजी ने वासुकि की बहन जरत्कारु का विवाह जरत्कारु ऋषि स करने का परामर्श दिया ताकि उनसे आस्तीक की उत्पत्ति हो सके। आस्तीक ही सर्प-यज्ञ म सर्पों को बचाएगा। ब्रह्मा ने यह भी कहा कि मैंने तुम्हारे रहने के लिए तुम्हे सुतल, वितल और हर्यक्ष (तलातल) का राज्य दे दिया है—पाताल तक सब तुम लोगो का ही स्थान रहेगा। ब्रह्माजी के इन वचनो को सुनकर सारे सर्प रसातल चले गये।

(२९) नारद-मोह की कथा

यो तो नारद का उल्लेख वैदिक साहित्य[3] स ही प्रारम्भ हो जाता है किन्तु पौराणिक साहित्य मे आकर इनस सम्बन्धित कथा का प्रादुर्भाव होने लगता है। वैदिक साहित्य म ये मन्त्रद्रष्टा ऋषि और अध्यापक के रूप म ही आते हैं किन्तु पौराणिक साहित्य म ये कुशल वीणा वादक सतत भ्रमणशील इधर की बात उधर करने वाले तथा नारी क व्यामोह म पडनेवाले देवर्षि के रूप म चित्रित हुए ह। इनका ब्रह्मा का मानस पुत्र माना गया है।[4] 'भागवत पुराण' म इन्हे ब्रह्मा का तीसरा अवतार और ब्रह्मा की जाँघ से उत्पन्न बताया है[5] और दासी पुत्र भी कहा है।[6] 'ब्रह्मवैवर्त्त पुराण' मे इनके

---

१ हरिवंश पुराण भविष्य पर्व ७२।५३ ५६ १/२

२ पद्म पुराण सृष्टि खण्ड अ ३१

३ ऋग्वेद ८ १३ तथा ९।१ ४ १ ५ अथर्ववेद ५।१९।६ तथा ७।४।१६ एतरेय ब्राह्मण ७।१३ छान्दोग्य उपनिषद् ७।१।१

४ मत्स्य पुराण ३।६ ८

५ भागवत पुराण १।३।८ तथा ३।१२।२८

६ वही १।५।६

कई जन्मो का उल्लेख हुआ है।[1] यहाँ नारद के नारी रूप पर विमोहित होने सम्बन्धी आख्यानों पर ही विचार किया जाएगा।

शिवपुराण[2] मे आगत आख्यान इस प्रकार है—नारद हिमालय पर तप कर रहे थे। उनके कठोर तप को देखकर इन्द्र को अपना आसन छिनने का भय हुआ। उसने कामदेव को उनकी तपस्या म विघ्न डालने के लिए भेजा, किन्तु कामदेव को भस्म करते समय शिव न उसे जो यह शाप दिया था कि हिमालय प्रदश मे तप करनेवालो पर तेरा प्रभाव नही पडेगा, उसके कारण उसका प्रयत्न निष्फल रहा। नारदजी को अपने कामजयी होने का अभिमान हो गया। उन्होंने ब्रह्मा और शिव के पास जाकर अपन इस पुरुषार्थ का बखान किया। ब्रह्मा और शिव ने उन्हें चेता दिया कि हमसे कहा सो कहा, कही ऐसे ही विष्णु के सामने जाकर अपनी डीग मत हाँकने लगना। पर नारद भला क्यो मानत ? व विष्णु के पास भी गय और कामदव से अप्रभावित रहने की शेखी बघारने लगे।

नारद क जाने पर विष्णु ने एक माया नगरी का निर्माण किया जिसका राजा शीलनिधि था। उसकी कन्या थी 'श्रीमती'। राजा ने उसका स्वयवर रचाया। माया-निर्मित बहुत से राजपुरुष उपस्थित हुए। समाचार पाकर नारदजी भी उसम पहुँचे। 'श्रीमती' को देखकर नारद काम मोहित हो गय। राजा ने नारद स कन्या की हस्त रेखाए दिखायी। नारद ने कन्या के भाग्य की प्रशसा की और यह भविष्यवाणी की कि कामजयी पुरुष उसका पति बनेगा। नारदजी सुन्दर रूप प्राप्त करने के लिए विष्णु के पास गये। उन्होने चूकि उन्हें हरि कहकर सम्बोधित किया और उनके जैसा ही रूप चाहा था, अत विष्णु ने 'हरि' का श्लेषार्थ 'बन्दर' लेकर नारद का मुख बन्दर जसा कर दिया। मर्कट मुख नारद श्रीमती के स्वयवर मे आये। उसमे विष्णु भी उपस्थित हुए। नारदजी ने अपने को सुन्दर जान इधर उधर बहुत मुह उचकाया पर श्रीमती न उनकी ओर ध्यान ही न दिया और वरमाला विष्णु के गले में डाल दी। विष्णु श्रीमती को लेकर वहाँ से अन्तर्धान हुए। शिवगणो ने नारद की खूब खिल्ली उडायी और उनके वानर रूप की जानकारी उन्हें करायी। क्रोधित होकर नारद ने शिव गणो को राक्षस होने का शाप दिया। क्रोध मे ही जलते भुनते वे विष्णु-लोक गये और विष्णु को शाप दिया कि तुम मनुष्य होकर प्रिया के विरह मे दुखी होगे और वानरो की ही सहायता से तुम्हें अपनी प्रिया प्राप्त होगी। विष्णु ने शिवेच्छा जानकर नारद का शाप तो ग्रहण कर लिया, किन्तु जसे ही अपनी माया हटायी नारद बहुत दुखी हुए, पश्चात्तापस्वरूप नारद ने शिवस्तोत्र का पाठ किया, पृथ्वी का भ्रमण किया। काशी भी गये। वहाँ उन्होने अपन द्वारा अभिशप्त शिवगणो को रावण की अवहेलना करने पर शाप मुक्त होने का वर दिया।

---

१ ब्रह्मवैवर्तपुराण ब्रह्म खण्ड ८।२१

२ शिवपुराण रुद्रसहिता सृष्टि खण्ड अ २५

'देवीभागवत पुराण'[1] मे त्रिया के कारण नारद के दु ख भोगने से सम्बन्धित एक दूसरी कथा दी हुई है। कथा इस प्रकार है—नारद मुनि और पवत मुनि दोनो एक बार पृथ्वी भ्रमण के लिए देवलोक से चले। चलते समय दोनो ने यह शपथ ली कि वे एक दूसरे स अपने मन के किसी भाव को नही छिपाएँगे चाहे वह कैसा भी श्लील या अश्लील हो। देवलोक से चलकर पहले वे भारतवष मे आये। यहाँ वे चातुर्मास बिताने के लिए राजा सजय के यहाँ ठहर गये। सजय ने अपनी नवयौवना कन्या दमयती को ऋषियो का आतिथ्य करने के लिए नियुक्त कर दिया। दमयती नारद के वीणा-वादन पर मोहित हो गयी। नारद भी उस पर आसक्त हो गये। उधर पवत भी अपने मन म दमयती के प्रति अनुरक्ति अनुभव करने लगा था। कि तु नारद की ओर आकर्षित होन से दमयती पवत की ओर उपेक्षाभाव रखने लगी। उसका यह भाव आतिथ्य म भी नारद के प्रति विशेष स्नेह एव सार समार तथा पवत के प्रति अनवधानता के रूप मे व्यक्त होने लगा। पवत ने अपने मन का स देह नारद पर प्रकट कर दिया। नारद ने भी सब सच सच बता दिया। पर तु चूकि नारद ने पूछने पर बताया स्वयमेव नही, अत पवत ने इस दुराव और शपथ भग के लिए उन्हे बन्दर मुख हो जाने का शाप दे दिया। नारद ने भी उन्हे प्रति शाप दिया कि तुम भी मत्युलोक म हो रहो और स्वग भ्रष्ट हो जाओ। दमयती के पिता ने उसको बहुत समझाया कि मकट-मुख नारद का ध्यान अपने मन से निकाल दे, किन्तु वह तो उनकी कला पर विमुग्ध थी, अत उसका विवाह नारद से हो गया। यों दमयती नारद का कभी अनुभव न होने देती थी कि उनके मकटमुख होने से वह उन्ह कम प्यार करती है पर नारद हीन भाव से ग्रस्त रहने के कारण सदा दु खी रहते थे। एक बार पवत मुनि घूमते फिरते अपने मित्र का हाल चाल लेने वहाँ आ गये। नारद को दु खी दखकर उन्होने अपना शाप वापस ले लिया। नारद ने भी अपना शाप लौटा लिया।

'भविष्य पुराण'[2] म भी नारद मोह की कथा आयी है जो शिव पुराण के अनुसार है। 'ब्रह्मववत्त पुराण'[3] मे आगत कथा उपयु क्त कथाओ से निता त भि न है। उसकी कथा इस प्रकार है—सृष्टि रचना करते हुए ब्रह्मा ने बहुत से ऋषियो के साथ नारद को भी उत्प न किया। ब्रह्मा ने सबको सतान पदा करने की आज्ञा दी। नारद भगवद्भक्ति म लीन रहते थे अत उन्होन पिता की आज्ञा नही मानी। ब्रह्मा न इन्हे शाप दिया कि नाना ज मा म भि न भि न योनियां म तू ज म लेगा और स्त्रियो के प्रति लोभी, लपट तथा शृ गाराभिलाषी आदि होगा। ब्रह्मा के शाप के कारण नारद एक ज म मे उपबहण नाम से गधव कुल मे पदा हुए और दूसरे ज म मे द्रुमिल शूद्र के यहाँ शूद्रापुत्र तथा तीसरे ज म मे पुन ब्रह्मा के मानस पुत्र हुए।

---

१ देवी भागवत पुराण ६।२६ २७

२ भविष्य पुराण उत्तराद्ध अ० ३

३ ब्रह्मववर्त्त पुराण ब्रह्म खण्ड ८ २१

लिंग पुराण'[1] मे नारदमोह की कथा मे लिंग पुराण और देवीभागवत पुराण का कथाओ का मिश्रित रूप उपलब्ध होता है। यहाँ 'श्रीमती' राजा अम्बरीष की कन्या है। नारद और पवत मुनि के यहाँ जाने पर राजा 'श्रीमती' को दोनो का आतिथ्य करने क लिए नियुक्त करता है। दोनो मुनि उस पर कामासक्त हो जाते हैं। अम्बरीष ने इन मुनियों की बला टालने के लिए स्वयवर का आयोजन किया। नारद और पवत दोनो अलग अलग विष्णु के पास गये और एक ने दूसरे को वानर मुख बनाने के लिए विष्णु से निवेदन किया। विष्णु ने दोनो का मन रखने के लिए दोनो का वानर मुख बना दिया। अपने इस रूप से अनजान दोनो ऋषि 'श्रीमती' के स्वयवर मे गय। श्रीमती उनको इस रूप मे देखकर घबरायी। तभी दोना के मध्य एक सुदर राजकुमार (विष्णु) प्रकट हुआ। श्रीमती' ने उसके गले म जयमाला डाल दी और वह उसे लेकर चला गया। नारद और पवत ने अम्बरीष को ही दोषी मानकर उसे शाप दिया कि तेरा नान नष्ट हो जाएगा। अम्बरीष विष्णु का भक्त था, अत उनका सुदशन चक्र तथा अज्ञान-रूपी तम नारद और पवत दोनो के पीछे पडे। अन्तत दोनो ऋषि विष्णु की शरण मे आय। विष्णु ने तम को स्वय ग्रहण कर लिया और नारद पवत को अभय प्रदान किया।

'अदभुत रामायण'[2] म 'श्रीमती के स्वयवर तक की कथा तो ऊपर लिखे अनुसार ही है पर यहाँ नारद और पवत ने अम्बरीष को शाप न देकर विष्णु को दिया है। उनका शाप यह था—तुमने छल से श्रीमती' का हरण किया है, अत तुम्हारी भार्या का भी कोई दैत्य छलपूवक हरण करेगा और तुम हमारी तरह ही दुखी होओगे। तुमको भी अम्बरीष के वश मे दशरथ का पुत्र बनना पडेगा और यह 'श्रीमती' जनकनन्दिनी बनेगी।

'रामचरित मानस'[3] मे हेतु कथा के रूप मे नारद मोह की कथा विशद रूप से वर्णित है। शिव पुराण' की कथा से 'रामचरित मानस की कथा प्रभावित है। राम चरित मानस म हिमालय पर तप करने वाला पर कामदेव का प्रभाव न पडने वाली बात नहीं मिलती। श्रीमती की जगह कन्या का नाम 'विश्वमोहिनी' है।

(३०) नृसिंहावतार की कथा

✓तैत्तिरीय-ब्राह्मण'[4] मे कयाधु, प्रह्लाद तथा विरोचन के नामो का उल्लेख आता है। प्रह्लाद हिरण्यकश्यपु तथा कयाधु का पुत्र था।[5] प्रह्लाद का नाम नारद, पराशर,

---

१ लिंगपुराण उत्तरार्द्ध अ ५

२ अद्भुत रामायण सर्ग ३ ४

३ रामचरितमानस बालकाण्ड १२४।५ १८७।६ अरण्यकाण्ड ४१।६ उत्तरकाण्ड ५६।६ ६४।८ और ७०।६ ७

४ तैत्तिरीय ब्राह्मण ११५।६

५ महाभारत आदि पव ६५।१७-१९, विष्णु पुराण १।१६ भागवत पु० ७।४

व्यास तथा अम्बरीष जसे भगवदभक्तों के साथ लिया जाता है।[1] 'महाभारत' म इनके भक्त रूप की झांकी नहीं मिलती। पुराणो मे आकर ही इनके इस रूप का विकास हुआ है।

महाभारत[2] मे दशावतार वणन के प्रसंग में हिरण्यकश्यपु वध का वणन है। हिरण्यकश्यपु साढे ग्यारह हजार वष तपस्या करता है और देवता, असुर गधव, यक्ष, नाग राक्षस, मनुष्य, पिशाच किसी से भी न मारे जाने का वर ब्रह्मा से प्राप्त करता है। न शस्त्र से न अस्त्र स न पवत से न वक्ष से, न सूखे म न गीले म न अन्य किसी आयुध से मारे जान का वर ले लेता है। न रात म न न्दिन म, न भीतर, न बाहर, न आकाश मे, न पथ्वी पर मारे जाने की छूट पा लेता है। वर पाकर वह देवताओ पर अत्याचार करने लगा। देवताओ ने राज्यच्युत होकर ब्रह्मा स फरियाद की। ब्रह्मा न विष्णु से कहा। विष्णु नसिह रूप धारण कर हिरण्यकश्यपु की राज सभा म गये। वहाँ दत्या ने उन पर आक्रमण कर दिया। हिरण्यकश्यपु ने भी वार किया। नसिह ने उस पकडकर, राजभवन की देहली पर बैठकर अपनी जांघो पर उसे रखकर उसको अपने नखो से विदीण कर दिया। 'हरिवश पुराण'[3] म भी हिरण्यकश्यपु-वध की कथा आयी है जो 'महाभारत के अनुसार है। यहाँ प्रह्लाद नृसिह मे विराट रूप मे दशन करते हैं। नसिहावतार देवताओ के हिताथ हुआ है।

ब्रह्मपुराण[4] म भी दो जगहो पर यह कथा आयी है। अ० १४६ म आगत कथा सक्षिप्त है। नृसिह खम्भे से प्रकट हुए। प्रह्लाद की भक्ति का उल्लेख नही हुआ है। अ०२१३ म हिरण्यकश्यपु और वरदान प्राप्ति का उल्लेख महाभारत के अनुसार है। यहाँ नसिह खम्भे से प्रकट नही होते, चलकर दरबार म जाते हैं।

'पदमपुराण'[5] मे तीन स्थलो पर पर प्रह्लाद और हिरण्यकश्यपु तथा नृसिहावतारी भगवान द्वारा हिण्यकश्यपु के वध की कथा आयी है। सष्टि खण्ड की कथा महाभारत के सभापर्व की कथा के अनुसार ही है।

यहाँ विष्णु ने प्रह्लाद के लिए हिरण्यकश्यपु का वध नहीं किया वरन देवताओ को उसके त्रास से मुक्त करने के लिए। प्रह्लाद को दी जाने वाली यातनाओ का भी यहाँ वणन नही है। उसके भक्त रूप का भी इतना ही परिचय मिलता है कि उसने नसिह भगवान के दि्य रूप को देख विस्मय प्रकट किया और श्रद्धाभिभूत हुआ। पदम पुराण, उत्तरखण्ड अध्याय १७४ मे नृसिह हिरण्यकश्यपु का वध करने के अनन्तर प्रह्लाद को गोद मे बठाकर उसके पूवज म की कथा सुनाते हैं और कहते हैं कि मरी भक्ति से से ही तरा उद्धार हुआ है।

---

१ भागवत पुराण ७।१।२१
२ महाभारत सभापर्व ३८।२६ के बाद पृ ७८५ ७८६
३ हरिवश पुराण भविष्य पव ४१ ४७
४ ब्रह्मपुराण अ १४६ २१३
५ पदम पुराण सष्टि खण्ड अ० ४७ तथा उत्तर खण्ड अ० १७४ और २३७।२३८

पदमपुराण' उत्तरखण्ड, अ० २३७ २३८ मे हिरण्यकश्यपु को रुद्र से अवध्यता का वर प्राप्त होता है। हिरण्यकश्यपु प्रह्लाद की ईश्वर भक्ति के कारण उस पर नाना प्रकार के अत्याचार करता है। प्रह्लाद की रक्षा के लिए नृसिंह भगवान खम्भे म से प्रकट होते हैं और हिरण्यकश्यपु को मार डालते हैं। सष्टि-खण्ड की कथा और इसमे यह अन्तर है कि यहाँ प्रह्लाद की रक्षा के लिए नसिंहावतार होता है और सृष्टि-खण्ड म दव रक्षाथ।

'विष्णुपुराण'[१] मे प्रह्लाद को दिये गये कष्टो का वणन विस्तार से किया गया है, किन्तु हिरण्यकश्यपु के वध का केवल सकेत मात्र हुआ है। ब्रह्मा का वर पाकर हिरण्यकश्यपु अभिमानी, अत्याचारी और मद्यप बन गया। उसने अपन पुत्र प्रह्लाद को शिक्षा प्राप्त करने के लिए गुरु गह भेजा। एक दिन उसने प्रह्लाद से उसके गुरु का पढ़ाया पाठ सुनना चाहा। प्रह्लाद ने विष्णु की महिमा गा सुनायी। अपने शत्रु का गुणानुवाद सुनकर हिरण्यकश्यपु क्रोधित हो गया। उसन प्रह्लाद का वध करने की आज्ञा दी। दत्यो न प्रह्लाद पर शस्त्रो से वार किया उसे सप स डॅसवाया हाथियो के परो के नीचे डाला अग्नि म जलाया, पर प्रभु-कृपा से उसका बाल भी बाँका न हुआ। प्रह्लाद न अब तो पाठशाला के अन्य बालको को भी विष्णु भक्ति के रग मे रगना आरम्भ कर दिया। हिरण्यकश्यपु को समाचार मिला। उसकी आज्ञा से रसोइयो ने प्रह्लाद क भोजन म महाविष मिला दिया, पर प्रह्लाद उस भी पचा गया। पुरोहितो ने कृत्या को उत्पन्न किया पर उसन उन्ही को भस्म कर दिया। प्रह्लाद न भगवान से प्राथना कर पुरोहितो को पुन जीवित कर दिया। सभी दत्य चकित हुए। हिरण्यकश्यपु की आज्ञा स प्रह्लाद को प्रासाद पर से गिराया गया, पर वह अक्षत रहा। शुक्राचाय के कथन पर उसको नागपाश म बाँध कर पवतो से फेंका गया, पर उसका कुछ न बिगडा। उस नदी मे डबाया गया, पर भगवान ने वहाँ भी उसे दशन दिये। इसके उपरान्त प्रह्लाद माता पिता की सेवा करने लगा, उन्होने उसको आशीर्वाद दिया। हिरण्यकश्यपु वध की घटना का उल्लेख अन्त मे केवल एक श्लोक[२] म दिया गया है।

'वायु पुराण'[३] म हिरण्यकश्यपु का यह नाम क्यो पडा, इसकी कथा देने के बाद उसक एक लाख वष तक निराहार रह कर नीचे को सिर करके कठिन तपस्या करन तथा ब्रह्मा से अवध्यता का वर प्राप्त करने की कथा मिलती है। नसिंह द्वारा हिरण्यकश्यपु वध की कथा यहाँ 'पदम पुराण उत्तरखण्ड के अनुसार ही दी है।

'शिवपुराण'[४] म यह कथा दो स्थलो पर आती है। रुद्रसंहिता, युद्धखण्ड की कथा म हिरण्यकश्यपु के तप का तो वणन है पर उसकी अवधि का नहीं। पैर के एक अगूठे के बल खडे रह कर आकाश की ओर वह तब तक देखता रहा, जब तक उसके

१ विष्णु पराण १।१७ २०
२ वही १।२०।३२
३ वायु पराण अ० ६७
४ शिव पुराण रुद्रसंहिता युद्ध खण्ड अ० ४३ और शतरुद्रसंहिता अ० १ १२

सिर से धुआ न उठने लगा और उस धुएँ से समस्त ब्रह्माण्ड न जलने लगा। शेष कथा 'पदम पुराण' सृष्टिखण्ड और 'महाभारत' के सभापर्व की कथा के समान है।

इसी पुराण के शतरुद्रसंहिता, अ० १० १२ म जो कथा आयी है, उसम हिरण्यकश्यपु दस सहस्र वष तक तपस्या करता है। कथा 'पदम पुराण' उत्तरखण्ड के समान है परन्तु कुछ भिन्नताएँ भी हैं—नृसिह भगवान द्वारा हिरण्यकश्यपु का वध किय जान के बाद की भी एक कथा यहा दी हुई है जो अयत्र नही मिलती। कथा यह है हिरण्यकश्यपु का वध तो हो गया, पर देवताओ को फिर भी शान्ति न मिली। नसिह की कोप ज्वाला से वे जलने लगे। देवताओ ने प्रह्लाद को विष्णु के पास भेजा। विष्णु ने प्रह्लाद को हृदय से लगाया इससे उनका हृदय शान्त हुआ, पर क्रोध कम न हुआ। देवताओ ने शिव की स्तुति की। शिव ने उन्हें अभय देकर अपने गण वीरभद्र को नसिह के पास भेजा। जिस समय वीरभद्र नसिह से बात कर रहे थे, उसी समय शिव शक्ति के रूप म आविर्भूत हुए और उन्होने नसिह की कान्ति को फीका कर दिया। इसके उपरान्त नसिह को शिव ने कभी नीचे पटका, कभी आकाश म उछाला। वीरभद्र ने भी नसिह को दबोच लिया। तब देवताओ ने नृसिह की मुक्ति के लिए शिव से प्रार्थना की। शिव ने उन्हें छोड दिया। यहाँ विष्णु पर शिव की महत्ता दिखाने के लिए ही यह नयी उदभावना की गयी जान पडती है।

'श्रीमदभागवत पुराण'[1] मे प्रह्लाद और हिरण्यकश्यपु की कथा विस्तार से वर्णित है। यहाँ भी हिरण्यकश्यपु को ब्रह्मा से उन सारी वस्तुओ एव परिस्थितियो स जिनका उल्लेख 'हरिवंश पुराण' म है, अवध्यता का वर प्राप्त हुआ है। यहाँ हिरण्यकश्यपु के अत्याचार स प्रह्लाद की रक्षा करने के निमित्त नृसिहावतार हुआ है। प्रह्लाद गुरु गृह म रहते हुए अन्य विद्यार्थियो को भगवदभक्ति का वह उपदेश सुनाता है जो उसे माता के गर्भ म रहते हुए, नारद मुनि स उनके आश्रम मे सुनने को मिला था। प्रह्लाद के प्रभाव स सभी बालक भगवदभक्त हो गये। हिरण्यकश्यपु को जब पता चला तब वह प्रह्लाद को खम्भे स बाध कर मारने उठा। तभी नसिह स्तम्भ से प्रकट हो गये। उन्होने अपनी जाँघ पर रख कर दैत्यराज को अपने तीक्ष्ण नखो से मार डाला। नृसिह ने प्रह्लाद को कई वर देने चाहे पर प्रह्लाद ने भगवदभक्ति के अतिरिक्त और कोई वर नही माँगा।

'अग्नि पुराण'[2] म यह कथा सक्षेप में आयी है और 'पदम पुराण' के सृष्टिखण्ड के अनुसार है। यहाँ देवताओ की मुक्ति के लिए नसिहावतार होने का वर्णन है शेष कथा म कोई नवीनता नहीं।

'लिंग पुराण'[3] म वर्णित कथा शिवपुराण शतरुद्र संहिता की कथा स मिलती-

---

१ भागवत पुराण ७।२ १०
२ अग्नि पुराण अ० ४
३ लिंग पुराण पूर्वार्द्ध अ ९५

जुलती है। यहाँ भी हिरण्यकश्यपु के वध के उपरान्त अत्यन्त क्रुद्ध नृसिंह को शान्त करने के लिए शिव को शक्ति (शरभ) रूप धारण करना पडा है। शतरुद्रसहिता म शिव ने नसिंह का मान मजन कर छोड दिया था परन्तु यहाँ शरभ ने उन्हे समाप्त ही कर दिया है।

'कूर्म पुराण'[1] म हिरण्यकश्यपु-वध और प्रह्लाद की ईश्वर भक्ति की कथा सवथा नवीन रूप मे मिलती है। कश्यप की दिति नामक पत्नी से दो पुत्र उत्पन्न हुए। हिरण्यकश्यपु और हिरण्याक्ष। दोनो ने तप करके ब्रह्मा से अनेक वर प्राप्त किये। वर पाकर य देवताओ को सताने लगे। देवतागण विष्णु के समीप पुकार लेकर पहुँचे। विष्णु न उन्हें अभय देकर भेजा और अपने शरीर स ही चार हाथ वाला एक पुरुष उत्पन्न किया और उसे दोनो दैत्या का वध करने की आज्ञा दी। विष्णु द्वारा यह व्यक्ति गरुड पर आसीन होकर हिरण्यकश्यपु की नगरी मे पहुचा। उसका दैत्यों से घमासान युद्ध हुआ। हिरण्यकश्यपु ने उसके वक्षस्थल पर एक लात मारी। वह दिव्य पुरुष लात खाते ही अन्तर्द्धान हो गया और तुरन्त नसिंह के रूप मे प्रकट हुआ। हिरण्यकश्यपु ने अपन पुत्र प्रह्लाद को नसिंह से युद्ध करन के लिए भेजा। नृसिंह ने प्रह्लाद को पराजित किया। प्रह्लाद ने नसिंह की दिव्यता को समझ लिया और उन पुराण पुरुष की स्तुति की। हिरण्याक्ष नसिंह से जा जूझा। प्रह्लाद ने आग्रह करके हिरण्याक्ष को युद्ध से विरत किया। हिरण्यकश्यपु नृसिंह से युद्ध करने के लिए चला। प्रह्लाद ने उसे बहुत रोका, पर उसके सिर पर तो काल नाच रहा था। नृसिंह ने हिरण्यकश्यपु को युद्ध मे मार डाला।

इस कथा मे नवीनता यह है कि इसमे (१) प्रह्लाद और नसिंह के बीच युद्ध कराया गया है। (२) पद्म विष्णु तथा वायु आदि पुराणो मे विष्णु का हिरण्याक्ष को मारने क लिए वराहावतार नसिंहावतार से पहले ही हो चुकता है, परन्तु यहाँ नसिंहावतार के समय हिरण्याक्ष को जीवित दिखाया है। (३) यहाँ जाँघ पर बिठाकर नखो से हिरण्यकश्यपु का वध होता नहीं दिखाया गया है। (४) हिरण्यकश्यपु और विष्णु म यहा दो बार युद्ध हुआ है।

'मत्स्य पुराण'[2] मे यह कथा 'पद्म पुराण' सृष्टिखण्ड और महाभारत' के समान ही वर्णित है। यहाँ भी देवताओ का दु ख दूर करने के लिए विष्णु नृसिंहावतार लेते हैं, प्रह्लाद क कारण नही।

---

१ कूर्म पुराण पूर्वार्द्ध अ १६

२ मत्स्य पुराण अ० १६ १६२

(३१) परशुराम द्वारा सहस्रबाहु तथा अन्य क्षत्रियो का सर्वान्त करना

परशुराम और उनके पिता जमदग्नि का उल्लेख वदिक साहित्य मे भी मिलता है। ऋग्वेद[1] मे राम भार्गवेय का एक सूक्त है। जमदग्नि का उल्लेख ऋग्वेद म कई स्थानो[2] पर है। अथर्ववेद म भी उनकी कथा आती है।[3] इनके अतिरिक्त भी कई सहिताओं और ब्राह्मणो म उनका उल्लख है। त्तित्तिरीय सहिता मे उनको विश्वामित्र का मित्र और वसिष्ठ का शत्रु कहा गया है।[4]

'वाल्मीकि रामायण'[5] मे परशुराम का उल्लख प्रासगिक रूप म नही, वरन् कथा के एक पात्र क रूप म हुआ है। उनको जमदग्नि का पुत्र और भृगुवशी कहा गया है। व क्षत्रिया के शत्रु थ ऐसा न कह कर उनको 'राजाओ का शत्रु' ('राजराजविमर्दिनम') कहा है।[6] उनके आयुधो म फरसा (परशु) और धनुष मुख्य थे। सहस्रबाहु ने जमदग्नि को मारा था और परशुराम ने सहस्रबाहु को मार कर अपने पिता की हत्या का बदला क्षत्रियो का नाश करके चुकाया था। इसका उल्लेख भी 'वाल्मीकि रामायण' म इन शब्दो म मिलता है— ऋषिगण आपस म कहने लगे कि पिता के मारे जान के क्रोध म भर परशुराम जी क्षत्रिया का नाश करने को तो कही नही आय? क्षत्रिया का नाश कर पहल तो इनका क्रोध शान्त हो चुका है तो क्या ये फिर क्षत्रियो का विनाश करने पर तुल हैं?[7] आगे फिर क्षत्रिया पर इनके क्रोध की बात कही गया है।[8] इसके अनन्तर सहस्रबाहु और परशुराम की कथा परशुराम के ही मुख से कहलायी है, जिसमे उल्लेख है कि जमदग्नि ने शस्त्र धारण करना त्याग तप करना आरम्भ किया। मूर्खतावश सहस्र बाहु न जमदग्नि को मार डाला।[9] परशुराम ने जब अपने पिता की निमम हत्या का समाचार सुना, तब उन्होने क्षत्रियो को, जसे वे उत्पन्न होते गये, वसे वस मारने का अभियान जारी रखा। पुन सारी पृथ्वी का राज्य हस्तगत कर उन्होने उस कश्यप को यज्ञ की दक्षिणा स्वरूप दे दिया।[10] वाल्मीकि रामायण म भी परशुराम को विश्वामित्र

---

१ ऋग्वेद १०।११०
२ वही ३।६२।१८ ८।१०१।८ ६।६२।२४ ६।६५।२५
३ अथर्ववेद २।३२।३ और ५।१८।१०
४ त्तित्तिरीय सहिता ३।१।७।३
५ वाल्मीकि रामायण बालकाण्ड सग ७४ ७५
६ वही, बाल० ७४।१८
७ वही बाल० ७४।२२।२३
८ वही बाल० ७५।६
९ वही बाल० ७५।२४
१० वही बाल ७५।२६ ७

का सम्बन्धी बताया है।[1]

महाभारत में परशुराम द्वारा क्षत्रियों के सहार और सहस्रबाहु के वध की कथा आदिपव,[2] सभापव,[3] वनपव,[4] द्रोणपव,[5] शान्तिपव,[6] तथा आश्वमेधिक पव[7] में वर्णित है। आदि पव के द्वितीय अध्याय म उग्रश्रवा सौति द्वारा सुनायी कथा मे कहा गया है कि परशुराम जी ने त्रेता और द्वापर की सन्धि के समय क्रोधित होकर अनेक बार क्षत्रियवश का सहार किया समन्तपचक क्षेत्र (कुरुक्षेत्र) मे रक्त के पाँच सरोवर बना दिये। फिर रक्ताजलि से पितरों का तपण किया। पितर प्रसन्न हुए। वर देने की इच्छा प्रकट की। परशुराम ने वर मागा कि क्षत्रियवश के नाश के कुकमजनित पाप से मैं मुक्त हो जाऊँ। पितरो ने वर दिया और कहा कि 'अब बचे खुचे क्षत्रियवश को क्षमा कर दो। परशुराम ने उनका कहना मान लिया।

इसम क्षत्रियो पर परशुराम के क्रुद्ध होने क कारण क्षत्रियों का सहार २१ बार करने और सहस्रबाहु को मारने का उल्लेख नही है।

आदि पव क ६४ वें अध्याय मे कथा का उल्लेख सक्षेप म हुआ है। उससे इतना ही पता चलता है कि जामदग्नेय परशुराम इक्कीस बार पृथ्वी को क्षत्रियों से रहित करन क बाद महेन्द्र पवत पर तपस्या करने चले गय। क्षत्राणिया न पुत्र की अभिलाषा स ब्राह्मणा की शरण ग्रहण की।

'सभा पव' क ३८ वें अध्याय की कथा विष्णु के दत्तात्रय अवतार के प्रसग म कही गयी है। हैहयवशी अर्जुन न दत्तात्रेय की सेवा कर उनसे वर प्राप्त किया कि (१) सौ भुजाओवाला हो जाऊँ, (२) जरायुज और अण्डज जीवो के साथ समस्त चराचर जगत का शासक बनू (३) शत्रुओ का विनाश करू देवताओ का यजन करू और (४) जिसके समान इहलोक या स्वगलोक म कोई न हो, वही मेरा वध करे। यह अर्जुन कृतवीय का पुत्र था। महिष्मती नगरी म दस लाख वर्षों तक उसने राज्य किया। वह जब समुद्र में चलता था तब उसके वस्त्र नही भीगते थे। इसी सहस्रार्जुन का सहार करने के लिए परशुराम अवतार हुआ। परशुराम भगुवशी जमदग्नि के पुत्र थे। उन्होंने सरस्वती नदी के तट पर एकत्र ६ लाख ४० हजार क्षत्रियो पर विजय पायी थी, इनम से १४ हजार को परशुराम ने अकेले अपने धनुष बाण स मार डाला। फिर १० हजार क्षत्रियो को मारा। उन्होने पृथ्वी को इक्कीस बार क्षत्रिया से शून्य कर दिया था। सहस्रार्जुन को उसके रथ के नीचे गिराकर इन्होने उसे मार डाला।

---

१ वही बाल ७६।६
२ महाभारत आदि पव २।३ १० ६४।४ ५
३ वही सभा पव ३८।२९ क बाद दाक्षिणात्य पाठ प ७९१ ७९३
४ वही वन पव अ० ११५ ११७
५ वही द्रोण पव अ ७०
६ वही शान्ति पव ४८ ४९
७ वही आश्वमेधिक पव २९।११ १८

'वन पर्व' में सहस्रार्जुन के कथा प्रसंग में इस घटना का उल्लेख हुआ है। सहस्रार्जुन ने कर्कोटक नाग से महिष्मती या भोगवती नगरी को जीतकर उसे अपनी राजधानी बनाया। रावण आदि नृपतियों को हराया। फिर उसे अहंकार हो गया। वह प्रजा को त्रास देने लगा। भगवान विष्णु ने प्रजा की रक्षा के लिए परशुराम अवतार लिया। शिव ने सहस्रार्जुन के संहार के लिए परशुराम को कई शस्त्रास्त्र दिये। परशुराम ने उसकी भुजाएँ काट डाली और मार डाला। जब वे लौट कर आये तो जमदग्नि ने उनका यह कार्य अनुचित बताया। पाप मार्जन के लिए उन्हें तीर्थ यात्रा पर भेज दिया। इसी बीच, कार्त्तवीर्य के पुत्रों ने जमदग्नि का वध कर दिया। तीर्थ-यात्रा से लौटने पर परशुराम को पता चला। माता की सान्त्वना के लिए उन्होंने २१ बार पृथ्वी को निःक्षत्रिय बनाने की प्रतिज्ञा की। कार्त्तवीर्य के सब पुत्रों को मार दिया।

'द्रोण-पर्व'[1] की कथा में कहा गया है कि सहस्रबाहु के क्षत्रिय सैनिकों द्वारा कामधेनु के बछड़े को पकड़ लेने और जमदग्नि को मार डालने से क्रोधित होकर परशुराम ने लाखों हैहयवंशी क्षत्रियों का वध कर दिया और इक्कीस बार क्षत्रियों से पृथ्वी को शून्य किया।[1] फिर पृथ्वी को कश्यप को दान कर दिया। कश्यप ने इन्हें पृथ्वी से निकाल दिया। ये अपना धनुष बाण समुद्र में फेंककर महेन्द्र गिरि पर निवास करने चल पड़े।

'शान्ति पर्व' में वर्णित आख्यान में परशुराम का जन्म ऋचीक ऋषि द्वारा प्रदत्त चरु के द्वारा होना लिखा है। परशुराम ने गन्धमादन पर्वत पर तपस्या कर शिव जी से अनेक अस्त्र और एक तेजस्वी कुठार प्राप्त किये। हैहयवंश में कृतवीर्य हुआ। उसका पुत्र अर्जुन था। अर्जुन ने दत्तात्रेय भगवान की कृपा से हजार भुजाएँ प्राप्त कीं। उसे आपव ऋषि ने शाप दिया कि परशुराम जी युद्ध में तेरी सारी भुजाएँ काट डालेंगे। जमदग्नि मुनि की होम धेनु के बछड़े को चुराने का कार्य सहस्रार्जुन के दो कुमारों ने उसके अनजान में किया। इस अपराध के कारण परशुराम ने अर्जुन की सब भुजाएँ काट डालीं और बछड़े को वापस ले गये। इसके बाद अर्जुन के मूर्ख पुत्रों ने क्रोधित होकर महात्मा जमदग्नि के आश्रम पर जाकर उनका सिर काट डाला। आश्रम में आने पर परशुराम ने जब अपने पिता को मृत देखा तब उनके क्रोध की सीमा न रही। उन्होंने पृथ्वी को क्षत्रिय विहीन करने की प्रतिज्ञा की। पहले कार्त्तवीर्य के पुत्र पौत्रों का संहार किया और पृथ्वी को क्षत्रियों से विहीन करके वे वन में चले गये। विश्वामित्र के पौत्र परावसु के ताना देने पर उन्होंने अपना क्षत्रिय नाश अभियान पुनः आरम्भ कर दिया, गर्भस्थ शिशु ही किसी प्रकार बच पाये। इस प्रकार उन्होंने इक्कीस बार पृथ्वी को क्षत्रियों से रहित कर दिया। फिर अश्वमेध यज्ञ किया और उसकी दक्षिणा के रूप में पृथ्वी कश्यप मुनि को दान कर दी। कश्यप ने उन्हें अपने राज्य से निकल जाने की आज्ञा दी और दक्षिण समुद्र-तट पर शूर्पारक देश में इन्हें भेज दिया, ताकि रहे-सहे क्षत्रियों

---

१ वही द्रोण पर्व, ७०।२०

को बचाया जा सके।

'आश्वमेधिक पर्व' वाली कथा में कार्त्तवीर्य अर्जुन को जन्म से ही सहस्रभुजाओं वाला बताया गया है। एक बार उसने अपने बल के घमण्ड में सैकड़ों बाण बरसा कर समुद्र को आच्छादित कर दिया। समुद्र प्रकट हुए। कार्त्तवीर्य ने उनसे अपने समान वीर और धनुर्धर का पता पूछा। समुद्र ने जामदग्नेय परशुराम का नाम बता दिया। कार्त्तवीर्य जमदग्नि आश्रम पर पहुँचा और अपने प्रतिकूल आचरण से उसने परशुराम को क्रोधित कर दिया। परशुराम ने फरसा उठाकर उसकी सहस्र भुजाएँ काट डाली। सहस्रार्जुन-वध के उपरान्त उसके बन्धु बान्धव परशुराम पर टूट पड़े। परशुराम ने उनका संहार कर दिया। बहुत से क्षत्रिय उनके डर से गुफाओं में घुस गये। ब्राह्मणों से नियोगजनित क्षत्रिय बालकों को भी उन्होंने मार डाला और एक एक कर इक्कीस बार पृथ्वी को क्षत्रिय शून्य किया। अन्त में अपने पितामहों की आकाशवाणी सुनकर परशुराम क्षत्रिय संहार से विरत होकर तप करने चले गये। इसमें स्पष्ट उल्लेख नहीं कि सहस्रार्जुन तथा उसके बन्धु बान्धवों ने जमदग्नि का वध किया। सहस्रार्जुन को मिले वरदान का भी उल्लेख नहीं है।

'हरिवंश पुराण'[1] में आयी कथा में अन्य बातें तो 'महाभारत' के सभा पर्व की कथा के अनुसार हैं किन्तु एक बात इसमें विशेष है सहस्रार्जुन की जन्म-कथा। कार्त्तवीर्य (सहस्रार्जुन) की माता का नाम राकावती था। उसके पिता कृतवीर्य ने शिव पूजा में कुछ भूल कर दी, फलस्वरूप वह करहीन जन्मा था। माता पिता इस कारण से बहुत दुःखी थे। एक बार दत्तात्रेय मुनि कृतवीर्य के यहाँ आये। राजा ने दत्तात्रेय को अपना वह पुत्र दिखाया। दत्तात्रेय ने उसे एकाक्षर मन्त्र का जप और बारह वर्ष तक गणेश की आराधना करने को कहा। प्रसन्न होकर गणेश ने इसे सुन्दर देह तथा सहस्र हाथ दिये। इसी से इसका नाम 'सहस्रबाहु' या 'सहस्रार्जुन' पड़ा। दत्तात्रेय की इसने बहुत सेवा की। उन्होंने इसे कई वर दिये थे।

'ब्रह्मपुराण'[2] में आयी कथा में सिवाय इसके कोई विशेष बात नहीं कि सहस्रबाहु ने या उसके सैनिकों ने जमदग्नि का वध नहीं किया अपितु वे जमदग्नि की गाय के बछड़े को बलात खींच ले गये थे। परशुराम तपस्या के लिए बाहर गये हुए थे। लौट कर आये तो पिता ने सब बताया। परशुराम ने कार्त्तवीर्य से नर्मदा तट पर युद्ध किया और उसे पराजित करके उसकी सहस्र भुजाएँ काट डाली।

'पद्म पुराण'[3] में आयी कथा में परशुराम को विष्णु का अवतार बताया गया है। कश्यप ने इन्हें मन्त्रोपदेश दिया था। इनके पिता जमदग्नि के पास कामधेनु थी। एक बार जब राजा कार्त्तवीर्य शिकार खेलता हुआ जमदग्नि के आश्रम में पहुँचा तब ऋषि

---

१ हरिवंश पुराण हरिवंश पर्व अ० ३३
२ ब्रह्म पुराण अ० १३
३ पद्म पुराण उत्तर खण्ड २४१-२४८

ने उस कामधेनु के बल से ससन्य राजा का राजसी सत्कार किया। कार्त्तवीर्य को बड़ा आश्चय हुआ। उसने मुनि से कामधेनु को माँगा। मुनि ने नित्य-नमित्तिक कार्यों मे हव्यादि द्रव्यो की उपलब्धि मे सहायक होने के कारण राजा को धेनु देना अस्वीकार कर दिया। राजा ने बलात धेनु को छीनना चाहा। धेनु ने ऋषि स रक्षा की प्राथना की। ऋषि ने अपने को उसकी रक्षा करने म असमथ बताया। तब धेनु ने फुंकारा और अपनी सीगो से राजा की सारी सेना को तितर बितर कर दिया और स्वय स्वग चली गयी। बाद की कथा महाभारत और ब्रह्मपुराण के अनुसार है।

विष्णु पुराण[1] म भी यह कथा आयी है, किन्तु वह महाभारत के वन पव हरिवंश पुराण और ब्रह्मपुराण की कथा से मिलती जुलती है।

✓ 'वायु पुराण'[2] मे आयी कथा का रूप भी हरिवंश पुराण के अनुसार है। उसम भी परशुराम को विष्णु का अवतार कहा गया है।

श्रीमदभागवत पुराण[3] मे आगत कथा मे परशुराम जी के जन्म की कथा तो कही गयी है पर सहस्राजु न के जन्म की नही। उसके विषय मे इतना ही कहा गया है कि उसने *नारायण के अंशावतार दत्तात्रय* जी को प्रसन्न करके एक हजार भुजाएँ तथा यह वरदान कि कोई भी शत्रु उसे युद्ध म पराजित न कर सके, प्राप्त कर लिया। फिर, कामधेनु के बल से जमदग्नि द्वारा हैहयनरेश (सहस्राजु न) का आदर सत्कार किया जाना सहस्राजु न द्वारा अहकारवश जमदग्नि से माँगे बिना कामधेनु को छीन ले जाना परशुराम का क्रुद्ध होकर सहस्राजु न का वध कर आना जमदग्नि द्वारा उनके इस काय को अनुचित बताया जाना, उन्हें तीथयात्रा पर जाने का परामश देना इसी बीच कार्त्तवीय के दस हजार पुत्रो द्वारा जमदग्नि का सिर काट ले जाना, तीथयात्रा से लौटकर परशुराम का समाचार सुनना और सहस्राजु न के पुत्रो को मार डालना तथा पिता का सिर लाकर उनकी धड से जोड देना एव उसी क्रोध मे पथ्वी पर से क्षत्रियो का २१ बार उन्मूलन करना आदि घटनाओ का वणन हुआ है।

अग्निपुराण[4] म कथा का रूप 'महाभारत वन पव, हरिवंश पुराण' और श्रीमदभागवत पुराण के समान ही है। कोई उल्लेखनीय विशषता उसम नही।

ब्रह्मववत्त पुराण म जमदग्नि के वध की कथा कुछ भिन्न प्रकार से मिलती है। उसम ऐसा उल्लख है कि कामधेनु को जब सहस्राजु न के सनिक बल पूवक ले जाने लगे तब गाय ने अपने शरीर से सेनाएँ उत्पन्न की। मुनि की सेना और राजा की सेना मे कई बार युद्ध हुआ। सहस्राजु न ने शक्ति बाण का प्रयोग कर मुनि को मार दिया। रेणुका अपने पति के शव के साथ ही सती हो गयी। परशुराम ने शिव को प्रसन्न कर

१ विष्णु पुराण, ४।७।१
२ वायु पुराण २।३२
३ भागवत पुराण ९।१५ १६
४ अग्नि पुराण अ० ४

त्रलोक्य विजय करने का वर प्राप्त कर लिया और कार्त्तवीर्य को उसकी सारी सेना तथा पुत्रो के सहित मार डाला ।[1] कार्त्तवीर्य के साथ परशुराम का युद्ध नर्मदा तट पर हुआ था।[2]

'लिंग पुराण'[3] में भी कार्त्तवीर्य की उद्दण्डता का समाचार अपने पिता के द्वारा सुनकर परशुराम का नर्मदा-तट पर उसकी भुजाओ को काट डालने का वर्णन है।

'मत्स्य पुराण'[4] में वर्णित इस कथा के रूप मे कोई नवीनता नही है। कथा हरिवंश पुराण और भागवत पुराण के अनुसार है।

ब्रह्माण्ड पुराण' मे यह कथा उपर्युक्त से कुछ भिन्न रूप मे प्राप्त होती है। यहाँ कार्त्तवीर्य के मन्त्री चन्द्रगुप्त द्वारा कामधेनु को धर्षित होना बताया है।[5] परशुराम ने जमदग्नि के सम्मुख कार्त्तवीर्य के वध की प्रतिज्ञा की। जमदग्नि ने यह कहकर कि क्षमा ही ब्राह्मण का भूषण है राजा का वध करने से मना किया। परशुराम दुष्ट को दण्ड देने पर तुले थे। जमदग्नि ने इन्हें ब्रह्मा और शिव का परामर्श लेने के लिए भेज दिया। ब्रह्मा और शिव ने कृष्ण कवच प्राप्त करने के लिए इन्हें कृष्ण के पास भेजा। पुष्कर-तट पर परशुराम की भेंट अगस्त्य ऋषि से हो गयी। अगस्त्य के आदेशानुसार इन्होने गंगा-तट पर तप आरम्भ किया। वहीं इन्हें कृष्ण का दर्शन प्राप्त हुआ। कृष्ण से अजेयता का वर मिला। तदुपरान्त इनका सहस्रार्जुन और उसके समर्थक राजाओ से युद्ध हुआ। सहस्रार्जुन को इन्होने मार डाला। किन्तु सहस्रार्जुन के शूर, वृषास्य, वृष, शूरसेन, जयध्वज आदि कुछ पुत्र हिमालय मे छिप गये। जैसे ही, परशुराम अपने पिता द्वारा राजा की हत्या का प्रायश्चित करने के लिए महेन्द्र पर्वत पर भेज दिये गये, वैसे ही सहस्रार्जुन के उन छिपे पुत्रों ने आकर जमदग्नि का सिर काट लिया। बारह वर्ष बाद परशुराम तपस्या करके लौटे। इनकी माता रेणुका ने इनके सम्मुख छाती पीट-पीटकर विलाप किया। कहते हैं कि चूकि उसने २१ बार छाती पीटी थी, इसलिए इन्होंने २१ बार क्षत्रियों का विनाश करने की प्रतिज्ञा की। पहली बार इन्होंने सहस्रार्जुन के बचे-खुचे पुत्रो को मार डाला। एक बार क्षत्रिय-संहार कर वे तपस्या करने के लिए महेन्द्र गिरि पर चले जाते थे, और फिर लौटकर क्षत्रियो को मारते थे। इस प्रकार इन्होने क्षत्रिय नाश की अपनी प्रतिज्ञा पूरी की।[6]

---

१ ब्रह्मवैवर्त पुराण गण० २४ २५
२ वही ३।३१ ४०
३ लिंग पुराण १।६८
४ मत्स्य पुराण अ० ४३
५. ब्रह्माण्ड पुराण २१।४७
६ वही मध्य० उपोद्घातपाद अ० ४० ४७

(३२) पाण्डवों की कौरवों पर विजय— सिद्धयोगी की सहायता से

जब कुरुक्षेत्र मे युधिष्ठिर ने कौरवो की विशाल सेना और भीष्म की व्यूह रचना को देखा, तब उनके मन मे अपने पक्ष की विजय के प्रति सन्देह हो गया। उस समय अर्जुन ने युधिष्ठिर को सान्त्वना देते हुए कहा था कि विजय बल और पराक्रम से उतनी नही मिलती जितनी सत्य सज्जनता तथा धर्म से। कहा भी है— यतोधर्मस्ततो जय ।[1] उन्होने युधिष्ठिर को विश्वास दिलाया कि हमारे पक्ष की विजय सुनिश्चित है, क्योकि नारद ने कहा है— यत कृष्णस्ततो जय ।[2] चूंकि कृष्ण हमारी विजय के अभिलाषी हैं इसलिए हमारी विजय अवश्य होगी।

यह कथन सत्य सिद्ध हुआ। कृष्ण ने पदे पदे अर्जुन को आपत्ति से बचाया। जयद्रथ वध के निमित्त पाशुपतास्त्र दिलवाने के लिए वे अर्जुन को उनके स्वप्न में ही शिवलोक ले गये।[3] जब अर्जुन ने सूर्यास्त से पूर्व जयद्रथ का वध करने या अन्यथा स्वय मर जाने की प्रतिज्ञा कर ली तब कृष्ण ने ही मायाप्रकार की सृष्टि कर जयद्रथ का वध कराया और जयद्रथ के सिर को उसके पिता की गोद में डलवाया।[4] कर्ण जैसे महारथी को मारने के लिए अर्जुन को प्रोत्साहित किया और उसके सम्मुख बाण से अर्जुन की रक्षा की।[5] उन्होने युधिष्ठिर और भीम आदि की भी अनेक अवसरों पर रक्षा की। यदि यह कहा जाय तो अत्युक्ति न होगी कि योगिराज कृष्ण के पाण्डव पक्ष मे रहने के कारण ही उसकी विजय हुई और कौरव पक्ष की पराजय।

'विष्णु पुराण' में उल्लेख आता है कि कृष्ण के परमधाम सिधारने के बाद जब अर्जुन उनकी सोलह सहस्र पत्नियों को अपने सरक्षण मे इन्द्रप्रस्थ ला रहे थे तब मार्ग में आभीरो ने अपनी लाठियों के बल से उन स्त्रियों को छीन लिया और गाण्डीवधारी अर्जुन जिन्होंने अकेले कौरवी सेना के छक्के छुड़ा दिये थे सामान्य बलशाली आभीरो से पराजित और कलंकित होकर हततेज लौट आये।[6] उनका गाण्डीव कुछ काम नहीं आया आभीरो की लाठियो से लड़ने मे अग्नि का दिया बाण भी निष्फल रहा। तब अर्जुन ने सोचा कि मैंने जो अनेक राजाओ को जीता वह सब कृष्ण का ही प्रभाव था। सब कुछ पूर्ववत् होते हुए भी कृष्ण की छत्रछाया हट जाने से सब निष्फल हो गया।

---

१ महाभारत भीष्म पर्व २१। १ ११
२ वही श्लोक १२
३ वही द्रोण पर्व ८ ८१
४ वही ,, १४६।६२ ७२ और १०४
५ ,, ६ । २६ ३१
६ ,, ५३

अर्जुन का अर्जुनत्व और भीम का भीमत्व भगवान कृष्ण की कृपा से ही था।[1]

(३३) पाण्डवो द्वारा कर्म-फल-भोग

पाण्डवा का अपने कम फल का भोग उनके महाप्रस्थान प्रसग की ओर सकेत करता जान पडता है।

जब पाण्डव द्रौपदी सहित अपने महाप्रस्थान पथ पर हिमालय की ओर बढने लगे, तब माग म सबसे पहले गिरनेवाली द्रौपदी थी। भीमसेन द्वारा उसके गिरने का कारण पूछने पर धमराज युधिष्ठिर ने बताया कि पाचो पतियो से प्रेम करते हुए भी इसके मन म अर्जुन के प्रति विशेष पक्षपात था। यह उसी का फल भोग रही है।[2] कुछ दूर आगे चलने पर पाण्डवो मे सबसे अधिक विद्वान सहदेव भी धरती पर गिर पडे। भीम ने युधिष्ठिर से उनके गिरने का कारण पूछा तब युधिष्ठिर ने बताया कि यह अपने जसा विद्वान् और बुद्धिमान किसी को नही समझता था, अत इसी दोष से इसका पतन हुआ है।[3] सहदेव को वही छोडकर युधिष्ठिर अपने कुत्ते और शेष भाइयो के साथ कुछ ही दूर चले होगे कि नकुल भी गिर पडे। भीम के पूछने पर युधिष्ठिर ने बताया कि नकुल अपने समान सुन्दर किसी को नही समझता था। इसी अभिमान के कारण यह नीचे गिरा है। जिसकी जसी करनी है, वह उसका फल अवश्य भोगता है।[4] अपनी पत्नी और दो प्रिय भाइयो को गिरा देख शोक सतप्त अर्जुन भी गिर पडे। भीमसेन ने उनके गिरने का कारण भी युधिष्ठिर से पूछा, तब धमराज ने कहा कि इसे अपनी शूरता का अभिमान था। इसने कहा था कि 'मैं एक ही दिन म शत्रुओ को भस्म कर डालूगा'। किन्तु ऐसा किया नहीं इसी से आज इसे धराशायी होना पडा है।[5] इतने मे ही भीम भी गिर पडे और गिरते गिरते उन्होने अपने गिरने का कारण जानना चाहा। युधिष्ठिर ने कहा—'भीमसेन! तुम बहुत खाते थे और दूसरो को कुछ भी न समझकर अपने बल की डीग हाँका करते थ, इसी से तुम्हे भी धराशायी होना पडा है।'[6]

युधिष्ठिर को भी दो घडी तक इन्द्रनिर्मित मायारूप नरक म रहना पडा था, तदनन्तर सभी पाण्डवो सहित उन्हे स्वग की प्राप्ति हुई।

इस प्रकार इस ससार में परम पराक्रमी पाण्डवा और परम सती साध्वी द्रौपदी को भी अपना कम फल भोगना पडा था।

---

१ वही ५। २८। ३१ ३३
२ महाभारत महाप्रस्थानिक पव २। ५ ६
३ वही म० प्र० पव २।१०
४ वही म प्र० पव २।१६ १७
५ वही म० प्र० पव २। २१
६ वही म० प्र० पव २। २५

अर्जुन को लुटेरे आभीरो के हाथ कितनी लज्जाजनक हार खानी पडी थी इसका वर्णन 'विष्णु पुराण'[1] मे हुआ है। कृष्ण ने अर्जुन पर भार सौंपा था कि उनके परमधाम गमन के अनन्तर अर्जुन ही उनकी पत्नियो की सुरक्षा की व्यवस्था करेंगे। किन्तु यह कर्म फल ही था कि अर्जुन का यशस्वी गाण्डीव भी साधारण लुटेरो की लाठियो का सामना न कर सका और अर्जुन के देखते देखते ही आभीर लुटेरे कृष्ण की सोलह सौ रानियो को जिन्हें अर्जुन द्वारका से इन्द्रप्रस्थ ला रहे थे छीन ले गये। कुसमय मे प्रतापियो का प्रताप भी नष्ट हो जाता है।

'श्रीमद्भागवत'[2] मे भी इस घटना का स्मरण अर्जुन ने बहुत अनुताप के साथ महाप्रस्थान के प्रसग मे किया है।

(३४) भगीरथ द्वारा गगा का पृथ्वी पर आनयन

इक्ष्वाकुवशी दिलीप के पुत्र राजा भगीरथ द्वारा अपने पितरो को (राजा सगर के साठ सहस्र पुत्रो को) जो अश्वमेध यज्ञ के अश्व को खोजने जाकर कपिल मुनि द्वारा भस्म कर दिये गये थे तारने के लिए स्वर्ग से गगा को पृथ्वी पर लाने की कथा सर्वप्रथम 'वाल्मीकि रामायण'[3] मे प्राप्त होती है। पहले इसमे भृगु जी के आशीर्वाद से राजा सगर की दो रानियां केशिनी और सुमति से क्रमश एक और साठ हजार पुत्र उत्पन्न होने की कथा है केशिनी से असमजस नामक अत्याचारी पुत्र उत्पन्न हुआ और सुमति से एक तुम्बी जिसके साठ हजार खण्ड करके साठ हजार पुत्र हुए। असमजस का पुत्र अशुमान हुआ। वह धर्मात्मा बना। सगर ने अश्वमेध यज्ञ आरम्भ किया। अशुमान की देखरेख मे घोडा छोडा गया। इन्द्र ने उस घोडे को चुरा लिया और कपिल मुनि के आश्रम मे बाँध दिया। राजा सगर के साठ सहस्र पुत्र उसे खोजते हुए पृथ्वी को खोदने लगे और उसे रसातल तक खोद डाला। वहाँ कपिल मुनि तपस्या कर रहे थे और उनके आश्रम मे यज्ञाश्व चर रहा था। सगर पुत्र कपिल को मारने दौडे। कपिल ने हुकार मात्र से उनको भस्म कर दिया। अशुमान अपने पितरो को खोजता हुआ वहाँ पहुँचा, उनको भस्मित रूप मे देखा और घोडा लेकर लौट आया। गरुड जी ने अशुमान को बताया कि स्वर्गगा के जल से उसके पितरों का तर्पण हो तब उनको स्वर्ग लाभ होगा। सगर के मरने के बाद अशुमान राजा हुआ। उसने गगा को पृथ्वी पर लाने की चेष्टा की, पर असफल रहा। उसके पुत्र दिलीप ने भी चेष्टा की, पर व्यर्थ।

दिलीप के पुत्र भगीरथ ने अपने पितरो को तारने के लिए गगा को पृथ्वी पर लाने

---

१ विष्णु पुराण ५।३८

२ भागवत पुराण १।१५। २०-२१

३ वाल्मीकि रामायण बालकाण्ड सर्ग ३८-४३

के निमित्त एक हजार वष तक तप किया। ब्रह्मा प्रसन्न हुए। उनसे भगीरथ ने दो वर मांगे—(१) गगा जल द्वारा पवित्र होने पर उसके साठ सहस्र प्रपितामहो का स्वग जाना और (२) कुल वृद्धि के लिए सतान। ब्रह्मा ने दोनों वर दिये किन्तु कहा कि गगा के पथ्वी पर आते समय उनका वेग सँभालने के लिए शिव को तैयार करो। भगीरथ ने एक पर के अगूठे के बल खडे रहकर एक वष तक शिव की आराधना की। शिव जी प्रसन्न हुए। उन्होंने गगा को धारण करना स्वीकार किया। ब्रह्मा की आना से गगा पथ्वी की ओर चलीं। गगा की इच्छा हुई कि शिव को प्रवाह के साथ बहाकर पाताल तक ले जाऊ। गगा के इस गव को चूण करने के लिए शिव ने गगा का अपनी जटाआ में ही उलझा लिया। तब भगीरथ ने शिव की पुन स्तुति की। शिव ने गगा को बिन्दुसर म छोडा। यहीं स गगा सात धाराओ मे विभक्त होकर चली। उनकी तीन-तीन धाराएँ पूव और पश्चिम की ओर चली गयीं और एक धारा भगीरथ के पीछे-पीछे चली। माग म गगा ने राजा जह्नु के यनक्षेत्र को प्लावित कर दिया, अत राजा ने क्रोध म आकर गगा को पी लिया। देवताआ ने जह्नु से प्राथना की, तब जह्नु न गगा का अपनी पुत्री बनाकर कान के छिद्रा स प्रवाहित कर दिया। यही जल धार भगीरथ के पीछे-पीछे चलती हुई रसातल तक पहुँची और उसने सगर के मृत पुत्रा को तार कर उन्हें स्वग पहुँचाया।

'महाभारत' के वन पव[1] तथा द्रोण पव[2] में भी यह कथा आयी है। वन पव क १०६ और १०७ वें अध्याय में सगर के साठ सहस्र पुत्रो की उत्पत्ति, उनका कपिल के क्रोध से भस्म हाना, अशुमान को राज्य प्राप्ति, उनके बाद दिलीप का राजा होना, फिर भगीरथ का राजत्व—इन सब घटनाआ का प्राय वाल्मीकि रामायण' के अनुसार ही वणन है। एक भिन्नता यह है कि सगर की पत्नियों सहित शिव की आराधना करने और उनका वर पाने से साठ सहस्र पुत्रों की प्राप्ति हुई है। पत्नियो का नाम यहाँ वदर्भी और शब्या है। शब्या ने एक पुत्र असमजस का और वदर्भी ने एक तुम्बी को जन्म दिया। राजा सगर उसे फेंकने जा रहे थे कि आकाशवाणी हुई 'तुम्बी के एक एक बीज का निकालकर घी से भरे हुए गरम घडों में अलग-अलग रखो। उन्हीं घडो में से साठ सहस्र पुत्र निकले'[3]। यहाँ गरुड ने नहीं स्वय कपिल ने अशुमान को गगा का आनयन करने और सगर पुत्रों के उद्धार का उपाय बताया है। 'रामायण' की ही भाँति यहाँ भी असमजस-पुत्र अशुमान और अशुमान-पुत्र दिलीप ने गगा आनयन की चेष्टा की, पर सफल न हुए।

दिलीप-पुत्र भगीरथ ने राजा बनने पर प्रयास किया। एक हजार दिव्य वष तक उन्होंने हिमालय पर तपस्या की। यहाँ ब्रह्मा नहीं, गगा स्वय दशन देती हैं। गगा

१ महाभारत वनपर्व १०६ १०६
२ वही द्रोण पव, ६०
३ वही वनपर्व १०६।१७ २२ और १०७।१४

न अपने वेग को रोकने के लिए शिव को तयार करने के लिए कहा। शिव भगीरथ को तपस्या से प्रसन्न हुए। भगीरथ ने गगा की फिर स्तुति की। गगा आकाश से गिरी। शिव ने उन्हें ललाट पर धारण किया। यहाँ गगा के अहकार और शिव द्वारा उनके अहकार को चूर्ण करने का उल्लेख नहीं है। गगा शिव की जटाओ से तीन धाराओं म (त्रिपथगा—(१) स्वगगा (२) पाताल गगा (३) पथ्वी की गगा म) विभक्त होकर भूतल पर उतरी और भगीरथ क साथ जाकर सागर को (जिसे सगर पुत्रो ने खोद डाला था) भर दिया। भगीरथ ने गगा को अपनी पुत्री बना लिया। उन्होने गगा जल से अपने पितरो का तपण किया।

'भीष्म पव'[1] मे गगा जी को शिव न एक लाख वप तक अपने सिर पर ही धारण रखा एसा उल्लेख है। 'द्रोण पव म नारद जी द्वारा भगीरथ का जो चरित्र वर्णित है, है उसम इतना ही उल्लेख है कि भगीरथ ने अपने पूवजो का उद्धार करने के लिए गगा का भूतल पर उतारा था। गगा भागीरथी कसे कहलायी इसके विषय म कथन है कि गगा उनकी गाद म आ बठी अत उनकी पुत्री हुई और 'भागीरथी कहलायी। उनके ऊरु पर बठने के कारण वे 'उवशी' भी कहलायीं।

'हरिवश पुराण'[2] म सगर के अश्वमेध-यज्ञ के अश्व को चुराने वाला इन्द्र नहीं है 'कोई व्यक्ति है। सगर पत्निया का और्व ऋषि ने पुत्र प्राप्ति का वर दिया था। केशिनी ने उनस वश परम्परा चलाने वाल असमजस को पाया और अधिक पुत्र लोभी दूसरी पत्नी ने तुम्बी उत्पन्न किया। उसम तिल के समान साठ हजार गभ थे जो घी क घडा म डालने से बढ और प्रत्येक से एक एक पुत्र उत्पन्न हुआ। उनके भस्म हो जाने की कथा इसम नहीं है। इतना ही उल्लख है कि दिलीप पुत्र भगीरथ ने गगा जी को स्वग स उतारा था, उ हे समुद्र तक पहुचा दिया और उन्हें अपनी पुत्री बना लिया। इसीलिए गगा भागीरथी भी कहलाती हैं। यहाँ भगीरथ की न तो तपस्या का वणन है न गगा क अवतरण की प्रक्रिया का और न भगीरथ द्वारा अपने पितरो का गगा जल स तपण करके उन्ह स्वग लाभ कराने का।

ब्रह्मपुराण मे यह कथा दो स्थलो[3] पर आयी है। अध्याय ८ की कथा म पहले सगर के जन्म की एक कथा दी हुई है जिसका गगा आनयन प्रसग से कोई सम्ब ध नहीं है। सगर का अश्वमेध यज्ञ करना इन्द्र द्वारा घोडे को चुराना और कपिल मुनि क आश्रम म ले जाकर उस बाँध आना सगर क साठ सहस्र पुत्रा का पृथ्वी का खोदते हुए पाताल म कपिल मुनि के आश्रम तक जा पहुँचना और उनको कपिल मुनि का शाप आदि घटनाएँ वाल्मीकि रामायण क अनुसार ही हैं। साठ हजार पुत्रो का जन्म कथन भी दिया है। रामायण मे भगु के वरदान से उनकी उत्पत्ति होती है और 'ब्रह्मपुराण' मे

---

१ वही भीष्म पर्व ६।३ १/२

२ हरिवश पुराण हरिवश पर्व अ १४ १५

३ ब्रह्मपुराण अ० ८ और ७८

'हरिवश' की भाँति और्व मुनि के वरदान स । गगा-आनयन के सम्बध मे केवल इतना उल्लख है कि दिलीप क पुत्र भगीरथ ने इस श्रेष्ठ सरिता का भूतल पर आनयन किया और समुद्र तक उस ले गय तथा गगा को उन्होंने अपनी दुहिता बनाया[1] । अध्याय ७८ की कथा म वशिष्ठ के वरदान से सगर को पुत्रा की प्राप्ति होना बताया है । कपिल पाताल म निद्रा सुख का अनुभव करने के लिए देवताओ की आज्ञा स पाताल लोक म गय हुए थे । भगीरथ कैलास पर जाकर शिव की आराधना करते हैं । प्रसन्न होकर शिव वरदान दते हैं । गगा जी के साथ साथ भगीरथ भी अपन पितरों को तारने के लिए रसातल म जाते हैं ।

'पदमपुराण'[2] म हरिद्वार माहात्म्य-वणन प्रसग म गगावतरण कथा सक्षप मे दी है । पहले सगर को और्व ऋषि के आशीर्वाद स सतान लाभ का वणन है, फिर उनक अश्वमेध-यज्ञ के लिए अश्व छोडे जान का । इसम यह स्पष्ट नहीं किया गया है कि पूर्व-दक्षिण समुद्र-तट पर अश्व को किसने विलुप्त कर दिया । इन्द्र का उल्लेख नही आता । सगर क साठ सहस्र पुत्रो ने पहले तो उस प्रदेश को खोद डाला फिर महाणव का, और फिर वे एसी जगह पहुचे जहाँ आग्निरूप कपिल थ । उन्ह उन मूर्खों ने घोर कहकर पुकारा । कपिल मुनि ने उन्ह भस्म कर दिया । गगा को लाने क लिए अशुमान और दिलीप के प्रयत्नों का उल्लख करने के उपरान्त भगीरथ की हेमकूट पवत पर की गयी वर्षों की तपस्या का वणन है फिर गगावतरण का, और शिव द्वारा उन्ह अपनी जटाओ में रोक रखन का । गगा के अहकार का उल्लख यहाँ नहीं है । भगीरथ न कलास पवत पर जाकर शिव की आराधना की । शिव प्रसन्न हुए और अपनी एक जूटा को खोलकर उससे त्रिधारा मे गगा को बाहर निकाला । फिर भगीरथ गगा को पाताल मे ले गए तथा पितरा का उद्धार किया ।

'विष्णु पुराण'[3] म केवल दो श्लोकों म यह कथा दी हुई है । उसम गगा द्वारा सगर पुत्रों के उद्धार का सकेत मात्र है । 'श्रीमद्भागवत पुराण' म भगीरथ द्वारा गगा का पथ्वी पर उतार लान की जो कथा दी है,[4] वह तत्त्वत वसी ही है जसी पदम पुराण' क उत्तरखण्ड म, किन्तु उसस इसम कुछ अन्तर भी है । 'भागवत म राजा सगर का जन्म और्व ऋषि के आशीर्वाद स होने का स्पष्ट उल्लेख नही । राजा बाहुक जब मर गया तब उसकी पटरानी उसके साथ सती होने को हुई, किन्तु और्व ऋषि ने उसे रोक दिया, क्योंकि उन्हें मालूम था कि वह गर्भवती है । जब उसकी सौतो को यह पता चला, तो उन्होंने उसे भोजन म विष मिलाकर दे दिया । परन्तु गभ पर उस विष का कोई प्रभाव नही पडा, बल्कि उस विष को लिये हुए ही एक बालक का जन्म हुआ, जो 'गर' के साथ

---

१ वही ८।७५-७७
२ पद्म पुराण उत्तर खण्ड अ० २२
३ विष्णु पुराण ४।४।११६ ११७
४ भागवत पुराण ९।८-९

पदा होने के कारण सगर कहलाया। सगर बड़े यशस्वी राजा हुए[1]। इन्ही के बाद की चौथी पीढ़ी म दिलीप के पुत्र भगीरथ उत्पन्न हुए। राजा सगर द्वारा छोड़े हुए मधाश्व को इन्द्र ने चुरा लिया और उसने उसे कपिल मुनि के आश्रम म बाँध दिया। अन्य पुराणा मे राजा सगर के पुत्र पूव और दक्षिण दिशा मे पथ्वी को खोदते हैं किन्तु यहाँ सब ओर से। अ तत पूर्वोत्तर दिशा म उन्हें कपिल के आश्रम मे घोडा मिलता है। इन्द्र न सगर पुत्रा की बुद्धि हर ली थी, तभी वे कपिल मुनि का अपमान कर सके। यहाँ कपिल मुनि के पाताल म रहने का उल्लेख नही है। लिखा है कि अशुमान सगर की आज्ञा से घाडे को ढूढने के लिए निकल और अपने चाचाओं द्वारा खोदे हुए समुद्र के किनारे किनारे चलकर कपिल के आश्रम पहुचे।[2]

भगीरथ द्वारा गगा के आनयन की कथा महाभारत वन पव की कथा से मिलती जुलती है।

'शिवपुराण'[3] की कथा ब्रह्म पुराण अ० ८ और 'श्रीमदभागवत पुराण' के अनुसार है। देवीभागवत पुराण[4] मे सगर की पत्निया का नाम वदर्भी और शव्या बताया है। वदर्भी के एक मास पिण्ड पदा हुआ। शिव ने कृपा कर ब्राह्मण वेश म उपस्थित होकर उस पिण्ड का साठ हजार भागो म बाँटा। उन्ही से वदर्भी के साठ हजार पुत्र हुए। यहाँ कथा मे एक ही नवीनता है कि भगीरथ न जब एक लाख वष तक तपस्या की तब कृष्ण ने उन्ह दशन दिये और सरस्वती द्वारा शापित गगा को सगर-पुत्रा का उद्धार करने के लिए मृत्य लोक मे भेजा।

'बहन्नारदीय पुराण'[5] की कथा सब प्रकार से ब्रह्मपुराण अ० ७८ की कथा के समान हैं। ब्रह्मववत्त पुराण[6] की कथा देवी भागवत पुराण के समान है। गगा आनयन की कथा सक्षेप मे 'गरुड पुराण'[7] में भी आयी है। ब्रह्माण्ड पुराण[8] मे यह कथा विस्तार स वर्णित है पर तु तत्त्वत वह ब्रह्मपुराण की कथा के समान ही है।

(३५) राम कथा

[इसके अतगत राम कथा के १८ प्रसगो का उल्लेख और समस्त राम कथा का विकास प्रस्तुत किया गया है।]

---

१ वही ९।८।१४
२ वही ९।८।२०
३ शिव पुराण उमा संहिता ३८ ३९
४ देवीभागवत पुराण ९।११
५ बहन्नारदीय पुराण ७८
६ ब्रह्मववत्त पुराण प्रकृति खण्ड अ० १
७ गरुड पुराण पूव खण्ड अ १३८।२८ ३०
८ ब्रह्माण्ड पुराण मध्य भाग उपोद्घातपाद अ ४७ ५६

(क) वैदिक साहित्य मे राम-कथा का बीज

वदिक साहित्य मे राम कथा का कोई विशद रूप प्राप्त नही होता जसा कि गोस्वामी तुलसीदास का कथन है।[1] 'ऋग्वेद' मे दशरथ[2] और राम[3] नाम का उल्लेख किन्ही प्रतापी राजाओ के लिए होता है। इनकी अपेक्षा जनक विदेह का परिचय कुछ अधिक विस्तार से 'तत्तिरीय ब्राह्मण'[4] और 'शतपथ ब्राह्मण'[5] मे मिलता है। 'सीता नाम वदिक साहित्य म कई बार आया है। 'तत्तिरीय ब्राह्मण'[6] मे वह प्रजापति की पुत्री और सोम की पत्नी है। परन्तु ऋग्वेद मे उसके उस रूप का आभास मिल जाता है जिसमे वह परवर्ती साहित्य मे पृथ्वी-सुता और जनक की पालिता पुत्री प्रसिद्ध हुई। ऋग्वेद म एक स्थल[7] पर 'सीता' को हल की 'हराई' के रूप मे वदित किया गया है। इन्द्र को सीता का ग्रहणकर्त्ता कहा गया है। सीता मे व्यक्तित्व का आरोप कर उस इन्द्र की पत्नी का रूप दे दिया गया है।[8] जब राक्षस वृत्र मेघो को बदी कर इन्द्र की पत्नी सीता की उवरा शक्ति को कुण्ठित करना चाहता है तब इन्द्र मरुत की सहायता स उसका वध कर देता है।[9] पौराणिक काल म विष्णु उपेन्द्र के रूप मे इन्द्र का स्थान ले लेते हैं और राम का अवतार लेकर सीता के पति बन जाते हैं। हल की हराई के रूप मे जिस सीता का स्तवन वदिक काल मे किया गया, वही राजा जनक को अनावृष्टि के समय हल जोतते हुए हराई से सद्य जात कन्या के रूप मे प्राप्त होती है और पथ्वी सुता कहलाती है। वदिक साहित्य का वृत्रासुर सीता को वदिनी बनाने वाले रावण के रूप में सामने आता है और वृत्रासुर-वध मे इन्द्र का सहायक मरुत पवन सुत हनुमान का रूप ले लेता है। 'वाल्मीकि रामायण' मे उल्लेख आता है कि जब विष्णु ने राम के रूप म अवतरित होना स्वीकार कर लिया तब ब्रह्मा के परामश पर अन्य देवताओ ने उनकी सहायता के लिए रीछ और वानरो के रूप मे अवतार लिया। इन्द्र ने बालि, सूय न सुग्रीव, बृहस्पति ने तार कुबेर ने गन्धमादन, विश्वकर्मा ने नल, अग्नि ने नील, अश्विनीकुमारों ने मन्द और द्विविद वरुण ने सुषेण, पजन्य (मघ) ने शरभ और मरुत ने

---

१ रामचरित मानस गो० तुलसीदास गीता प्रेस गोरखपुर चतुर्थ आवत्ति बालकाण्ड दोहा १४ (ख)

२ ऋग्वेद प्रथम मण्डल सूक्त १२६ मंत्र ४

३ वही दशम मण्डल सूक्त १९३ मत्र ४

४ कृष्ण यजुर्वेदीय तैत्तिरीय ब्राह्मण ३ १०।९

५ शतपथ ब्राह्मण ११।३।१।२।४ ११।४।३।१० ११।६।२।१।१० और ११।६।३।१

६ कृ० य० तत्तिरीय ब्राह्मण २।३।१

७ ऋग्वेद चतुथ मण्डल सूक्त ५७ मंत्र ६ ७

८ पारस्कर गृह्-सूत्र २।१७।९

९ ऋग्वेद षष्ठ मण्डल सूक्त ६६ मत्र ११

हनुमान को अपने अश रूप मे उत्पन्न किया।[1] इस प्रकार पूरा वदिक देव-परिकर राम कथा म आ जुटता है और वदिक काल का प्रकृति तत्व रूपक वाल्मीकि रामायण मे आते आते धमगाथा का रूप ग्रहण कर लेता है । निश्चय ही यह लोक कल्पना की देन रहा । सूता द्वारा इक्ष्वाकु वशी राम का जो आख्यान लोक कथा के रूप म चौथी शती ई०पू० तक पर्याप्त प्रसिद्ध कर दिया जा चुका था, वही वाल्मीकि द्वारा एक प्रबन्ध काव्य के रूप मे व्यवस्थित कर दिया गया।[2] वाल्मीकि ने रामायण को लोक कथा से प्राप्त किया, वह आख्यान विविध रूपा म स्फुट लोक साहित्य मे प्रचलित था। वाल्मीकि ने उसे काव्य गुणो से सम्पन्न कर प्रबन्ध वद्ध कर दिया यह उनकी विशेषता रही।[3] वाल्मीकि रामायण भी प्रारम्भ म 'आदि रामायण' के रूप म कुशीलवा द्वारा गेय रहा और मौखिक परम्परा म विकसित होता रहा प्रथम और सप्तम सग उसम बाद मे जुडे और वह अपने वतमान रूप मे सम्भवत दूसरी शती ईस्वी तक आ पाया।[4]

(ख) वाल्मीकि रामायण मे राम-कथा

'वाल्मीकि रामायण' म उसकी अतकथाओ को छोडकर शुद्ध राम कथा का जो रूप प्राप्त होता है वह सक्षेप म यह है —

कोसल प्रदेश की अयोध्या नगरी के इक्ष्वाकु वशी राजा दशरथ निस्सतान। अगराज रामपाद का पुत्री शान्ता क पति ऋषि ऋष्यश्रृग को ऋत्विज बनाकर पुत्रेष्टि अश्वमेध यज्ञ। अग्निकुण्ड से अग्निदेव का पात्र म खीर लिये प्रकट होना। रानियो को खीर खिलाना। यथासमय कौसल्या से राम कैकेयी से भरत और सुमित्रा से लक्ष्मण-शत्रुघ्न की उत्पत्ति। राम लक्ष्मण के कुछ बड होने पर ऋषि विश्वामित्र का आकर राम लक्ष्मण को अपने यज्ञ के रक्षाथ वन मे ले जाना। राम को विश्वामित्र द्वारा दिव्यास्त्र प्रदान करना। यज्ञ की रक्षा करते हुए राम द्वारा ताटका वध। अन्य कई राक्षसो का भी सहार। विदेह-नरेश जनक के यज्ञ के दशनाथ राम-लक्ष्मण का विश्वामित्र के साथ मिथिलापुरी (जनकपुरी) को गमन। माग म शापग्रस्ता गौतम पत्नी अहल्या का राम द्वारा उद्धार। मिथिला मे पहुँचने पर जनक द्वारा राम को शिव धनुप दिखलाना और कहना कि इस पर प्रत्यचा चढा दोगे तो सीता का विवाह तुमसे कर दूगा। राजा जनक का सीता के जन्म के विषय म बतलाना—यज्ञ भूमि के लिए हल जोतते हुए हल की नोक से खुदी भूमि—हराई या सीता स उसकी प्राप्ति अत सीता' नाम।[5] वह अयो-

---

१ वाल्मीकि रामायण बालकाण्ड सप्तदश सग श्लोक १०१६
२ 'राम-कथा' डा० कामिल बुल्के पृ० ४८
३ मध्ययुगीन हिन्दी साहित्य का लोकतात्विक अध्ययन डा सत्येन्द्र प्र० स० पृ०२१
४ ए हिस्ट्री आफ इण्डियन लिटरेचर डा विटरनित्ज पहली जिल्द पृ० ५१६
५ वाल्मीकि रामायण १।६६।१४

निजा पृथ्वी सुता जनक द्वारा पुत्रीवत पालिता।[1] राम द्वारा उस दिव्य धनुष पर अयास प्रत्यंचा चढा दिया जाना प्रत्यंचा को खींचते ही धनुष का दो टूक होना। प्रतिज्ञा पूर्ति के कारण जनक का सीता को राम से विवाहने का निश्चय।[2] दशरथ को सूचना। बारात सहित दशरथ का मिथिला में आगमन। सीता से राम का जनक पुत्री उर्मिला से लक्ष्मण का और जनक भ्राता कुशध्वज की पुत्रियों माण्डवी तथा श्रुतकीर्ति से क्रमश भरत तथा शत्रुघ्न का विधिपूर्वक विवाह। प्रभूत दान दहेज के साथ बारात की विदाई। मार्ग में क्रोधी परशुराम से भेंट। राम ने उनके दिए वैष्णव धनुष पर प्रत्यंचा चढ़ा दी और वैष्णवास्त्र छोड़कर परशुराम का तप फल क्षीण कर दिया। अयोध्या में द्वादश वर्ष तक सबका सुखपूर्वक रहना। अपने मामा युधाजित के साथ भरत का शत्रुघ्न के साथ केकेय देश को प्रस्थान।

पीछे से दशरथ का राम को युवराज पद देने का निश्चय।[3] राम के अभिषेक समाचार से खिन्न हुई मन्थरा दासी का कैकेयी को उभाडना, ऊँच नीच सुझाना। कैकेयी की मति भ्रष्ट। कोप भवन में जाना। पहले के दिये दो वरों का स्मरण दिलाकर भरत के लिए युवराज पद और राम के लिए चौदह वर्ष का बनवास दशरथ से मांगना।[4] दशरथ की चिंता, विलाप। कैकेयी अपनी मांग पर दृढ़। राम द्वारा पिता-वचन की रक्षा हेतु वन जाने का निश्चय। सीता का भी साथ जाने का हठ। राम ने समझाया पर वह स्त्री धर्म के नाते न मानी। लक्ष्मण का भी साथ चलने का अटल आग्रह। राम सीता लक्ष्मण का वल्कल वस्त्र धारण कर वन गमन।[5] शृंगवेरपुर पहुँचकर निषादराज गुह की सहायता से उनका गंगा पार करना। वहाँ से प्रयाग स्थित भरद्वाज आश्रम होते हुए उनका चित्रकूट में जाकर निवास करना।

अयोध्या में पुत्र शोक से दशरथ की मृत्यु। मरने से पूर्व उनका कौसल्या से

---

१ वाल्मीकि रामायण के उत्तरकाण्ड पूर्वार्द्ध के अध्याय १७ में सीता के पूर्व-जन्म का एक वृत्तान्त इस प्रकार दिया है राजा कुशध्वज की वेद वाणी स्वरूपा कन्या वेदवती भगवान् विष्णु को पति रूप में पाने के लिए हिमालय पर्वत पर कठोर तपस्या कर रही थी। रावण कहीं से घूमता फिरता वहाँ आ निकला। उस अपूर्व सुन्दरी को देखकर वह काम-पीड़ित हो गया। अपने ऐश्वर्य का बखान कर उसने वेदवती को लुभाना चाहा परन्तु उस तपस्विनी पर इसका कोई प्रभाव नहीं पड़ा। तब रावण ने बलपूर्वक उसके केश पकड़ लिये। वेदवती ने तुरन्त अपने केश अपने हाथ से काट डाले और चूंकि रावण ने उसके शरीर को स्पर्श कर दिया था इसलिए योग बल से अग्नि उत्पन्न कर वह उसमें जल मरी किन्तु मरते-मरते रावण को चेता गयी कि वह किसी धर्मात्मा पुरुष की अयोनिजा कन्या के रूप में उत्पन्न होगी भगवान विष्णु ही उसके पति होंगे और वह रावण के वध का कारण बनेगी। वही सत्ययुग की वेदवती त्रेतायुग में अयोनिजा सीता बनी जिसका हरण रावण के विनाश का कारण बना।

२ वही बाल काण्ड सर्ग ६६ ६७

३ वही अयोध्या काण्ड सर्ग १ ६

४ वही अयोध्या काण्ड सर्ग ११

५ वही अयोध्या काण्ड सर्ग ३७ ३८

अंधतापस के शाप की बात कहना।[1] भरत-शत्रुघ्न को बुलाया जाना। भरत द्वारा कैकेयी की भर्त्सना। दशरथ का अन्त्येष्टि संस्कार। परिजनों, पुरजनों, कुलगुरु वसिष्ठ आदि के साथ भरत शत्रुघ्न का राम को मनाने चित्रकूट पहुँचना। राम का किसी प्रकार चौदह वर्ष से पूर्व घर न लौटने का निश्चय व्यक्त करना। हार मानकर, राम की चरण पादुका लेकर भरत का लौटना। सिंहासन पर पादुका को प्रस्थापित कर राम के प्रतिनिधि रूप में भरत द्वारा नन्दिग्राम में रखते हुए शासन-संचालन।

राम का चित्रकूट से दण्डकारण्य में गमन। पंचवटी में निवास। शूर्पणखा राक्षसी का सुन्दर नारी वेश में राम के पास आना भार्या बनाने का अनुरोध अस्वीकार करने पर उसका सीता पर आक्रमण राम के आदेश पर लक्ष्मण का उसके के नाक कान काट लेना। इसका बदला लेने के लिए खर दूषण तथा चौदह सहस्र राक्षसों का राम पर आक्रमण। राम द्वारा सबका नाश। शूर्पणखा का अपने भाई लंकेश पास जाना, अपनी दुर्दशा की कहानी कहना, सीता के सौन्दर्य की प्रशंसा कर उसे हर लाने को प्रेरित करना। रावण द्वारा मारीच की सहायता लेना। मारीच स्वर्ण मृग के रूप में राम आश्रम में। उसके सुन्दर चर्म को पाने की सीता की इच्छा। राम मृग के पीछे-पीछे। बहुत दूर जाकर उसका आखेट। मरत मरते मृग (मारीच) का 'हा सीते! हा लक्ष्मण!' कहना। सीता और लक्ष्मण का ये शब्द सुनना। सीता व्याकुल। लक्ष्मण को दुर्वचन और चरित्र लांछन की बातें कहकर हठपूर्वक सहायतार्थ भेजना। अवसर पाकर साधुवेश में रावण सीता के सम्मुख उपस्थित। सीता द्वारा उसका आतिथ्य।[2] रावण द्वारा आत्म श्लाघा। सीता को अपने साथ चलने को कहना। सीता के फटकारने पर उसका अपहरण।[3] रथ में बैठाकर आकाश मार्ग से लंका की ओर गमन। गृद्धराज जटायु का रावण से युद्ध। रावण द्वारा वह आहत। सीता का ऋष्यमूक पर्वत पर बैठे पाँचों वानरों (सुग्रीव हनुमान आदि) के मध्य अपने आभूषण और वस्त्र गिराना। अशोक वाटिका में सीता बन्दिनी। रावण का डराना धमकाना विफल, सीता पातिव्रत पर दृढ़।

राम द्वारा वन से लौटने पर सीता को न पाकर विलाप।[4] *लक्ष्मण स साथ* सीता को खोजते फिरना। जटायु से पता मिलना—उसका अन्त्येष्टि संस्कार। मार्ग में कबन्ध राक्षस का वध। कबन्ध ने सुग्रीव से मैत्री करने का सुझाव दिया। हनुमान के माध्यम से राम लक्ष्मण की भेंट सुग्रीव से। राम सुग्रीव मैत्री। राम द्वारा सुग्रीव के भाई और उसकी पत्नी के हर्त्ता बालि का वध।[5] लक्ष्मण द्वारा सुग्रीव और अंगद (बालि पुत्र) का अभिषेक। सुग्रीव का सभी दिशाओं में सीता की खोज में वानरों को भेजना। दक्षिण दिशा में हनुमान अंगद और ऋक्ष जाम्बवान आदि का जाना। जटायु

---

१ वही अयोध्या काण्ड सर्ग ६३ ६४
२ वही अरण्य काण्ड सर्ग ४६
३ वही अरण्य काण्ड सर्ग ५२
४ वही अरण्य काण्ड सर्ग ६१ ६३
५ वही किष्किधा काण्ड सर्ग ३ १६

के भाई सपाति से सीता का रावण की लका मे होने का पता चलना। हनुमान द्वारा समुद्र को लांघना।

लका म पहुँचकर सीता को अशोक वाटिका मे शोकमग्नावस्था मे देखना। वाटिका म हनुमान के सामने ही रावण का आगमन। सीता को प्रलोभन, न मानने पर दो माह की अवधि देना। हनुमान का सीता के सामने उपस्थित होना, अपना परिचय और राम प्रदत्त मुद्रिका की सहिदानी उन्हें देना।[1] सीता का राम के लिए सन्देश—एक माह तक और प्रतीक्षा करने की बात कहना—सहिदानी के रूप म अपना चूडामणि भेजना। हनुमान द्वारा अशोक वाटिका का विध्वस[2]—रावण के पाँच सेनापतियो तथा रावण पुत्र अक्षयकुमार का वध। इन्द्रजीत (रावण पुत्र) के दिव्यास्त्र बन्धन म बँधकर हनुमान का रावण की सभा में उपस्थित होना। दूत अवध्य है—विभीषण द्वारा समझाना। अन्य दण्ड के रूप में हनुमान की पूछ मे आग लगाना। हनुमान द्वारा लका दहन।[3] लका स लौटना, अगद और जाम्बवान आदि सुहृदो के साथ किष्किधा वापस। राम को सीता का चूडामणि और सदेश देना।[4] लका पर अभियान की तयारी।

राम का सदल बल समुद्र तट पर आगमन। उधर, विभीषण, मन्दोदरी, कुम्भकर्ण आदि सबका सीता को लौटाने के लिए रावण से अनुरोध, पर रावण अहकार मे चूर। किसी की सीख न सुनना। विभीषण का निष्कासन। विभीषण राम की शरण म।[5] लका का भेद बताना। राम के सामने समुद्र पार करने की समस्या। राम का समुद्र-तट पर कुशा बिछाकर तीन दिनो तक धरना देना। समुद्र के दशन न देने पर कुपित होकर ब्रह्मास्त्र बाण का सधान करना। समुद्र भय से विक्षुब्ध। प्रकट होकर समुद्र का उपाय बताना—विश्वकर्मा का पुत्र नल सेतु बाँधने मे समथ। नल द्वारा सागर पर सौ योजन लम्बा और दस योजन चौडा पुल निर्माण।[6] राम सेना समुद्र क पार।

रावण द्वारा सीता को मायारचित राम का कटा मस्तक दिखाना। सीता का विलाप। त्रिजटा का आश्वासन। राम का राजनयिक दूत बनकर अगद का रावण की सभा में उपस्थित होना। राम का सन्देश रावण को देना। रावण के वीरो की पकड मे न आना रावण के सौध शिखर को पदाघात स विदीर्ण कर देना।[7] फिर राम के पास जाकर समाचार देना कि युद्ध अवश्यम्भावी है।

राम रावण की सेना मे यद्ध प्रारम्भ। एक-एक कर महारथियो की मृत्यु।

---

१ वहा किष्किधा काण्ड सग ४४ और सुन्दर काण्ड सग ३६
२ वही सुन्दर काण्ड सग ४१
३ वही सुन्दर काण्ड सग ५३ ५४
४ वही सुन्दर काण्ड सग ३८ और ६६
५ वही यद्ध काण्ड सर्ग १४ १७
६ वही यद्ध काण्ड सर्ग २१ २२
७ वहा यद्ध काण्ड सर्ग ४१

कुम्भकर्ण का राम द्वारा वध। इन्द्रजीत का राम लक्ष्मण को नागपाश म बाँधना।[1] रावण द्वारा पुष्पक विमान मे सीता को भेजकर राम-लक्ष्मण की यह दशा दिखाने का प्रबन्ध करना। जाम्ववान् द्वारा हिमालय पवत के ऋषभ और द्रोण शिखर पर मतसजीवनी विशल्यकरणी सावणकरणी, सधानकरणी बूटियो के होने का पता बताना। हनुमान लेने जाने को तयार ही थ कि गरुड जी का आगमन। उनको आता देख सप रूपी बाणो का राम लक्ष्मण को बधन मुक्त करके पलायन। गरुड जी के स्पश से राम लक्ष्मण के घावों का भर जाना। पुन भीषण युद्ध। इन्द्रजीत द्वारा अधिकाश वानर और ऋक्ष सेना को मत या आहत कर देना। जाम्ववान् के आदेश पर हनुमान का समूचा द्रोणगिरि (औषधिपवत) उखाड लाना। सजीवनी के प्रयोग स राम लक्ष्मण तथा सब मत आहत वानर स्वस्थ।[2] हनुमान द्वारा पवत को पुन उसके स्थान पर स्थापित कर आना। इन्द्रजीत द्वारा मायारचित सीता को हनुमान के सामने ही मार डालना। राम शोकित, किन्तु विभीषण द्वारा सीता के जीवित होने का आश्वासन। इन्द्रजीत द्वारा निकुम्भिला देवी के मन्दिर म विजय प्राप्ति के लिए अनुष्ठान। लक्ष्मण द्वारा बाण-वर्षा कर उसका अनुष्ठान पूरा न होने देना। अन्तत लक्ष्मण द्वारा उसका वध। पुत्र-वध से रावण क्रुद्ध। स्वय युद्ध के लिए निकला। लक्ष्मण पर शक्ति का प्रहार। लक्ष्मण मूर्च्छित पर पुन स्वस्थ। रावण द्वारा विभीषण पर दूसरी शक्ति का प्रहार, लक्ष्मण द्वारा आग बढ़कर उसे अपनी छाती पर झल लेना। लक्ष्मण मतप्राय। राम का कातर होकर विलाप। सुषेण वानर वद्य के आदेश पर हनुमान का दुबारा द्रोणाचल (औषधि पवत) को उखाड लाना। दिव्य औषधियो को सुघाने से लक्ष्मण स्वस्थ।[3] रथ रहित राम के पास इन्द्र द्वारा अपना रथ और सारथी—मातलि—को भजना। उस पर चढ़कर राम का रावण से भयकर युद्ध। रावण का सिर एक एक करके सौ बार काटना। अन्तत मातलि के परामश पर ब्रह्मास्त्र का प्रयोग कर उसे मार डालना। राम की विजय। विभीषण द्वारा रावण का अन्तिम सस्कार। राम द्वारा विभीषण का राज्याभिषेक।

विभीषण सीता को लेकर राम के सामने उपस्थित। राम का सीता को ग्रहण करने से अस्वीकार। सीता के कहने स लक्ष्मण का चिता सजाकर प्रज्वलित कर देना। सीता का अग्नि प्रवेश। तभी कुबेर यम इन्द्र वरुण शिव ब्रह्मा आदि देवता वहाँ उपस्थित। भुजा उठाकर सीता के सतीत्व का साक्ष्य देना।[4] चिता ठण्डी पड गयी। अग्निदेव सीता को लेकर प्रकट। सीता को निष्कलक बताना और उस ग्रहण करने के लिए राम को आदेश देना।[5] दशरथ का स्वगलोक से विमान म बठकर आगमन। पुत्रो

---

१ वही यद्ध काण्ड सग ४४
२ वाल्मीकि रामायण युद्ध काण्ड ७४।६१ ७४
३ वही यद्ध काण्ड १ २।२ ३८
४ वही यद्ध काण्ड सग ११४ ११७
५ वही युद्ध काण्ड सग ११८

तथा पुत्रवधू को आशीर्वाद तथा भावी कर्त्तव्य का उपदेश देकर देवताओं के साथ ही चले जाना।[1]

राम सीता, लक्ष्मण, सुग्रीव, अंगद, हनुमान, जाम्बवान्, तथा विभीषण सहित पुष्पक विमान में बैठकर अयोध्या की ओर। किष्किंधा होते हुए प्रयाग मे भारद्वाज आश्रम मे उतरना। हनुमान को भरत के पास समाचार देने भेजना। अगले दिन, चौदह वर्ष के बाद अयोध्या प्रवेश। सभी माताएँ, भरत शत्रुघ्न तथा परिजन-पुरजन आनन्दित। वसिष्ठ द्वारा राम का विधिवत् राज्याभिषेक। जाम्बवान विभीषण, अंगद, सुग्रीव आदि का अपने अपने स्थान को लौटना। राम द्वारा पुष्पक विमान कुबेर को वापस लौटा दिया जाना।

सीता के विषय में लोकापवाद फैला हुआ है, गुप्तचरो से यह सुनकर राम द्वारा सीता का परित्याग करने का निश्चय। राम का आदेश पाकर लक्ष्मण का सीता को वन में वाल्मीकि ऋषि के आश्रम के समीप छोड आना। वाल्मीकि का सीता को आश्रय देना। वहीं सीता के गर्भ से लव कुश का जन्म। 'वाल्मीकि रामायण' की रचना। लव-कुश को रामायण कण्ठस्थ कराना। रामाश्वमेध-यज्ञ में लव कुश और सीता सहित वाल्मीकि का आगमन। यज्ञ शाला मे राम द्वारा जन समूह के सम्मुख सीता से उनके सतीत्व की सफाई मांगना ताकि सबको विश्वास हो सके। सीता का कहना— यदि मैंने रामचन्द्र को छोडकर अन्य किसी पुरुष का मन से भी कभी चिन्तन न किया हो, तो पृथ्वी फट जाय और मैं उसमे समा जाऊं।[1] पृथ्वी का फटना, दिव्य सिंहासन पर पृथ्वी देवी का बैठे हुए आविर्भूत होना, सीता को गोद में लेकर विलुप्त होना। राम का शोक। राम द्वारा लव-कुश का राज्याभिषेक। उनके द्वारा लक्ष्मण का परित्याग। दस हजार से अधिक वर्षों तक राज्य कर चुकने के बाद राम द्वारा महाप्रयाण।

(ग) 'महाभारत' मे राम-कथा 'रामायण' से भिन्नता

'महाभारत' में राम-कथा कई स्थलो पर आयी है। 'वनपर्व' के अन्तर्गत अलग से तो एक 'रामोपाख्यान' है ही 'द्रोण पर्व' और 'शान्ति पर्व' के अन्तर्गत भी राम-कथा की आवृत्ति 'षोडशराजीय उपाख्यान' मे हुई है। 'सभापर्व' एवं 'भीष्म पर्व' में भी राम का उल्लेख आया है।

'वन पर्व' का 'रामोपाख्यान'[4] युधिष्ठिर के प्रश्न के उत्तर में मार्कण्डेय मुनि द्वारा कथित है। उसमे 'वाल्मीकि रामायण' से जो भिन्नता मिलती है, वह संक्षेप में यह है —

---

१ वही युद्धकाण्ड सर्ग ११९
२ वही युद्धकाण्ड सर्ग १२७-१२८
३ वाल्मीकि रामायण उत्तरकाण्ड सर्ग ९७ श्लोक १४
४ वनपर्व अध्याय २७१-२९२

(१) सीता के पृथ्वी-सुता होने का इसमें कोई उल्लेख नहीं है। हल जोतते समय राजा जनक के उनको पाने की बात नहीं कही गयी है। उनको जनक पुत्री ही कहा गया है।

(२) राम द्वारा शिव धनुष की प्रत्यचा चढाने, धनुष तोडने, परशुराम के कोप तथा अन्य तीन भाइयों के विवाह आदि का भी इसमें उल्लेख नहीं।

(३) वर प्रसग मे इतना ही सूचित होता है कि दशरथ ने ककेयी को कभी यह वर दिया था कि 'तेरा मनोरथ सफल करूँगा', ककेयी उसके अन्तगत भरत का अभिषेक और राम का वनवास माँग लेती है। दो वर देने का स्पष्ट उल्लेख नहीं है।

(४) सीता और लक्ष्मण की ओर से वन गमन का हठ या आग्रह इसमे सूचित नहीं। उनके राम के साथ वन गमन का उल्लेख मात्र है।

(५) शूपणखा के नाक कान ही नहीं ओठ भी यहाँ काटे गये हैं। शूपणखा रावण के सामने यहाँ सीता के रूप की प्रशसा नहीं करती, न सीता हरण के लिए उसे प्रेरित करती है। रावण स्वय अपना कत्तव्य निश्चित करता है।

(६) 'वाल्मीकि रामायण' के समान यहाँ भी सीता ने राम के सहायताथ जाने मे अनौत्सुक्य के लिए लक्ष्मण के चरित्र तक पर आक्षेप किया है मानो लक्ष्मण चाहते हो कि राम की मृत्यु हो जाय तो सीता को हथिया लूँ।

(७) मारीच के स्वण-वर्णी होने का भी उल्लेख नहीं। उसकी सीगो का रत्नमय और शरीर के रोओं का रत्नो के समान चित्र विचित्र होना ही उल्लिखित है।

(८) सीता ऋष्यमूक पवत पर बठे पाँच वानरो के बीच आभूषण नहीं अपना वस्त्र ही गिराती हैं।

(९) रामायण' मे राम जटायु से पूव-परिचित होते हैं यहाँ जटायु दशरथ का मित्र होने का अपना परिचय स्वय देता है।

(१०) 'रामोपाख्यान मे अविन्ध्य नामक रामभक्त राक्षस त्रिजटा के द्वारा सीता के पास राम के सकुशल होने और सुग्रीव के साथ मिलकर उद्योगरत होने का समाचार भेजकर उन्हे निश्चित करता है।

(११) हनुमान द्वारा सिंहिका और लका के वध का उल्लेख नहीं।

(१२) राम हनुमान के हाथ सहिदानी के रूप मे मुद्रिका नहीं भेजते, सीता अपना चूडामणि भेजती हैं। वाल्मीकि रामायण और 'रामोपाख्यान' दोनो मे जयत की कथा सीता के द्वारा हनुमान से अपनी पहचान के लिए कही जाती है ताकि वे राम से इसे कह सकें।

(१३) वाल्मीकि रामायण मे राम तीन दिन तक धरना देने के बाद क्रुद्ध

होकर जब समुद्र को सुखाने के लिए वैष्णवास्त्र का सधान करते हैं, तब वह प्रकट होता है पर 'रामोपाख्यान' मे वह राम को स्वप्न मे दर्शन देता है और विश्वकर्मा-पुत्र नल की चमत्कारी शक्ति का वर्णन करके उसके हाथ से सेतु-बध के लिए पत्थर डलवाने का उपाय सुझाता है।

(१४) रावण की सभा मे अगद के पाँव रोपने की घटना का उल्लेख यहाँ भी वाल्मीकि रामायण के समान ही नही है।

(१५) यहाँ कुम्भकर्ण का वध राम नही, लक्ष्मण करते हैं।

(१६) लक्ष्मण को शक्ति-बाण लगने हनुमान द्वारा द्रोणगिरि को सजीवनी समेत उखाड लाने का कोई उल्लेख इसम नही। जब इन्द्रजीत राम लक्ष्मण को नागपाश मे बाँध लेता है तब विभीषण प्रज्ञास्त्र द्वारा दोनो भाइयो को होश मे लाता है और सुग्रीव अभिमत्रित विशल्या औषधि का प्रयोग कर दोनों को स्वस्थ कर देता है।

(१७) कुबेर ने अभिमत्रित जल भेजा जिससे राम-लक्ष्मण, सुग्रीव आदि ने अपनी आँखें धोयीं। इसके प्रभाव से वे अदृश्य प्राणियो को देखने मे समर्थ हो गये।

(१८) 'रामोपाख्यान' मे सीता की अग्नि-परीक्षा नहीं होती, प्रत्युत राम के उन्हें अगीकार करने से इकार करते ही ब्रह्मा, इन्द्र, अग्नि, वायु, वरुण कुबेर आदि देवता प्रकट होते हैं और सब अलग अलग सीता के सतीत्व का साक्ष्य देते हैं। राजा दशरथ भी स्वर्ग से आते हैं। राम इनका साक्ष्य स्वीकार कर सीता को अपना लेते हैं।

'रामोपाख्यान' की शेष घटनाएँ 'वाल्मीकिरामायण' से मिलती जुलती हैं।

'महाभारत' के द्रोण पर्व[1] म नारद जी स जय स राम राज्य की सुव्यवस्था का वर्णन और राम क गुणो का आख्यान करत हैं। राम-कथा का इसम किंचित् उल्लेख है। शांति पर्व[2] म कृष्ण ने स जय से राम के सुशासन का वर्णन और राम के जीवन की अनित्यता का उल्लेख सृ जय का शोक कम करने के लिए किया है। राम कथा का उल्लेख इसमे नही हुआ 'सभापर्व'[3] म राम कथा का अति सक्षेप मे उल्लेख हुआ है, पर कथा विकास की दृष्टि से उसम कोई नई बात नहीं।

(घ) बौद्ध और जैन साहित्य मे राम-कथा

(1) बौद्ध साहित्य मे

पालिभाषा मे लिखित बौद्ध साहित्य के जातक ग्रथो मे राम कथा कुछ भिन्न

१ द्रोण पर्व अ० ५९

२ शान्ति पर्व में राजधर्मानुशासन पर्व अ० २९ श्लोक ५१ ६१

३ सभा पर्व के अतगत अर्घाभिहरण पर्व में

रूप मे प्राप्त होती है। इनमें 'दशरथ जातक' की कथा प्रसिद्ध है और राम-कथा के विकास की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है। उसम सीता को राम लक्ष्मण की बहिन बताया गया है। कथा का रूप सक्षेप म इस प्रकार है —

(१) वाराणसी के राजा दशरथ की पटरानी से दो पुत्र और एक पुत्री का उत्पन्न होना। पुत्र राम लक्ष्मण और पुत्री सीता। इस पटरानी की मत्यु के बाद दशरथ का एक अन्य स्त्री से विवाह। उससे भरत कुमार की उत्पत्ति।

(२) राजा ने दूसरी रानी को एक वर दिया था। उसके अन्तगत दूसरी रानी ने अपने सातवर्षीय पुत्र भरत के लिए राज्य मांगा। राजा ने इकार कर दिया।

(३) राजा दशरथ के कहने पर राम-लक्ष्मण अपनी बहिन सीता को लेकर बारह वर्ष के लिए हिमालय की ओर चले गये। ९ वष बाद ही दशरथ मर गये। भरत कुमार मां का कहना न मानकर अपने सौतेले भाइयों को वापस लौटाने के लिए वन मे गये। राम नही लौटे अपनी पादुका दे दी। भरत के साथ लक्ष्मण तथा सीता आदि लौट आये। पादुकाओं की साक्षी मे भरत राज्य करते रहे। उनसे कोई अन्याय होता तो पादुकाए आपस म बज उठती थी। तीन वष बाद राम लौटे। अपनी बहिन सीता से उन्होने विवाह किया। वे सोलह हजार वष तक राज्य करते रहे।

इस कथा मे रावण द्वारा सीता के अपहरण और बदरो के साथ राम की मत्री राम रावण युद्ध एव सीता-परित्याग का कोई उल्लेख नही।[१]

अनामक जातक मे एक कथा[२] कुछ इस रूप म आयी है कि उसका सारा ताना-बाना तो राम-कथा का है, पर राम, सीता, रावण, सुग्रीव, बालि हनुमान जटायु सपाति आदि का नामोल्लेख नही हुआ है। इनके स्थान पर क्रमश राजा बोधिसत्व उसकी रानी समुद्री नाग एक बदर, बदर का चाचा जिसने उसका राज्य छीन लिया है, एक छोटा बदर (इन्द्र) एक पक्षी जिसके पख नाग ने काट डाले हैं एक आहत पक्षी जो नाग का पता देता है का उल्लेख हुआ है। लका की जगह समुद्री द्वीप रखा गया है।

एक अन्य जातक 'दशरथ कथानक' मे भी राम-कथा आती है।[३] उसम विशेषता इतनी ही है कि लक्ष्मण की जगह 'रामण नाम आया है। सीता और उसके अपहरण तथा तत्सम्बन्धी घटनाओ आदि का कोई उल्लख नही। इनके अतिरिक्त कथा का जो शेषाश रह जाता है वह सब इस कथा मे लगभग यथावत पाया जाता है।

इन जातको के अतिरिक्त जयद्दिस जातक' 'सबुला जातक एव पाली त्रिपिटक'

१ मानस की राम कथा आ परशुराम चतुर्वेदी किताब महल इलाहाबाद प्र स पृ ७६ ७७
२ दे 'राम-कथा डा कामिल बुल्के प ५५७
३ वही प० ५७८

म भी राम कथा आती है पर उनमे उसका रूप अधिकतर 'वाल्मीकि रामायण' से प्रभावित है। ऐसा जान पडता है कि आद्य जातको मे राम-कथा का रूप 'वाल्मीकि रामायण' से स्वतंत्र—कदाचित लोकानुश्रुति पर आधारित रहा, और बाद के जातको की कथा रामायण से प्रभावित हो गयी।[1]

(ii) जन साहित्य मे

जन-ग्रथो मे राम कथा का रूप हिन्दू पौराणिक राम-कथा से तो भिन्न है ही, उसके श्वेताम्बरी और दिगम्बरी दो रूपान्तर भी हैं। श्वेताम्बरी राम कथा-परम्परा विमल सूरि कृत 'पउम चरिय' का अनुसरण करती है। इस परम्परा मे रविषेण-कृत 'पद्म चरित' अथवा 'पद्म पुराण' (संस्कृत) तथा स्वयभू कृत 'पउम चरिउ' (प्राकृत) ग्रथ उल्लेखनीय हैं। दिगम्बरी परम्परा गुणभद्र के 'उत्तर पुराण' का, जो जिनसेन के आदि पुराण का पूरक ग्रथ है, अनुसरण करती है। जन रामायण (स्वयभू के पउम चरिउ) के अनुसार, राम का विवाह सीता के अतिरिक्त सात अन्य कन्याओ से हुआ था और लक्ष्मण का सोलह राजकुमारियो के साथ। सीता रावण-मदोदरी की सतान थी जिसे अनिष्टकारी होने के कारण मजूषा म बन्द करके फेंक दिया गया था और वह जनक को मिल गयी थी। सीता-हरण वाराणसी के समीपवर्ती वन मे नारद द्वारा उत्तेजित किये जाने पर रावण ने किया था। रावण का वध लक्ष्मण ने किया था और फलस्वरूप रोग ग्रस्त होने से उनकी मृत्यु हुई तथा उन्ह नरक-वास भी भोगना पडा।[2]

गुणभद्र के 'उत्तर पुराण' मे राम-कथा का रूप इस प्रकार है—दशरथ वाराणसी के राजा थ। उनके चार पुत्र थे, जिनमे से राम की माता का नाम सुबाला और लक्ष्मण की माता का नाम ककेयी था। भरत तथा शत्रुघ्न की माताओ के नाम नहीं दिये गये हैं। सीता मदोदरी के गभ से उत्पन्न रावण की पुत्री थी जिसे अनिष्टकारी जानकर रावण ने एक मजूषा म बन्द करके मारीच के द्वारा मिथिला मे गडवा दिया था। हल जोतत समय जनक को सीता मिल जाती है और वह उसे पुत्रीवत पालते हैं। उसके विवाह के उपलक्ष्य मे जनक एक वदिक यज्ञ करते हैं जिसके रक्षाथ राम और लक्ष्मण को बुलाया जाता है। सीता का विवाह राम से हो जाता है। रावण यज्ञ मे निमत्रित नही होता, इससे चिढकर और नारद द्वारा सीता के सौन्दय की प्रशसा सुन कर वह वाराणसी के समीपवर्ती चित्रकूट से उसे हर ले जाता है। लका म राम रावण युद्ध होता है। राम रावण को मार देते हैं और दिग्विजय करते हुए वाराणसी लौट आते हैं।[3]

गुणभद्र द्वारा प्रस्तुत राम कथा के इस रूप में न तो ककेयी को प्राप्त दो वरो के कारण राम-वनवास का उल्लेख है न पचवटी, दण्डकवन, जटायु, शूर्पणखा, खर-

१ मानस की रामकथा डा० परशुराम चतुर्वेदी पृ० ७६
२ वही पृ ८०-८१
३ जन साहित्य और इतिहास श्री नाथूराम प्रेमी', हिन्दी ग्रथ रत्नाकर कार्यालय, बम्बई, पृ० २७६

दूषण वध आदि का हा । सीता-परित्याग की घटना भी नहीं दी गयी है । गुणभद्र की राम कथा का जानकी जन्म प्रसग 'अदभुत रामायण' के अनुसार है और 'पउम चरिउ' तथा 'पद्म चरित' का वाल्मीकि रामायण के ढग का । बौद्ध कथा और जन कथा म साम्य इस बात म है कि दशरथ दोनो मे वाराणसी के राजा बताये जाते हैं और दोनो म ही सीता परित्याग तथा लव कुश आदि का प्रसग नहा है । दाना म अन्तर इस बात का है कि जब बौद्ध कथा मे राम बोधिसत्व के रूप मे हैं और उनके चरित्र के सत्य, अहिंसा आदि शील गुण उन्हे बुद्धत्व की कोटि में पहुचाते जान पडते हैं तब जन कथा रूप म वे नौ बलदेवो म से एक हैं जिनके जीवन की परिणति जन धम म दीक्षित होकर मुक्ति का अधिकारी बनने मे होता है । जन कथा बौद्ध कथा रूप की अपक्षा जटिल है । बौद्ध-कथा रूप की सादगी और सरलता उसके प्राचीन होने की द्योतक हैं ।[1] यो इन सभी परम्पराओ के सामने रामकथा का कोई लोकानुश्रुति आधारित रूप अवश्य रहा होगा ।

(ङ) पुराणो मे राम-कथा

पुराणो के वण्य विषय के अन्तगत जिन पच लक्षणो का उल्लख पहले हो चुका है, उनम अन्तिम लक्षण वशानुचरित' का वणन है । प्राय सभी पुराणो म इस लक्षण का निर्वाह हुआ है, भले ही अन्यो के सम्बन्ध मे न्यतिक्रम बरता गया हो । वशानुचरित' के अन्तगत न केवल सूय और चन्द्र वश के प्रतापी राजाओ का नामोल्लख हाता है वरन उनके द्वारा किये गए महान कार्यों का विवरण भी दिया जाता है । इसी रूप मे राम चरित का वणन पौराणिक साहित्य मे हुआ है । 'मार्कण्डेय पुराण' 'वामन पुराण' 'मत्स्य पुराण , लिंग पुराण' तथा भविष्य पुराण का छोडकर शेष पुराणा मे राम कथा का किसी न किसी रूप म उल्लख मिलता है । 'वाल्मीकि रामायण' की राम कथा को आधार बनाते हुए विभिन्न पुराणो म राम कथा के रूपान्तरा पर नीचे विचार किया जाएगा ।

'ब्रह्म पुराण'[2] मे राम कथा उल्लेख बहुत सक्षिप्त रूप म अनन्त वासुदेव माहात्म्य वणन के प्रसग म हुआ है । सीताहरण, राम सुग्रीव मत्री, बालि वध, सतु बध आदि घटनाआ की कवल नाम गणना मात्र की गयी है, अत राम कथा के विकास की दृष्टि स इस पुराण में कोई नवीनता नही ।

पदम पुराण के पाताल खण्ड[3] और पठोत्तरखण्डोत्तरार्द्ध भाग[4] म राम-कथा के कई प्रसगो का फुटकल वणन प्राप्त होता है । पाताल खण्ड मे मुख्यत रामायण के उत्तर काण्ड की कथा का वणन है जिसमे लोकापवाद—विशषत रजक द्वारा सीता के चरित्र के

---

१ 'मानस की रामकथा पृ० ८२ ८४

२ अध्याय,१७६ श्लोक ३७ ५१

३ पद्म पुराण पाताल खण्ड अध्याय १।११ ३० ४३ ४६ ५२ ६८ १०४ १०५,११६ ११७

४ पद्म पुराण उत्तर खण्ड अध्याय २४२ २४४

अग्नि लांछन लगाने से राम द्वारा सीता का परित्याग, लक्ष्मण का सीता को वन में छोड़ने जाना, सीता-लक्ष्मण संवाद, वाल्मीकि के आश्रम में लव कुश की उत्पत्ति, उनकी शिक्षा दीक्षा, राम द्वारा अश्वमेध-यज्ञ का आयोजन, श्यामकर्ण अश्व के रक्षार्थ शत्रुघ्न, हनुमान, सुग्रीव आदि वीरों का जाना, लव-कुश द्वारा इन वीरों की पराजय, सीता की आज्ञा से लव-कुश का राम के समीप गमन, लक्ष्मण के साथ सीता का रामाश्वमेध-यज्ञ मण्डप में आगमन आदि प्रसंगों का वर्णन है। युद्ध-काण्ड के प्रसंग में राम का वनवास से प्रत्यागमन, भरत हनुमान, राम-भरत समागम, राम का अयोध्या प्रवेश, राम का राज्याभिषेक और राम राज्य की सुव्यवस्था आदि प्रसंगों का कथन है। सीता हरण से लेकर राम-रावण-युद्ध तक की बहुत-सी घटनाओं का कोई उल्लेख इसमें नहीं है, उसके पूर्व के राम-चरित का भी नहीं। 'पद्म पुराण' के उत्तरखण्ड में इस कमी की पूर्ति कर दी गयी है। उसमें राम कथा का रामावतार कारण प्रसंग और राम जन्म से लेकर राम के वनवास से अयोध्या लौटने, गर्भवती सीता को त्यागने, सीता के दिव्यधाम जाने तथा राम के महाप्रयाण करने तक की घटनाओं को संक्षेप में समेट लिया गया है। इस प्रकार पाताल खण्ड और उत्तरखण्ड दोनों को मिलाकर संपूर्ण राम कथा का कथन 'पद्म पुराण' में एक प्रकार से मिल जाता है।

'पद्म पुराण' की राम कथा में वाल्मीकि रामायण के कथा रूप से जो भिन्नताएँ मिलती हैं वे निम्नांकित हैं —

(१) 'वाल्मीकि रामायण' में वानर आदि का जन्म ग्रहण कर, रामावतार में, रावण वध कार्य में विष्णु की सहायता करने की बात देवताओं से ब्रह्मा द्वारा कही गयी है परन्तु 'पद्म पुराण' में स्वयं विष्णु द्वारा।

(२) राजा दशरथ ने जो पुत्रेष्टि यज्ञ किया, उसके अग्नि-कुण्ड से पायस-पात्र लेकर अग्निदेव नहीं आविर्भूत हुए जैसा कि 'वाल्मीकि रामायण' में है, वरन् स्वयं विष्णु प्रकट हुए। यहाँ खीर का विभाजन तीनों नारियों में इस प्रकार हुआ है—राजा दशरथ ने विष्णु प्रदत्त सारी खीर का आधा आधा भाग कौसल्या तथा कैकेयी को दे दिया, और फिर सुमित्रा को कौसल्या तथा कैकेयी ने अपने अपने भाग का अर्द्धांश दिया।[२] इसी कारण राम-लक्ष्मण और भरत शत्रुघ्न का युग्म संसार में प्रसिद्ध हुआ।[३]

(३) कौसल्या को राम ने पैदा होते ही शंख चक्र-पद्म-गदाधारी विष्णु रूप में अपना विराट दर्शन कराया।[४] इस प्रकार वाल्मीकि रामायण के पुरुषोत्तम राम 'पद्म पुराण' में ईश्वर का रूप ग्रहण कर लेते हैं।

---

१ पद्म पुराण उत्तर खण्ड अ० २४२ श्लोक २६ ३०

२ वही श्लो ५१ ६१

३ वही श्लो० ६६

४ वही श्लो० ८२ ८८

(४) विश्वामित्र ने जब राम लक्ष्मण की माँग राजा दशरथ से की, तब उन्होंने बिना आपत्ति उन्हें अपने दोनो पुत्रो को सौंप दिया।[1]

(५) दशरथ के द्वारा मुनिकुमार श्रवण की अनजान मे हत्या तथा अंधतापस के शाप की अन्तकथा का इसमे उल्लेख नही है। किन्तु, जयन्त-कथा का उल्लेख है।[2]

(६) यहाँ शूर्पणखा के नाक कान को लक्ष्मण ने नही, स्वयं राम ने काटा है।[3]

(७) राम के हाथों अपने वध की आकाक्षा से रावण सीता का हरण करता है।[4]

(८) यहाँ मृग रूप मारीच के पीछे पीछे राम और लक्ष्मण दोनों जाते हैं सीता अकेली ही कुटिया मे रह जाती हैं। रावण के साधु वेश धारण का भी कोई उल्लेख यहाँ नहीं है।[5]

(९) शबरी के आख्यान का वाल्मीकि रामायण' में कोई उल्लेख नहीं है किन्तु 'पद्म पुराण' मे शबरी द्वारा प्रेम भक्तिपूर्वक मधुर फल मूलादि से राम लक्ष्मण का सत्कार किए जाने और राम द्वारा उसे परम पद दिए जाने का उल्लेख आता है।[6] हाँ, जूठे बेर खिलाने वाली घटना का यहाँ कोई जिक्र नही है।

(१०) यहाँ राम द्वारा सीता का पता पूछने पर, गोदावरी के चुप रह जाने पर उसके जल के लाल हो जाने का शाप राम ने दिया है।[7]

(११) हनुमान के हाथ सहिदानी के रूप मे राम द्वारा अपनी मुद्रिका भेजने का यहाँ उल्लेख नही है।

(१२) यहाँ राम ने पहले दाहक बाण मारकर समुद्र को सुखा दिया है, फिर समुद्र की प्रार्थना पर वरुणास्त्र का प्रयोग कर उसे पुन जलपूरित कर दिया है।[8]

(१३) पद्मपुराण' के पाताल खण्ड मे राम के अश्वमेध-यज्ञ का जो विशद वर्णन प्राप्त है, वह 'जैमिनीय अश्वमेध' के अतिरिक्त अन्यत्र कम ही मिलता है। वाल्मीकि रामायण मे रामाश्वमेध यज्ञ का जो वर्णन उत्तरकाण्ड मे आया है, वह बहुत संक्षिप्त है और उसमे शत्रुघ्न आदि वीरो का अश्व

१ वही श्लो० ११३ ११४
२ वही, श्लो० १६५ २११
३ वही श्लो २३६
४ वही श्लो० २५५ और २५८
५ वही श्लो २५४ २५५
६ वही श्लो० २६७ २७०
७ वही श्लो० २७३ २७४
८ वही श्लो० २६७ २६८

रक्षा के लिए उसके साथ जाने का कोई उल्लेख नहीं है। 'पदम पुराण' में यह अंश वाल्मीकि रामायण की अपेक्षा विशद है। अश्वमेध-यज्ञ का अश्व जब वाल्मीकि के आश्रम में पहुँचता है तब लव उसे बाँध लेता है। लव और शत्रुघ्न का घोर युद्ध होता है।[1] जो शत्रुघ्न लवणासुर जैसे राक्षस का मधुपुरी में वध कर चुके होते हैं, वही लव के सम्मुख अपने को निबल पाते हैं। फिर भी, युद्ध में लव आहत होकर मूच्छित हो जाते हैं। लव के निपात से सीता चिंतित हो उठती हैं। तभी संयोग से कुश महाकालपुर से लौट आते हैं और वे शत्रुघ्न से युद्ध रत हो जाते हैं। लव की मूर्च्छा भी टूटती है। फिर तो कुश और लव ने गजब ढा दिया। शत्रुघ्न, हनुमान और सुग्रीव सभी महारथियों को बाँध डाला। सुग्रीव और हनुमान सीता को सुनाकर राम रावण के प्रसंग का वर्णन करते हैं। सीता उन्हें पहचान जाती हैं। पुत्रों से कहकर उन्हें बंधन-मुक्त कराती हैं।[2] लव-कुश कितने भोलेपन से अपनी माँ से कहते हैं कि "माँ, एक यज्ञाश्व आया है जिसके ललाट पर किसी दाशरथि राम का यह स्वर्ण पत्र मढ़ा है कि एक मेरी माता ने ही वीर पैदा किया है, दूसरा कोई क्षत्रिय हो, तो इसे पकड़े, अथवा मेरी अधीनता स्वीकार करे, तो क्या माँ तू क्षत्रिया नहीं है क्या तू वीरों की माता नहीं है? इसीलिए हमने अश्व को पकड़ लिया"। सीता लव-कुश को प्रथम बार ही बतलाती हैं कि दाशरथि राम ही तुम्हारे पिता हैं और शत्रुघ्न तुम्हारे पितृव्य। सीता उनसे यज्ञाश्व को भी मुक्त कराती हैं। शत्रुघ्न आदि अश्व के साथ अयोध्या लौटते हैं। राम से सारा वृत्तान्त कहते हैं। इसके अनन्तर लव कुश सीता की आज्ञा से राम के समीप जाते हैं[3] और वाल्मीकि की प्रेरणा से रामचरित का गायन करते हैं। लक्ष्मण जाकर सीता को राम के यज्ञ-मण्डप में लिवा लाते हैं।[4]

(१४) 'पदम पुराण', पाताल खण्ड में सीता परित्याग प्रसंग भी एक ऐसा प्रसंग है जो इसी रूप में वाल्मीकि रामायण में नहीं मिलता। एक धोबी का आधी रात को दूसरे के घर से आयी अपनी स्वैराचारिणी पत्नी को पीटना और अपनी माता द्वारा मना करने पर यह कहना कि मैं राजा राम नहीं हूँ जिन्होंने राक्षस के घर में रही सीता को अंगीकार कर लिया।[5] चरों द्वारा जब इस घटना की रिपोर्ट रामचन्द्र को मिलती है

---

१ पद्मपुराण पाताल खण्ड सर्ग ५४ और ६० ६२
२ वही सग ६३ ६४
३ वही सग ६६
४ वही सर्ग ६७
५ वही सग ५६ श्लो २३ २५

राम के सम्मुख उनके यश म नही उपस्थित होती, वरन लव-कुश के कुछ बडे हो जाने पर उन्हें वाल्मीकि को सौंप कर वे पृथ्वी देवी के लोक में चली गयीं।[1] राम ने इसके बाद तेरह हजार वर्ष तक अखण्ड रूप से अग्निहोत्र किया।[2]

अग्नि पुराण' के सात अध्यायों[3] म राम कथा का वणन वाल्मीकि रामायण' के आधार पर किया गया है। पुराणकार ने यह पहले ही कह दिया है—

रामायणमह वक्ष्ये नारदेनोदित पुरा।
वाल्मीकये यथा तद्वत् पठित भुक्तिमुक्तिदम्॥[4]

और अन्त मे भी—

वाल्मीकिर्नारदाच्छ्रुत्वा रामायणमकारयत।
सविस्तर यदतच्च शृणुयात्स दिव व्रजेत्॥[5]

'वाल्मीकि रामायण की कथा का इसमे इतनी निष्ठा से अनुकरण किया गया है कि किसी मुख्य बात का उल्लेख छूटने नही पाया है और कोई नयी उदभावना आने नही पायी है। पर तु गागर म सागर भरते हुए भी वणन में सरसता है।

'ब्रह्मववत्त पुराण'[6] म वेदवती के सीता के रूप मे जन्म ग्रहण करने की कथा के अन्तगत राम कथा का वणन सक्षेप मे आया है। परन्तु सीता जन्म और छाया सीता की अन्तकथाओं के कारण इसका महत्त्व है। सीता-जन्म के सम्बन्ध मे बताया गया है कि सीता पूवजन्म मे कुशध्वज की पुत्री वेदवती थीं। वेदवती का आख्यान सक्षप म यह है कि वह पैदा होते ही वेदध्वनि कर उठी थी। पुष्कर क्षेत्र म उसन एक मन्वन्तर तक विष्णु के प्रीत्यर्थ कठिन तपस्या की। आकाशवाणी हुई कि साक्षात हरि तुम्हारे पति होंगे। किन्तु वेदवती इतने से ही सतुष्ट न हुई। उसने गन्धमादन पवत पर जाकर पहले से भी अधिक कठिन तपस्या आरम्भ कर दी। एक बार दुरात्मा रावण वहाँ आया। वेदवती ने उसका आतिथ्य किया पर रावण के मन मे पाप-वासना जागी, उसने बल पूवक वेदवती को धर्षित करना चाहा, पर उसके तेज से सहम गया। वेदवती ने योग द्वारा शरीर त्याग कर दिया। वही वेदवती अगले जन्म मे सीता हुई और हरि रूप राम उसके पति हुए। उसीके हरण के कारण रावण का विनाश हुआ।

इस पुराण में छाया सीता की कहानी इस प्रकार आयी है—वनवास के दिनों मे अग्निदेव राम के पास आये और बोले कि अब सीता हरण का समय आ गया है। आप मेरी पुत्री को मेरे पास छोड़कर उसकी छाया ही अपने पास रखें, फिर परीक्षा काल आने पर मैं आपको सीता लौटा दूगा। किन्तु अग्नि ने राम से कहा कि आप

१ वही अ ११ श्लो० १५
२ वही अ ११ श्लो १८
३ अध्याय ५ ११
४ अग्निपुराण अ० ५, श्लो १
५ अग्निपुराण अ० १२ श्लो १३
६ ब्रह्मववत्त पुराण प्रकृति खण्ड अध्याय १४

इस रहस्य को लक्ष्मण तक से न कहें। अग्नि ने योग से असली सीता के रूप गुणवाली माया की सीता बनाकर राम को दे दी। जब रावण-वध के अनन्तर सीता ने चरित्र-परीक्षा देने के लिए अग्नि प्रवेश किया तब अग्निदेव ने असली सीता राम को लौटा दी। पर, छाया-सीता ने अग्नि देव से पूछा कि अब मैं क्या करूँ, तब अग्नि देव ने उसे पुष्कर में जाकर तप करने को कहा। छाया-सीता ने तीन लाख दिव्य वर्षों तक तप किया और स्वर्ग में लक्ष्मी बन गयी। उसकी एक कथा इसमें यह भी दी है कि अग्नि प्रवेश के समय निकलकर जब पतिव्यग्रा छाया-सीता ने पाँच बार 'पति दो पति दो' कहा, तब विनोदी शिवजी ने उसे वर दे दिया कि तेरे पाँच पति होंगे। इसी से सत्य युग की वेदवती और त्रेता की सीता द्वापर में द्रौपदी बनी जिसके पाँचों पाण्डव पति बने।[1]

'ब्रह्मवैवर्त्त पुराण' के 'कृष्ण-जन्म-खंड' के[2] अन्तर्गत भी रामोपाख्यान आया है जिसमें अहल्या-उद्धार की कथा के उल्लेख के अतिरिक्त शूर्पणखा के ही कुब्जा के रूप में अवतरित होने की अन्तकथा का उल्लेख है। कथा में अन्य कोई विशेषता नहीं।

'स्कंद पुराण' के 'माहेश्वर खंड' और 'ब्रह्म खंड' के अन्तर्गत राम-कथा के विविध प्रसंगों का वर्णन आया है। माहेश्वर खंड[3] में रामावतार का जो उल्लेख हुआ है, वह अत्यन्त सूक्ष्म है राम कथा के कुछ पात्रों की नाम चर्चा मात्र हुई है। सीता का जनक की पुत्री के रूप में उत्पन्न होना कहा गया है पर उन्हें पूर्व जन्म में साक्षात् ब्रह्मविद्या या वेदवती बताया गया है। 'स्कंद पुराण' के ब्रह्मखंडान्तर्गत सेतु माहात्म्य वर्णन[4] और धर्मारण्यमाहात्म्य-वर्णन[5] के प्रसंग में राम कथा के कुछ अंशों का अपेक्षाकृत विस्तृत वर्णन हुआ है। इसमें कथा विकास की दृष्टि से तो कोई उल्लेखनीय बात नहीं। वाल्मीकि रामायण में वर्णित घटनाओं की ही सरसरी तौर पर चर्चा की गयी है, किन्तु एक बात इसमें विशेष है कि प्रत्येक घटना की तिथि पुराणकार ने दी है। इसी से पता चलता है कि विवाह के समय राम की अवस्था पन्द्रह वर्ष की और अयोनिजा सीता की छः वर्ष की थी। इस प्रकार उनकी अवस्थाओं में नौ वर्ष का अन्तर था। विवाहोपरान्त बारह वर्ष तक ये दम्पति अयोध्या में सुखपूर्वक रहे। वनवास से लौटने पर सीता ३३ वर्ष की थीं और राम ४२ वर्ष के। सीता चौदह मास दस दिन रावण के बंधन में रहीं। राम को जब पंचवटी में रहते साढ़े छः वर्ष हो गये थे, तब शूर्पणखा को उन्होंने विरूप किया। राम ने ग्यारह सहस्र वर्ष तक राज्य किया। इनके अतिरिक्त अन्यान्य छोटी-छोटी घटनाओं की मास तिथियाँ दी हुई हैं।

सेतुमाहात्म्य-वर्णन (४४वें अध्याय) में लक्ष्मण द्वारा कुम्भकर्ण-वध के प्रसंग

---

१ ब्रह्मवैवर्त्त पुराण प्रकृति खण्ड १४।५०-५४
२ ब्रह्मवैवर्त्त पुराण कृष्णजन्म खण्ड अध्याय ६२
३ स्कंद पुराण माहेश्वर खण्ड अध्याय ८
४ अध्याय २ और ४४-४७ तथा ५२
५ अध्याय ३०-३५

में राम रावण युद्ध का भी उल्लेख है, परन्तु घटना क्रम म कोई नवीनता नहीं। इन्द्र जीत के द्वारा नागपाश म राम-लक्ष्मण का बांधना और गरुड जी का आकर उनको उससे मुक्त करना, कुबेर द्वारा भेजे अभिमन्त्रित जल से राम पक्ष के महारथियों का अपने नेत्र धोना, इन्द्र द्वारा राम के लिए अपना रथ भेजना आदि घटनाओं का उल्लेख हुआ है।

सेतुबन्धन माहात्म्य वर्णन (दूसरे अध्याय) मे कथन है कि जब राम द्वारा पूजित होने पर भी समुद्र ने दर्शन नहीं दिया तब राम न क्रोधपूर्वक एक अग्नि बाण छोडा जिससे समुद्र म दाह उठी और वह हाथ जोडे स्तुति करता हुआ राम के सामने प्रकट हुआ। उसने यह उपाय बताया कि आपकी सेना मे नल नामक जो वानर है, वह विश्वकर्मा का पुत्र है। वह अपने हाथ से छूकर जो तृण काष्ठ या पाषाण मुझम डाल देगा, उसे मैं धारण करूंगा और इस प्रकार लका तक जाने के लिए सेतु तयार हो जाएगा। इसी विधि से राम ने दश योजन चौडा और सौ योजन लम्बा सेतु नल के द्वारा तयार कराया। इस सेतुबन्ध के दर्शन और वहाँ स्नान का बहुत माहात्म्य वर्णित है।

देवीभागवत पुराण म दो स्थलों पर राम कथा का सक्षिप्त उल्लेख हुआ है, एक तृतीय स्कध म[1] और दूसरा नवम स्कध में।[2] तृतीय स्कध म व्यास जी के मुख से जनमेजय के सम्मुख राम चरित का वर्णन कराया गया है। इसम कथागत कोई नवीन बात नही। सीता को यहाँ लक्ष्मी का अश बताया गया है। दो वरों म से एक वर के अन्तर्गत राम का वनवास शूपणखा का विरूपीकरण, राम के सहायतार्थ लक्ष्मण का भेजते समय सीता का दुवचन-कथन और उनके चरित्र पर लांछन लगाना तथा दुरभिसन्धि स उन्हें भरत प्रेषित बताना साधु-वेश म आकर रावण द्वारा सीता-हरण रावण जटायु-युद्ध राम का विलाप सुग्रीव राम-मैत्री हनुमान द्वारा सीता शोध बालि-वध नल द्वारा सेतु बध आदि सभी घटनाएँ पूर्वकथित ढग स अकित की गयी हैं। एक ही नवीन बात इस प्रसग म यहाँ मिलती है कि सीता शोकविह्वल राम को नारद जी देवी भगवती का आश्विन मास में व्रत उद्यापन करने का परामर्श देते हैं। राम अनुष्ठान करते हैं और देवी भगवती उन पर प्रसन्न होकर रावण पर विजय प्राप्त करने तथा एकादश सहस्र वर्ष तक राज्य करने का वरदान देती हैं।

'देवीभागवत पुराण' के नवम स्कध के सोलहवें अध्याय म सीता चरित-वर्णन के प्रसग म राम का जो वृत्त वर्णित है वह दाल म नमक के बराबर है। पुराणकार ने अपना ध्यान सीता के पूर्वजन्म वृत्तान्त पर ही अधिक केन्द्रित किया है। सीता का पूर्वजन्म म कुशध्वज की पुत्री वेदवती होना वेदवती द्वारा हरि को पति रूप म प्राप्त करने के लिए एक मन्वन्तर तक तपस्या करना आकाशवाणी द्वारा उसे इसका आश्वासन

---

१ अध्याय २८ ३० ।
२ अध्याय १६

मिलना, फिर भी गन्धमादन पर जाकर उसकी ओर कठिन तपस्या, रावण का उसे देखकर काम-पीडित होना उसे पकडना, वेदवती का योग बल से देह त्याग करना, अगले जन्म म उसका सीता होना, सीता हरण के पूव अग्निदेव की सम्मति से राम का वास्तविक सीता को अग्नि के सिपुद कर देना, छाया सीता का ही हरण, रावण-वध के उपरान्त अग्निदेव द्वारा असली सीता की वापसी, राम द्वारा छाया सीता को पुष्कर मे जाकर तप करने का परामश, छाया सीता द्वारा तीन लाख वष तक तप और अन्तत स्वग म लक्ष्मी बन जाना जिसका अश वह थी, वास्तविक सीता के पति को प्राप्त कर लेने पर छाया सीता का शकर से पाँच बार पति दो, पति दो' कहना रसिक शिव द्वारा उसे पाँच पतियो की पत्नी होने का वरदान इसी वरदान के फलस्वरूप द्वापर युग म उसका यज्ञ कुण्ड से उदभूत अयोनिजा द्रौपदी बनना और पच पाण्डवो से विवाहित होना आदि उपाख्यान सक्षेप म वर्णित हैं। 'ब्रह्मववत्त पुराण'[1] म यह उपाख्यान इसी रूप मे कुछ विस्तार से वर्णित है। 'देवीभागवत' मे राम से अधिक सीता का प्राधान्य दिखाने के लिए इन कथाओ का वणन हुआ है। राम की विजय देवी के वरदान से हुई इस पर इसमें विशेष बल है।

'कूर्म्म पुराण' की ब्राह्मी सहिता म[2] इक्ष्वाकु वश वणन प्रसग मे राम-कथा का भी सामान्य उल्लेख हुआ है। कथा का अस्थिपिजर मात्र ही है, उसमे मासलता नही, और पिजर भी वाल्मीकि रामायण का है। अत राम कथा विकास की दृष्टि से इस पुराण का महत्त्व नही है।

'अध्यात्म रामायण जो ब्रह्माण्ड पुराण के उत्तरखड के अन्तगत माना जाता है,[3] राम-कथा विकास की दष्टि से एक महत्त्वपूण ग्रथ है क्योंकि उत्तर भारत को जिस ग्रथ रत्न ने अपनी दिव्य आभा से गत चार सौ वर्षों में देदीप्यमान रखा है उस गोस्वामी तुलसीदासकृत 'रामचरित मानस मे इस ग्रथ का सर्वाधिक आश्रय लिया गया है। राम-कथा को सस्कृत मे इतना विस्तार वाल्मीकि रामायण' के उपरान्त इसी ग्रथ म मिला है। यद्यपि इसमे उपदेशा की भरमार है तथापि इसका कथा भाग भी कम महत्त्वपूण नही है। 'वाल्मीकि रामायण' की तुलना म इस ग्रन्थ मे कथा रूप की जो भिन्नता या नवीनता मिलती है उसका उल्लेख नीचे किया जा रहा है —

(१) रावण द्वारा सताये जाने पर इन्द्रादि देवतागण ब्रह्मा के पास जात हैं और ब्रह्मा विष्णु के पास। ब्रह्मा विष्णु स कहते हैं कि मेरे वर (देव गधव राक्षस सबस अबध्य) के कारण पुलस्त्यनदन विश्रवा का पुत्र रावण अत्यन्त अभिमानी और अत्याचारी हो गया है। मैंने उसकी मत्यु मनुष्य के हाथ रखी है, अत आप मनुष्य रूप धारण कर उस दव शत्रु

---

१ ब्रह्मववत्त पुराण प्रकृति खण्ड अ १४

२ अध्याय २१

३ दे ए हिस्ट्री आफ इडियन लिटरेचर जिल्द १ डा विटरनित्ज प० ५७६

का वध कीजिए।[१] विष्णु को भी स्मरण आ जाता है कि उन्होंने कश्यप और अदिति की तपस्या स सतुष्ट होकर उन्हे पुत्र रूप म प्राप्त होने का वर दिया था। अब चूकि (कश्यप और अदिति पृथ्वी पर दशरथ और कौसल्या के रूप मे विद्यमान हैं[२] अत यह मौका अच्छा है। ब्रह्मा जी की अनुरोध रक्षा भी हो जाएगी और कश्यप-अदिति को दिये वर की पूर्ति भी। अत वे ब्रह्मा को स्वीकृति दे देते हैं और कहते हैं—दशरथ यहाँ पुत्र रूप से पृथक-पृथक चार अशो म प्रकट होकर मैं कौसल्या के और अन्य दो माताओ के गभ से जन्म लूगा। उसी समय मेरी योगमाया भी जनक जी के घर मे सीता रूप स उत्पन्न होगी।[३]

राम-जन्म की इस पूव-कथा से यह स्पष्ट हो जाता है कि राम, लक्ष्मण भरत तथा शत्रुघ्न सभी विष्णु के अ शावतार थे और सीता उनकी योग-माया। सीता के अयोनिजा या पृथ्वी-सुता होने की बात न कहकर उनके जनक पुत्री होने की बात कही है। 'श्रीमदभागवत' म भी ऐसा ही है। 'वाल्मीकि रामायण की भाँति ही यहाँ विष्णु को सहायता के लिए पृथ्वी पर अपने अपने अ श स वानर वश म पुत्र उत्पन्न करने की बात दवताओ से ब्रह्मा ने कही है। कश्यप और अदिति को दिये गये वर की कथा वसिष्ठ जी राजा दशरथ को भी एक अवसर पर सुनाते हैं।[४]

(२) यहाँ भी हव्यवाहन अग्नि द्वारा प्रदत्त पायस का बँटवारा पदम पुराण'[५] की भाँति हुआ है—कुल पायस (खीर) का आधा आधा कौसल्या और कक्रेयी को और उनके अशों का आधा-आधा भाग सुमित्रा को—'वाल्मीकि रामायण की भाँति नही जहाँ तीनो रानियो द्वारा खीर खाकर गर्भवती होने की बात कही गयी है, उनके हिस्स बाँट की नही।

(३) 'वाल्मीकि रामायण' से भिन्न, किन्तु 'पदम पुराण' के समान अध्यात्म रामायण' म रामचन्द्र जन्म स ही शख चक्र गदा पदम लिये चतुभु ज रूप में कौसल्या को अपना दिव्य दशन कराते हैं और कहत है कि तुमने अपनी पूव तपस्या के फल से ही मेरा यह दिव्य रूप देखा है।[६]

---

१ अध्यात्म रामायण बालकाड सग २ श्लो २४
२ वही सग २ श्लो २५ २६
३ वही सग २ श्लो २७ २८
४ अध्यात्म रामायण बालकाड सग ४ श्लो० १२ १८
५ पदम पुराण उत्तरखड अ २४२ श्लो ८९ ९१
६ वही श्लोक ८२ ८३
७ अध्यात्म रामायण बालकाण्ड सग ३ श्लोक १६ १८
८ वही सर्ग ३ श्लोक ३३

(४) अहल्या का उद्धार करके रामचन्द्र लक्ष्मण और विश्वामित्र के साथ अभी मिथिला के मार्ग म ही थे कि उन्हे गगा पार करनी पडी। केवट ने इस भय से रामचन्द्र को नाव पर चढाने से मना कर दिया कि कही उसकी नौका भी उनकी चरण रज का स्पश कर नारी न बन जाय, फिर उसकी आजीविका का क्या होगा ?[१] आगे चलकर इस कथा रूप का गोस्वामी तुलसीदास ने अनुकरण किया है, बस प्रसग बदल दिया है। तुलसीदास 'एहि घाट तें थोरिक दूर अहै कटि लौं जल थाह दिखाहौं जू' (कवितावली) वाले पद को केवट के मुख से तब कहलाते हैं जब राम वनवास के लिए चल पडे हैं। तुलसीदास ने परशुराम का आगमन स्वयवर-सभा मे शिव धनुष के टूटते ही दिखाया है, पर 'अध्यात्म रामायण' मे परशुराम रामचन्द्र आदि को विवाहोपरान्त मिथिला से तीन योजन चल चुकने पर मिलते हैं।[२] ऐसा ही 'वाल्मीकि रामायण' म है।

(५) 'अध्यात्म रामायण' मे कैकेयी द्वारा दो वर माँगने से पूव ही, देवताओ के भेजे नारदजी रामचन्द्र के पास आकर उन्ह आगाह कर जाते हैं कि दशरथ आपको राज्य भार सौंपने वाले हैं, यदि आपने यह स्वीकार कर लिया, तो रावण को मारकर पृथ्वी का भार हल्का करने की आपकी प्रतिज्ञा का क्या होगा ?[३]

(६) इधर तो अयोध्या मे राम के राज्याभिषेक की तैयारी हो रही है और उधर देवनागण सरस्वती देवी की मनुहार कर रहे हैं कि वे अयोध्या जाकर मन्थरा और कैकेयी के मन मे प्रवेश करके राज्याभिषेक मे विघ्न उत्पन्न करें।[४]

(७) 'वाल्मीकि रामायण' मे कैकेयी स्वय राजा दशरथ को स्मरण कराती है कि दवासुर सग्राम मे जब आप शत्रु द्वारा घायल करके गिरा दिये गये थे तब युद्ध स्थल म सारी रात जागकर मैंने अनेक प्रकार के प्रयत्न करके आपकी जीवन रक्षा की थी, उस समय आपने प्रसन्न होकर मुझे दो वर दिये थे जिन्हें मैंने आपके ही पास धरोहर रख दिया था।[५] 'अध्यात्म रामायण मे मन्थरा कैकेयी को इन दो वरो का स्मरण कराती है। साथ ही जिस परिस्थिति मे ये वर दिये गये थे, उसमे कुछ नयी उदभावना की गयी है। यहाँ बताया गया है कि जिस समय राजा दशरथ

---

१ वही सग ५ श्लोक २४
२ वही सग ७ श्लोक १
३ वही अयोध्या काण्ड सग १ श्लोक ३२ ३४
४ वही अयोध्या काण्ड सर्ग २ श्लोक ४४ ४६
५ वाल्मीकि रामायण अयोध्या काण्ड सग ११ श्लोक १८ २०

दत्यों से युद्ध करने म निमग्न थे उस समय उनके बिना जाने रथ की धुरी की कील टूटकर गिर गयी तब ककेयी ने अपनी अँगुली उस कील के छिद्र म लगा दी थी और पति की प्राण रक्षा के लिए वह बहुत देर तक इसी स्थिति म रही थी। दत्यों को मार चुकन पर राजा दशरथ ने ककेयी को इस स्थिति मे दखकर प्रसन्नता व्यक्त की थी और दो वर दिये थे।[1]

(८) सीता राम से वन ले चलने का आग्रह करती हुई कहती है कि आपन ब्राह्मणो के मुख से बहुत सी रामायणें सुनी होंगी बताइए, उनम से किसी म भी क्या सीता के बिना रामजी वन म गये है ?[2] इससे सूचित होता है कि राम कथा एक लोक कथा थी और वह पुराणा म और कदाचित 'वाल्मीकि रामायण' मे भी ग्रहण किये जान क पूव लोकानुश्रुति मे अपना अस्तित्व रखती थी।

(९) 'अध्यात्म रामायण' म चित्रकूट म ककेयी राम के समक्ष अपने हृदय का अनुताप प्रकट करती है और कहती है कि दवी प्ररणा स ही उसने यह अशुभ काय किया है। राम भी उसको निर्दोष बतलाकर उसका प्रबोध करते है। ककेयी राम को भगवान मानकर चलते समय पथ्वी पर सिर रखकर उन्हे प्रणाम करती है।[3] 'वाल्मीकि रामायण' म ककेयी राम से चित्रकूट म कुछ नही कहती। राम ही भरत के चलते चलते उनस कहते हैं कि माता ककेयी की रक्षा करना उस पर क्रोध मत करना।[4]

(१०) दण्डकारण्य में जब रामचन्द्र अगस्त्य मुनि के आश्रम म उनके दशनाथ जाते हैं तब अगस्त्य उन्हे उन्ही क लिए पूवकाल मे इन्द्र द्वारा दिया हुआ एक धनुष तथा बाणो से कभी खाली न होने वाला एक तरकश और एक रत्नजटित खडग देते है।

(११) 'ब्रह्मवैवर्त्त पुराण' तथा 'भागवत पुराण' मे अग्निदव असली सीता को उन्हे सौंपकर छाया सीता को अपन साथ रखने का सुझाव राम को देते हैं परन्तु 'अध्यात्म रामायण' म रामचन्द्र स्वय सीता स पचवटी म यह कहते हैं कि रावण साधु वेश म आकर तुम्हारा हरण करने वाला है इसलिए तुम कुटी म अपनी छाया छोडकर अग्नि म प्रवेश कर जाओ, मेरी आज्ञा से वहाँ अदश्य रूप से एक वष तक रहो तदनन्तर रावण के

---

१ अध्यात्म रामायण अयोध्या काण्ड सग २ श्लोक ६७ ७१
२ व ही अयोध्या काण्ड सग ४ श्लोक ७८
३ वही अयोध्या काण्ड सग ९ श्लोक ५५ ६८
४ वाल्मीकि रामायण अयोध्या काण्ड सग ११२ श्लोक २७
५ अध्यात्म रामायण अरण्य काण्ड सर्ग ३ श्लोक ४५ ४६

मारे जाने पर तुम पूववत मुझ पा लोगी।[1] सीता ने ऐसा ही किया, मायामयी सीता को कुटी मे छोड व स्वय अग्नि मे अन्तर्द्धान हो गयी।

(१२) 'अध्यात्म रामायण म कबन्ध राक्षस, जो पूवज म मे पूर्वावसु ग धव था, मरते समय अपना पूवरूप धारण करके वाल्मीकि रामायण की भाँति सुग्रीव से मत्री करने का सुझाव राम को स्वय नही देता, वरन वह सामने के आश्रम म रहनेवाली शबरी के पास उन्हे भेज देता है और कहता है कि वही उन्हे सीता प्राप्ति का उपाय बताएगी।

(१३) 'अध्यात्म रामायण' से यह पता चलता है कि तारा प्रारम्भ म सुग्रीव की स्त्री न थी, वह बालि की ही स्त्री थी, बालि के मारे जाने के बाद वह सुग्रीव की भोग्या बनी।[2] सुग्रीव की भार्या का नाम रुमा था, जिसे बालि ने बलपूवक छीन लिया था। बालि के मरन पर वह जो विलाप करती है उससे यह ध्वनित होता है।[3] अगद तारा से उत्पन्न बालि का पुत्र था।[4]

(१४) अपनी जो अँगूठी राम ने सहिदानी के रूप म हनुमान को सीता को देने के लिए दी, उस पर उनके नामाक्षर गुद हुए थे।[5]

(१५) 'अध्यात्म रामायण' मे सुरसा राक्षसी नही, नागमाता है जिसे देव ताओ ने हनुमान की सामर्थ्य का पता लगाने के लिए भेजा है।[6]

(१६) 'वाल्मीकि रामायण मे सीता अशोक वाटिका म एक महल मे राक्ष सियो के पहरे म रहती हैं। हनुमान इसी स्थिति मे उन्हे देखते हैं[7] परन्तु 'अध्यात्म रामायण' मे हनुमान उनको अशोक वाटिका मे एक शिशपा (शीशम) के वृक्ष के नीचे बैठी हुई पाते हैं।[8]

(१७) 'अध्यात्म रामायण मे सीता जयन्त द्वारा अपने लाल अगूठे मे चोच मारने और राम द्वारा उसे दण्ड देने के लिए उसके पीछे तिनके का एक बाण छोडने आदि की कथा, अपनी पहचान के रूप म राम से कहने के लिए हनुमान को बताती हैं।[9] वाल्मीकि रामायण म भी यह कथा सीता ने हनुमान को सहिदानी के रूप मे सुनायी है, पर उसमे और 'अध्यात्म

---

१ अध्यात्म रामायण अरण्य काण्ड सर्ग ७ श्लोक १ ?
२ वही किष्किंधा काण्ड सर्ग ७ श्लोक ६
३ वही किष्किंधा काण्ड सर्ग ३ श्लोक ११ और सर्ग ५ श्लोक ५०
४ वही किष्किंधा काण्ड सर्ग ७ श्लोक १ १२
५ वही किष्किंधा काण्ड सर्ग ६ श्लोक २८ २९
६ वही सुन्दर काण्ड सर्ग १ श्लोक १ १२
७ वाल्मीकि रामायण सुन्दर काण्ड सर्ग १५ श्लोक १८ १९
८ अध्यात्म रामायण सुन्दर काण्ड सर्ग २ श्लोक ७ ९
९ वही सुन्दर काण्ड सर्ग ३ श्लोक ५ ६०

रामायण' वाली कथा म अन्तर इतना ही है कि 'वाल्मीकि रामायण म जब कि काकवेशधारी जयन्त सीता क उरोजो के बीच म चोच मारकर भागता है[1] तब अध्यात्म रामायण म उनके पर के लाल अँगूठ म। कदाचित अध्यात्म रामायणकार की सीता के प्रति श्रद्धा भावना काक (जयन्त) द्वारा उरोजो का स्पश सहन नही कर सकती थी चरण-स्पश ही उसे सह्य था।

(१८) 'अध्यात्म रामायण' म हनुमान उस शिशपा वक्ष को छोडकर जिसक नीचे सीता बठी थी अशोक वाटिका के सारे वक्ष उखाड डालत हैं। और विभीषण क भवन को छोडकर शेष सारी लका को जला डालते हैं। राम भक्तो पर कृपा का ही यह द्योतक था।

(१९) रावण द्वारा फेंकी गयी शक्ति स जब लक्ष्मण आहत होकर मूच्छित हो जाते हैं और हनुमान को राम क्षीरसागर के तट पर स्थित द्रोणाचल म दुबारा सजीवनी महौषध लाने के लिए भेजते हैं तब गुप्तचरो स इसका पता पाकर रावण कालनेमि को उनके माग मे बाधा डालने के लिए भजता है। कालनेमि मायावी साधु बनकर हनुमान को मारने की चेष्टा करता है पूव ज म की अप्सरा धान्यमाली मकरी के रूप म हनुमान का निगलने की चेष्टा करती है पर हनुमान से वधित हो वह शापमुक्त हो जाती है। कालनेमि और धान्यमाली का यह प्रसग 'वाल्मीकि रामायण मे नही आया है।

(२०) विभीषण इन्द्रजित (मघनाद) का वध उसी व्यक्ति के हाथ होना बताता है जिसने बारह वष तक आहार और निद्रा का त्याग कर दिया हो। लक्ष्मण ही इस शत को पूण कर पात हैं क्योकि अयोध्या स आन क बाद राम की सेवा म उ होने इन दोनो वस्तुओ का त्याग कर दिया था।[2] इस प्रकार का उल्लेख 'वाल्मीकि रामायण' म नही आता।

(२१) मेघनाद वध के उपरान्त रावण को जब अपना विनाश निश्चित सा दीखने लगा, तब निराशा की स्थिति मे वह गुरु शुक्राचाय के पास गया और उसने उनसे राम पर विजय पाने का उपाय पूछा। शुक्राचाय ने उस एकान्त मे हवन करने को कहा और बताया कि हवन-अनुष्ठान क निर्विघ्न समाप्त हो जाने पर होमाग्नि स एक बहुत बडा रथ, घोडे, तरकश और बाण उत्पन्न होगे। उन्हे पाकर तुम अजय हो जाओगे।[3] रावण ने अपने महल क तहखाने म यह यज्ञ आरम्भ किया, पर विभीषण

१ वाल्मीकि रामायण सुन्दर काण्ड सग ३८ श्लोक १२ ३९
२ अध्यात्म रामायण युद्ध काण्ड सग ८ श्लोक ६४ ६६ और सर्ग ९ श्लोक १२
३ वही युद्ध काण्ड सर्ग १ श्लोक ८ ९

ने होम धूम को देखकर राम से अगदादि वानर सेनापतियो को यज्ञ भग करने के लिए भेजने को कहा। अगद आदि वानरो ने रावण के महल पर धावा बोल दिया। विभीषण की पत्नी सरमा ने सकेत से तहखाने की ओर निर्देश कर दिया। अगद ने मन्दोदरी को रावण के सम्मुख अपमानित किया। मन्दोदरी के विलाप और भर्त्सना को सुनकर रावण अनुष्ठान को अपूण छोडकर ही उठ गया।[1] 'वाल्मीकि रामायण' में यह प्रसग नही आया है।

(२२) रावण की नाभि मे अमृत कुण्ड है और जब तक वहा बाण नही मारा जाता, तब तक रावण के सिर और भुजाएँ कटने के बाद फिर फिर उग आएँगी और उसका वध नही होगा—राम को रावण का यह प्राण रहस्य विभीषण बताते हैं जिससे रावण को मारना उनके लिए सरल हो जाता है। 'वाल्मीकि रामायण मे यह प्रसग भी नही है।

(२३) रावण को रथ पर और राम को रथहीन देखकर इन्द्र का स्वग से अपने सारथि मातलि के साथ अपना रथ राम के उपयोग क लिए भेजने की घटना तो 'अध्यात्म रामायण' म भी 'वाल्मीकि रामायण के समान ही वर्णित है, परन्तु इन्द्र, यम वरुण, कुबेर, ब्रह्मा शिव आदि द्वारा सीता के सतीत्व का साक्ष्य भरने का यहाँ उल्लेख नहीं है। जब सीता अग्नि मे प्रवेश कर जाती हैं, तब ये सब देवता आविर्भूत तो होते हैं परन्तु सीता के सतीत्व के विषय मे वे कुछ नही कहते—राक्षसराज रावण के विनाश पर अपना आभार प्रकट करन के लिए ही वे मानो उपस्थित हुए हैं। अग्निदेव स्वय अपने पास धरोहर रूप मे रखी असली सीता को इन देवताओ और स्वग स आगत राजा दशरथ के सम्मुख राम को वापस कर जाते हैं। माया सीता के पति माँगने' पर शिव द्वारा उसे पाँच पतियों का वरदान देने, या राम द्वारा उसे पुष्कर मे रहकर तपस्या करने का आदेश देने आदि का यहाँ कोई उल्लेख नहीं है। अग्निदेव इस सम्बन्ध म इतना ही कहते हैं— माया सीता जिस काय के लिए रची गयी थी, उसे पूरा करके अब अदृश्य हो गयी है।'[2]

(२४) रामचन्द्र इन्द्र को अमृत वरसाकर युद्ध म मारे गये समस्त वानरो को जीवित कर देने का आदेश देते हैं। इन्द्र ऐसा ही करते हैं। सब मत वानर जी उठे पर मत राक्षस अमत स्पश होने पर भी नही जीवित हुए।[3]

---

१ अध्यात्म रामायण युद्ध काण्ड सर्ग १० श्लोक १३ १४

२ वही युद्ध काण्ड सर्ग १३ श्लोक २२

३ वही युद्ध काण्ड सग १३ श्लोक ३८ ४०

(२५) अध्यात्म रामायण' के उत्तरकाण्ड म इस प्रसग का भी उल्लेख है कि एक दिन सीता ने राम स कहा कि मेरे पास देवतागण आय थे। उन्होने मुझ से निवेदन किया है कि मैं पहले वैकुण्ठ म आ जाऊँ तो भगवान राम भी आ जाएँगे और इस प्रकार व सब सनाथ हो जाएँगे। राम न सीता को इसका उपाय यह बताया कि लोकापवाद का बहाना लेकर मैं तुम्हें त्याग दूँगा, तुम वाल्मीकि आश्रम म रहोगी। फिर तुम लोक प्रतीति क लिए शपथ करके पृथ्वी विवर म समाकर वकुण्ठ चली जाओगी।[1] राम और सीता के बीच यह योजना निश्चित हो जाती है और आगे उसी के अनुसार काय होता है। इस उदभावना स सीता परित्याग की घटना मानवीय करुणा का स्पश नही कर पाती और एक नाटक बनकर रह जाती है।

(२६) सीता के विषय म लोकापवाद की घटना रजक (धावी) से नहीं जाडी गयी है अपितु उसे सावजनिक चर्चा का विषय बताया गया है जिसकी सूचना राम के गुप्तचर उ हे देते हैं। अध्यात्म रामायण म भी 'वाल्मीकि रामायण की भाँति अश्वमध-यज्ञ के अश्व को लेकर किसी सघष का चित्रण नहीं किया गया।

(२७) वाल्मीकि सीता के सतीत्व का प्रमाण देने के लिए अपने समस्त तपस्या फल को दाँव पर लगाने की घोषणा करते हैं।[2]

उपयु क्त उदभावनाआ जिनम स कुछ तो 'अध्यात्म रामायण मे सवथा नवीन हैं और जिनका अनुकरण परवर्ती राम-कथा काव्यो मे किया गया है के अतिरिक्त शेष राम कथा 'वाल्मीकि रामायण' से मिलती जुलती है।

(च) कतिपय अ य काव्यों मे राम-कथा

कालिदासकृत रघुवश' की रचना उपयु क्त महापुराणो म से कइयो के पूव हो चुकी होगी इसलिए काल क्रम की दष्टि से कथा विकास पर विचार करन के लिए 'रघुवश' का उल्लेख इससे पहले ही होना चाहिए था। फिर भी 'वाल्मीकि रामायण' की तुलना म रघुवश' म वर्णित राम कथा की भि नताओ पर यहाँ सक्षप म विचार किया जाएगा।

(१) देवतागण ब्रह्मा को साथ लेकर नही अकेले ही विष्णु के पास रावण के अत्याचारो के सत्रास का वणन करने जाते हैं। विष्णु ने स्वय ही दशरथ क पुत्र के रूप म अवतरित होने की बात कही है क्योकि ब्रह्मा के वर के अनुसार रावण केवल देवताओ स ही अवध्य था,

---

१ अध्यात्म रामायण सग ४ श्लोक ३५ ४४

२ वही सग ४ श्लोक ३२ ३३

मनुष्यो से नहीं।

(२) 'वाल्मीकि रामायण' के सदृश 'रघुवश' मे भी अग्निदेव पायस का पात्र लेकर उपस्थित होते हैं परन्तु यहा रानियो मे खीर का बँटवारा 'पदम पुराण' के अनुसार हुआ है।

(३) राम पैदा होते ही चतुर्भुज विष्णु के रूप म कौसल्या को दशन नही देते वरन् वामनावतारी वेश म वे सब रानियो की उनकी रक्षा करते हुए स्वप्न म दिखायी देते हैं।[1]

(४) महाराज दशरथ राम लक्ष्मण को विश्वामित्र के साथ, बिना ननुनच किए प्रसन्नतापूवक भेज देते हैं।

(५) जनकपुरी का धनुष-यज्ञ देखने जाते हुए राम, तपस्वी गौतम के निजन आश्रम म शिला रूप म पडी अहल्या को अपनी चरण रज स्पश कराकर तार देते हैं।[2] 'वाल्मीकि रामायण' मे अहल्या को शिला बनने का शाप गौतम ऋषि ने नही दिया है प्रत्युत यही कहा है कि 'तू इसी स्थान पर हजारा वष तक वास करेगी और तेरा भोजन केवल पवन होगा और तू कुछ भी न खा सकेगी', (मेरे शाप से) अपनी करनी का फल भोगती हुई भस्म मे पडी रहेगी। तू इसी स्थान पर अदृश्य होकर रहेगी अर्थात तुझे कोई भी प्राणी नही देख सकेगा।'[3]

(६) रघुवश म, परशुराम जी से रामचन्द्र की भेंट, विवाहोपरान्त मिथिलापुरी से चल चुकने पर माग मे हुई है। ऐसा ही 'रामायण' म भी है। किन्तु दशरथ की मृत्यु होने पर भरत को ननिहाल से बुलाने का कारण रघुवश मे अयोध्या को अरक्षित देखकर उस पर शत्रुओ का धावा बोल देना बताया गया है।[4]

(७) जयन्तवाला प्रसग भी 'वाल्मीकि रामायण' से कुछ भिन्न रूप म दिया है। 'रामायण' मे काक का जयन्त होना नहीं लिखा है, वह साधारण काक ही है जो सीता के दोनों स्तनो के मध्य भाग मे चाच मारकर भागता है। रसिक कालिदास ने काक को इन्द्र-पुत्र जयन्त बताया है और उसका सीता के स्तनो पर चोंच मारना लिखा है।[5]

(८) रावण का साधु-वेश मे आकर सीता का हरण करना 'रघुवश' म नही लिखा है।

---

१ रघुवश कालिदास (कालिदास-ग्रथावली के अन्तगत स० २० १ विक्रम-परिषद् काशी) सग १० श्लोक ६० ६१

२ वही सग ११ श्लोक ३३ ३४

३ वाल्मीकि रामायण बाल काण्ड सग ४८ श्लोक ३० ३१

४ रघुवश सग १२ श्लोक ११ १२

५ वही सर्ग १२ श्लोक २२ २३

(९) समुद्र पर राम के क्रोध करने, समुद्र क प्रत्यक्ष होने, विश्वकर्मा-पुत्र नल द्वारा सेतु बाँधने आदि का 'रघुवश म कोई उल्लेख नही है। राम का वानरो द्वारा एक श्वेत पुल बनवाना उल्लिखित है।

(१०) रघुवश' म लक्ष्मण की छाती म मघनाद शक्ति बाण मारता है 'वाल्मीकि रामायण म रावण। रघुवश म हनुमान द्वारा द्रोणाचल को उखाड कर लाने का उल्लेख एक ही बार आया है 'रामायण में दो बार।

(११) सीता की अग्नि-परीक्षा के समय इन्द्र यम कुबेर, ब्रह्मा आदि देवता साक्ष्य देने के लिए 'रघुवश मे उपस्थित नही होते। रघुवश' मे छाया सीता का कोई उल्लेख नही है, जसा कि 'ब्रह्मववत पुराण, देवीभागवत पुराण और अध्यात्म रामायण आदि ग्रथो मे है।

रघुवश के रामोपाख्यान की अन्य बातें 'वाल्मीकि रामायण के आधार पर ही वर्णित हैं।

राम कथा विकास की दृष्टि से सस्कृत के इतने ही ग्रन्थो की चर्चा पर्याप्त है। हिन्दी मे अवधी के 'रामचरित मानस (तुलसीदास) और ब्रजभाषा की 'रामचन्द्रिका' (केशवदास) का उल्लेख भी इस दृष्टि से अपरिहाय है। रामचन्द्रिका म तो राम कथा का आधार पूणत वाल्मीकि रामायण ही है कुछ प्रसग उसम जयदव कृत प्रसन्न राघव से भी लिये गए हैं।

राम-कथा विकास की दृष्टि से 'रामचरित मानस विशेषत उल्लेखनीय है क्योंकि इस महाका य म कवि ने जहाँ वाल्मीकि रामायण को अपनी कथा का मुख्य आधार बनाया है वहा उसने अध्यात्म रामायण 'भुशुण्डि रामायण, 'हनुमन्नाटक, 'आनन्द रामायण 'पदम पुराण 'ब्रह्मववत्त पुराण तथा श्रीमदभागवतपुराण एव कई अन्य ग्रथो से वस्तु और शली के रूप मे बहुत कुछ ग्रहण किया है और इनके साथ ही कई मौलिक उदभावनाएँ भी की हैं जिनके कारण कई बातो म रामचरित मानस विविध भारतीय भाषाओ म लिखित राम कथा काव्यो की श्रेणी मे महत्त्वपूण स्थान प्राप्त कर सका है। 'वाल्मीकि रामायण की तुलना म 'रामचरित मानस म निम्नलिखित नवीनता अथवा भिन्नता पाई जाती है —

(१) 'रामचरित मानस' के बाल काण्ड म शिवचरित का जितना विस्तत वणन मिलता है उतना 'वाल्मीकि रामायण' मे नही। उसमे केवल शिव द्वारा मदन दहन का ही वत्त आया है। 'रामायण के बाल काण्ड मे रावण जन्म का उल्लेख नही है वह उत्तर काण्ड म उल्लिखित है किन्तु 'रामचरित मानस' म यह कथा बालकाण्ड म ही दी गयी है।

(२) 'रामायण' म अहल्या उद्धार और गगावतरण के प्रसग रामचरित मानस' की अपेक्षा अधिक विस्तार से वर्णित हैं। दोनो ग्रथो मे इनके आगम क्रम में भी अन्तर है। रामायण' मे गगावतरण की कथा अहल्यो

द्वार की कथा से पहले वर्णित है, 'रामचरित मानस' मे उसके बाद मे। 'रामायण' मे अहल्या के शाप-वश शिला बन जाने का उल्लेख नही है, परन्तु 'रामचरित मानस' मे है। 'रामायण' मे अहल्या को शाप मिलने की कथा विस्तार मे वर्णित है, जब कि 'रामचरित मानस' मे 'गौतम शापवश, 'उपलदेह धरि धीर'[1] की संक्षिप्ति के साथ।

(३) वाल्मीकि रामायण' मे सीता स्वयवर का उस रूप मे वणन नहीं है जिस रूप मे 'रामचरित मानस' मे। 'रामायण' मे 'धनुप-यज्ञ' के प्रसग मे धनुप को उठाने और सीता को जनक द्वारा वीयशुल्का' या 'पराक्रम शुल्का बताने का उल्लेख है। मानस' मे यह प्रसग अधिक मनोरम ढग से चित्रित है। देश देश के राजाओ के सामने शिव धनु भग कर तुलसी के परब्रह्म राम अपनी अलौकिक शक्ति का प्रभाव जमा देत हैं। जनक-फुलवारी म राम सीता के मिलन का दृश्य दिखाकर तुलसी ने दोना मे 'पूर्वानुराग की सष्टि कर दी है जो विशेष रसात्मक है। परशुराम के सीता-स्वयवर मे ही आ धमकने और राम लक्ष्मण से उनके रोषपूर्ण सवाद की योजना भी तुलसी की अपनी उदभावना है, जो रस सिद्धि की दृष्टि से अधिक उपयोगी बन गयी है। पौराणिक साहित्य मे वर्णित राम कथा मे कही लक्ष्मण परशुराम का वाग्युद्ध नही दिखाया गया है, तुलसी ने इसकी योजना करके कथा मे जान डाल दी है।

(४) 'रामचरित मानस' की मथरा की जिह्वा पर देव प्ररित सरस्वती आ बठती हैं इससे उसका आचरण कम स्वाभाविक रह जाता है परन्तु इसी लिए कम कुटिलतापूर्ण भी। तुलसी न इसमे 'अध्यात्म रामायण' का अनुकरण किया है क्योकि 'रामायण' मे सरस्वती की योजना नही है।

(५) भरत की शीलगत विशेषता की दृष्टि से 'रामचरित मानस' का चित्रकूट प्रसग जितना समृद्ध है उतना 'रामायण' का नही।

(६) 'वाल्मीकि रामायण' मे मत्यु से पूर्व दशरथ अधतापस के शाप की कथा को विस्तार से कौसल्या को सुनाते हैं किन्तु रामचरित मानस' मे केवल एक दोहे—तापस अध साप सुधि आई कौसल्यहि सब कथा सुनाई[2] मे इस अन्तकथा का उल्लेख कर दिया है।

(७) 'वाल्मीकि रामायण' मे जबकि एक काक द्वारा सीता के स्तनो के मध्य भाग मे चोच मारने का उल्लेख है तब रामचरित मानस' म काक को इन्द्रपुत्र जयन्त का रूप दे दिया गया है और सीता के चरण म उसके चोंच मारने का कथन है। किन्तु यह तुलसी की मौलिक उदभावना नही

---

१ रामचरित मानस (गो० तुलसीदास) बाल काण्ड दोहा २१०
२ वही अयोध्या काण्ड दोहा १५५

है 'अध्यात्म रामायण' तथा कई अन्य पूर्ववर्ती पुराणों मे यह प्रसंग जयन्त के साथ पहले ही सम्बद्ध कर दिया गया था।

(८) 'वाल्मीकि रामायण' मे शूर्पणखा की विरूपता का प्रतिशोध लेने के लिए उसका भाई खर पहले १४ राक्षसों को भेजता है, किन्तु राम द्वारा उन्हें मार दिए जाने पर १४ हजार राक्षसो को साथ लेकर स्वयं चढ आता है। 'रामचरित मानस' में ऐसा उल्लेख नहीं है।

(९) 'रामचरित मानस' में मारीच के कपट वेश को कोई नहीं पहचान पाता परन्तु 'रामायण' में लक्ष्मण पहचान जाते हैं। मारीच के मृग वेश धारण करने के प्रसंग का चित्रण जितने विस्तार से 'वाल्मीकि रामायण' में है उतने विस्तार से 'रामचरित मानस' मे नहीं।

(१०) 'वाल्मीकि रामायण' में छाया सीता का कोई उल्लेख नहीं है किन्तु 'रामचरित मानस' मे असली सीता के अग्नि प्रवेश की चर्चा है—

सुनहु प्रिया व्रत रुचिर सुसीला। मैं कछु करबि ललित नर लीला॥
तुम्ह पावक महुँ करहु निवासा। जौ लगि करौं निसाचर नासा॥
जबहिं राम सब कहा बखानी। प्रभु पद धरि हियँ अनल समानी॥
निज प्रतिबिंब राखि तहँ सीता। तसइ सील रूप सुबिनीता॥
लछिमनहूँ यह मरमु न जाना। जो कछु चरित रचा भगवाना॥"[1]

इस प्रसंग की योजना के लिए तुलसीदास 'ब्रह्मवैवर्त्त पुराण' 'देवी भागवत' और 'अध्यात्म रामायण' आदि के ऋणी हैं।

(११) 'वाल्मीकि रामायण' मे लंका मे सीता के निवास स्थान को ढूढने के लिए हनुमान को काफी खाक छाननी पड़ती है तब स्वयं उन्हें अशोक वाटिका के एक महल में उनके दर्शन होते हैं किन्तु 'रामचरित मानस' मे हनुमान की यह परेशानी विभीषण ने मिटा दी है। हरिभक्त विभीषण ने हनुमान को सीता का पता बता दिया है।

(१२) 'वाल्मीकि रामायण' में हनुमान राम की मुद्रिका को स्वयं सीता के हाथ पर राम की सहिदानी के रूप में रखते हैं, परन्तु 'रामचरित मानस' मे वे वृक्ष पर से मुद्रिका को टपका देते हैं। ऐसा ही केशवदास ने 'रामचन्द्रिका' में लिखा है।

(१३) 'रामायण' मे रावण विभीषण का पद प्रहार करके नहीं निकालता केवल उनके प्रति कटु वचन ही कहता है परन्तु 'रामचरित मानस' में रावण द्वारा विभीषण के लतियाए जाने का उल्लेख है।

(१४) अंगद के राम दूतत्व प्रसंग के चित्रण मे भी दोनों महाकाव्यों मे भिन्नता है। 'वाल्मीकि रामायण' में अंगद रावण के मध्य अधिक वार्तालाप नहीं

---

[1] 'रामचरित मानस' अरण्य काण्ड छंद २४ चौ १ ३

दिखाया गया है। 'रामचरित मानस' मे रावण सभा म अगद के पाँव रोपने का जो उल्लेख है, उसका इस रूप मे चित्रण तो किसी पौराणिक साहित्य मे नहीं मिलता। 'वाल्मीकि रामायण' तथा अन्य ग्रन्थो म भी यही मिलता है कि रावण के राक्षस जब अगद को पकडने लगते हैं, तब वे उन्हे झिटककर रावण के सौध शिखर पर जा चढते हैं। उनके चढ़ने की धमक से उसका एक अश टूटकर गिर जाता है।

(१५) 'रामचरित मानस म कुम्भकर्ण का वध राम करत हैं, 'रामायण' मे यह काय लक्ष्मण के हाथो कराया गया है।

(१६) 'रामायण' म मेघनाद माया रचित सीता के दो टूक हनुमान के सामने ही करता है जिसका समाचार पाकर राम दु खी होत हैं और विभीषण उन्हें सान्त्वना देता है। किन्तु रामचरित मानस' मे इस घटना का कोई उल्लेख नही।

(१७) 'रामायण के उत्तर काण्ड मे जहाँ शम्बुक वध, रावण चरित, हनुमान की जन्म-कथा, सीता परित्याग, लव कुश चरित एव शत्रुघ्न द्वारा लवणासुर वध की कथाएँ दी हैं, वहा 'रामचरित मानस के उत्तरकाण्ड म राम भरत के पुनर्मिलन राम के राज्याभिषेक तथा उनके प्रति की गयी स्तुतियो का वणन है। उपाख्यान के रूप म केवल भुशुण्डि का आत्मचरित वर्णित है। राम के महाप्रयाण की घटना के वणन म भी दोनो काव्यो म अन्तर मिलता है। 'रामायण म तो राम भरत शत्रुघ्न तथा अन्य नगरवासियो के साथ सरयू नदी म प्रविष्ट होकर वैकुण्ठ मे चले जाते हैं, किन्तु रामचरित मानस' म वे हनुमान और भरत के साथ एक दिन एकान्त अमराई मे जा लेटते हैं और वहीं नारदजी अपनी वीणा बजाते आ जात हैं। सब राम की कुल कीर्ति का गान करन लगत हैं। राम के अन्तर्धान होने या उनके महाप्रयाण का कोई स्पष्ट उल्लख रामचरित मानस' मे नहीं है।

(१८) रामायण' और रामचरित मानस' की राम कथा के विविध प्रसगा की योजना तथा वणन शली म जो अन्तर हो गया है उसका मुख्य कारण है राम के प्रति दोनो कवियो का भिन्न दृष्टिकोण। जहाँ रामायण मे राम कवि के समसामयिक एक महापुरुष हैं वहाँ रामचरित मानस' मे वे कवि की दृष्टि म नर लीला के लिए अवतरित साक्षात् परब्रह्म।

(३६) विष्णु का मत्स्यावतार—शखासुर को लीलना और वेदो का उद्धार करना

मत्स्यावतार म विष्णु द्वारा शखासुर-वध करने का आख्यान सवप्रथम 'पदम

पुराण"[1] म ही मिलता है। उसके अध्याय ९० ९१ मे आगत आख्यान इस प्रकार है—प्राचीन काल मे शख नामक एक असुर था जो सागर का पुत्र था। उसमे त्रिलोकी का मथन करने का पराक्रम था। उसने इन्द्रादि देवताओ को जीतकर स्वग पर अधिकार कर लिया। बेचारे देवता उसके डर के मारे सुवणगिरि (सुमेरु) की तीस गुफाओ मे जा छिपे। उनम रहते हुए उन पर उसका कोई वश नही चल रहा था। उसने विचार किया कि देवतागण वेद-मत्रो के बल से शक्ति प्राप्त करते हैं इसलिए क्या न वेदो को ही मैं चुरा लू। ऐसा विचार कर वह सत्यलोक मे गया, जहाँ विष्णु को उसने निद्रामग्न पाया। वहाँ से वेदो को चुराकर वह सागर म जा छिपा। वदो का अपहरण हो जाने स देवता दुबल पडन लग। ब्रह्मा को आग करके व विष्णु के पास गये, उनसे सारा दुखडा रोया। विष्णु ने कहा कि मैं अभी समुद्र मे जाता हूँ और वहाँ से वेदो का उद्धार करके लौटूगा। उ हाने देवताओ को भी अपने साथ चलने को कहा।

विष्णु ने एक शफरी (छोटी मछली) का रूप बनाया। मछली कश्यप मुनि की अजलि म गिर पडी। ऋषि ने दयाकर उसे अपने कमण्डलु म डाल लिया। मत्स्य बढने लगा। जब वह कमण्डलु म न समा सका तो ऋषि ने उसे कुए म डाल दिया। उसमे भी न समा सकने पर उसे पोखर म डाला और अतत समुद्र मे। इस प्रकार बढते हुए विष्णु न एक विशालकाय मत्स्य का रूप धारण कर लिया और शखासुर को मार डाला तथा फिर वदो को हाथ मे लेकर वे बदरी वन चले आये।

'पदम पुराण' उत्तर खड के अध्याय २३० मे मत्स्यावतारी विष्णु की क्रमश देह वृद्धि का उल्लेख नहा है और न दवताओ के सुवणगिरि का गुफाओ मे छिप जाने का। कथा का रूप सक्षेप म यह है—दिति के गभ से उत्पन्न कई दत्या—शम्बूक हयग्रीव, हिरण्याक्ष, हिरण्यकश्यपु मय आदि म एक मकर नामक महापराक्रमी दत्य भी था। वह ब्रह्मलोक मे गया और वहाँ ब्रह्मा को मोहाविष्ट करके वेदो को लेकर चम्पत हुआ और समुद्र म जा घुसा। वेदो का अपहरण हो जाने स ससार धम शून्य हो गया धमसाकय फलने लगा अध्ययन अध्यापन वषटकार तथा वर्णाश्रम धम सबका लोप हो गया। दु खित होकर सब देवता ब्रह्मा जी को आगे कर क्षीर सागर म शेष शय्या पर सोये हुए विष्णु भगवान के पास पहुचे। उनकी स्तुति की गयी। विष्णु भगवान जागे। देवताओ न दु ख निवेदन किया और वेदो के अपहरण हो जाने की बात सुनायी। विष्णु ने देवताओ को निश्चिन्त करके वापस कर दिया और स्वय मत्स्य रूप धारण कर महासागर म प्रविष्ट हो गय। वहा पर वेद अपहर्त्ता दत्य एक भयकर घडियाल (मकर) रूप मे स्थित था। उसको मत्स्य भगवान न अपने थूथन से मार डाला और सागोपाग सब वेदो को लाकर ब्रह्मा को सौंप दिया। अपहरण काल म उस दत्य ने वदो मे बहुत सो अ य अन्य बातो का मिश्रण कर दिया था उनकी छँटाई या सशोधन विष्णु भगवान न व्यास

१ पदम पुराण उत्तर खण्ड अ ९ ९१ और २३०

के रूप में किया।[1]

'श्रीमद्भागवत पुराण'[2] में यह कथा दो रूपों में आयी है। एक रूप में तो मत्स्यावतार का सम्बन्ध वेदों के उद्धार से जोड़ा गया है और दूसरे रूप में महाप्रलय के समय सत्यव्रत नामक राजा को तथा बीज रूप में सृष्टि को बचाने से। प्रथम रूप में भगवान विष्णु के मत्स्यावतार का प्रयोजन यह बताया गया है कि पिछले कल्प के अंत में ब्रह्मा सो गये। इससे ब्राह्म नामक नैमित्तिक प्रलय हुआ। भूलोक और सारे लोक समुद्र में डूब गये। प्रलय-काल में ब्रह्मा को नींद आ जाने से वेद उनके मुख से निकल पड़े। ब्रह्मा के पास रहनेवाले हयग्रीव नामक दानव ने उन्हें चुरा लिया और समुद्र में जा घुसा। हयग्रीव को मारने के लिए विष्णु ने मत्स्यावतार लिया।[3] अन्यत्र 'भागवत पुराण' में ही यह उल्लेख है कि विष्णु ने हयग्रीव अवतार लेकर मधु कैटभ नामक असुरों का संहार करके उन लोगों द्वारा चुराये वेदों का उद्धार किया।[4]

मत्स्यावतार के दूसरे प्रयोजन का वर्णन इस प्रकार है—एक बार सत्यव्रत नामक राजर्षि कृतमाला नदी में तर्पण कर रहा था। उसकी अंजलि में एक मछली आ गयी। सत्यव्रत ने मछली को जल में गिरा दिया। मछली ने उनसे उस जल में से अपने को निकाल लेने का अनुरोध किया और कहा कि मैं तुम्हारा कुछ प्रिय करूंगी। राजा ने उसे अपने पात्र में रखा किन्तु वह मछली शीघ्र ही बड़ी हो गयी और उस पात्र में न समा सकी। तब राजा ने उसे मटके में डाला, किन्तु उसका तो उसमें भी समाना कठिन हो गया। तब राजा ने उसे एक सरोवर में डाल दिया। शीघ्र ही मछली इतनी बड़ी हो गयी कि सरोवर भी उसके लिए छोटा पड़ने लगा। तब राजा ने उसे समुद्र में डलवा दिया। उसने समुद्र में जाते जाते राजा सत्यव्रत को बताया कि आज के सातवें दिन प्रलय होगा। मेरी प्रेरणा से तुम्हारे पास एक नौका आएगी। उसमें समस्त प्राणियों के सूक्ष्म शरीर लेकर तुम सप्तर्षियों के साथ चढ़ जाना सब प्रकार के धान्य के बीज भी रख लेना, मैं उस नाव को खींचकर ले चलूंगा। प्रलय काल[5] में राजा सत्यव्रत और बीज रूप सृष्टि को बचाने वाला वह मत्स्य भगवान विष्णु का ही अवतार था।

'श्रीमद्भागवत' में एक अन्य स्थल पर भी भगवान के अवतारों के वर्णन प्रसंग में कहा है कि प्रलय के समय विष्णु ने मत्स्यावतार लेकर भावी मनु सत्यव्रत पृथ्वी, औषधियों तथा धान्यादि की रक्षा की।[6]

---

१ पद्म पुराण उत्तर खण्ड २३०।१३ ३२
२, भागवत पुराण ८।२४
३ वही ८।२४।६
४ वही ११।४।१७
५ इस प्रसंग का सर्वप्रथम वर्णन शतपथ ब्राह्मण के प्रथम काण्ड के आठवें अध्याय में मिलता है।
६ भागवत पुराण ११।४ १८

(३७) विष्णु के वामनावतार की कथा

वैदिक साहित्य में वामनावतार की कथा संक्षिप्त रूप में मिलती है। ऋग्वेद में वामन के तीन डगों में तीनों लोकों को नापने का उल्लेख हुआ है।[1] यास्क मुनि ने 'निरुक्त'[2] में माना है कि वामन विष्णु ने अपने तीन पग पृथ्वी, अन्तरिक्ष और आकाश में रखे। ऋग्वेद में वामन को इन्द्र का अनुज कहा गया है।[3] वामन ने किस प्रकार देवताओं को युक्तिपूर्वक त्रिलोक का स्वामी बनाया इसका उल्लेख 'शतपथ ब्राह्मण'[4] में हुआ है। इसमें कहा है कि देवासुर-संग्राम में देवों की पराजय हो जाने के अनन्तर असुरों ने पृथ्वी का आपस में बँटवारा करना चाहा। जब देवताओं ने इस बँटवारे में अपने को भी भागीदार बनाना चाहा तब असुरों ने वामन विष्णु के शरीर जितनी भूमि देना स्वीकार किया। जब भूमि को नापने का अवसर उपस्थित हुआ तब वामन ने विराट् रूप धारण कर लिया और तीनों लोकों को नाप लिया। वैदिक साहित्य में अन्य अनेक स्थानों पर वामन और बलि का प्रसंग वर्णित है।

बलि विरोचन के पुत्र तथा प्रह्लाद के पौत्र थे।[5] बलि वामन की कथा विस्तृत रूप में सर्वप्रथम 'वाल्मीकि रामायण'[6] में प्राप्त होती है। इस कथा को विश्वामित्र ने राम-लक्ष्मण को सुनाया है। विश्वामित्र कहते हैं कि जिस आश्रम में मैं रहता हूँ उसमें रहकर पहले भगवान विष्णु ने सैकड़ों युगों तक तपस्या की थी इसलिए वह सिद्धाश्रम कहलाता है। उस युग की एक कथा विश्वामित्र ने इस प्रकार सुनायी—विरोचन के पुत्र राजा बलि ने उन दिनों इन्द्र और मरुद्गण सहित समस्त देवगणों को जीतकर और तीनों लोकों पर अपना राज्य स्थापित कर एक यज्ञ आरम्भ किया। देश देश के आये हुए याचक यज्ञ दीक्षित बलि से जो कुछ माँगते वह उन्हें देता था। अग्निदेव को आगे कर सब देवता इस आश्रम में विष्णु के पास आये और बोले कि बलि की यज्ञ समाप्ति के पूर्व आप हमारे लिए जो कर सकते हैं करें। आप वामनावतार धारण कर हमारी सहायता कीजिए।[7] इसी बीच महर्षि कश्यप अपनी पत्नी अदिति सहित सैकड़ों वर्षों की अपनी तपस्या समाप्त कर वहाँ आये और उन्होंने विष्णु से कहा कि आप

---

१ ऋग्वेद १।२२।१७ २१ १।१५४।१ ४ ३।५४।१४ ८।१२।२७ ८।२९।७

२ निरुक्त १।२।१९

३ ऋग्वेद ८।१२।२७

४ शतपथ ब्राह्मण १।२।२।१ ५

५ महाभारत आदि पर्व ६५, सभा पर्व ६, शान्ति पर्व २२५, अनुशासन पर्व ९८, श्रीमद्भागवत पुराण ६।१८ तथा ८।१३, वामन पुराण २३

६ वाल्मीकि रामायण बालकाण्ड २९।३ २१

७ वही बाल २९।८

८ वही बाल २९।६ और ९

अदिति के पुत्र रूप म जन्म लें और इन्द्र के छोटे भाई बनकर शोकार्त्त देवताओ की सहायता करें। यह सुनकर भगवान विष्णु अदिति के गर्भ से वामनावतार धारण कर राजा बलि के पास गये और उन्होंने उससे तीन पग भूमि की याचना की। तीन पग भूमि पाकर सब लोगों के हितार्थ उन्होने तीन पगो मे तीनो लोक नाप डाले। फिर, इन्द्र को त्रैलोक्य का राज्य दे उन्होंने बलि को अपने बल प्रभाव से बाँध लिया (और पाताल को भेजा) इस प्रकार पुन तीनो लोक इन्द्र के अधीन हो गये।[२]

'महाभारत' म यह कथा आदि पर्व,[३] वन पर्व,[४] सभा पर्व[५] और शान्ति पर्व[६] में आयी है। 'आदि पर्व' म केवल इतना ही पता ही चलता है कि इन्द्र और विष्णु के मध्य पृथ्वी पर अवतार ग्रहण करने के सम्बन्ध मे कुछ बात हुई। बलि विरोचन का पुत्र था, यह भी यहाँ उल्लिखित है। वन पर्व' म उल्लेख आया है कि नृसिंहावतार में हिरण्यकश्यपु का वध करके विष्णु ने एक हजार वर्ष तक अदिति के गर्भ में रहने के बाद वामनरूप में अवतार लिया। ब्राह्मण-वेश में भगवान वामन दानवराज बलि की यज्ञशाला के समीप गये। बृहस्पति की सहायता से उनका बलि के यज्ञ मण्डप में प्रवेश हुआ। बलि वामन को देख प्रसन्न हुआ और बोला कि आपकी क्या सेवा करूँ? वामन ने तीन पग पृथ्वी माँगी। बलि ने दे दी। भूमि को नापते समय वामन का अद्भुत रूप प्रकट हुआ। उन्होंने तीन पगो द्वारा सारी वसुधा को नाप लिया और उसे इन्द्र को सौंप दिया। सभापर्व में वामनावतार वर्णन के प्रसंग में बताया गया है कि त्रेता युग में बलि ने इन्द्र का राज्य छीन लिया। इन्द्र पहले ब्रह्मा की शरण गये फिर उन्हें लेकर विष्णु के पास। विष्णु ने अदिति के गर्भ से वामन रूप में जन्म लिया। ब्रह्मचारी वेश मे बालक वामन अकेले ही बलि के यज्ञ मण्डप में गये। तीन पग भूमि माँगी, फिर विराट रूप धारण कर एक पग में पृथ्वी दूसरे में आकाश और तीसरे में स्वर्ग को नाप लिया। स्वर्ग को नापते समय उनका पैर ब्रह्माण्ड के कपाल से जा लगा। उसके आघात से ब्रह्माण्ड के कपाल म छिद्र हो गया जिससे एक स्रोतस्विनी प्रकट हुई जो नीचे उतरकर समुद्र में जा मिली। यही गंगा है। विष्णु ने असुरो की सम्पदा छीनकर शम्बर नमुचि, प्रह्लाद आदि को पाताल भेज दिया। अभिमानी बलि को यज्ञ मण्डप में ही बाँध लिया, फिर पाताल भेज दिया। इन्द्र को त्रिलोकी का राज्य दे दिया। शान्ति पर्व से इतना ही पता चलता है कि देवासुर संग्राम समाप्त होने के बाद विष्णु ने वामनावतार धारण किया और अपने परो से तीनो लोको को नाप लिया तथा इन्द्र देवताओ के राजा हो गये।

---

१ वाल्मीकि रामायण बाल० २६।१ १६

२ वही बाल० २६।२ ।२१

३ महाभारत आदि० ६५।१ और २०

४ वही वन पर्व २७२।६२-७

५ वही सभा पर्व ३८।२६ के बाद दाक्षिणात्य पाठ पृष्ठ ७८६ ६१

६ वही शान्ति पर्व २२७ ७-८

'हरिवश पुराण' के भविष्य पर्व[1] मे यहकथा विस्तार से कही गयी है। ३१ वें अध्याय की कथा मे सिवाय इसके कोई विशेष बात नही कि महान ऐश्वयशाली और दानी बलि का वह राजसूय यज्ञ जिसमे याचक रूप से उपस्थित होकर वामनावतारी विष्णु ने तीन पग पृथ्वी का दान माँगा था, गगा यमुना के मध्यवर्ती प्रयाग में हुआ था और उस यज्ञ मे बलि के मुख्य होता दत्य-गुरु शुक्राचाय थे। वामन द्वारा अपने राज्य का अपहरण हो जाने के बाद बलि अपनी सेना अस्त्र शस्त्र आदि लेकर पाताल गुहा ('पातालविवर') में चले गये।[2] इसके बाद भी इतनी कथा और मिलती है कि इन्द्र तथा विष्णु के साथ दत्यगण पुन पाताल से शीघ्र ही उठे। देवताओ ने प्रसन्नतापूवक बलि को त्रिलोकेश्वर के पद पर अभिषिक्त किया। बलि ने देवताओ को पितृ-पद पर प्रतिष्ठित करके उन्हें स्वधामय अमृत से तृप्त किया। ब्रह्माजी ने वह अक्षय एव अधिकारी अमृत इन्द्र को दिया। बलि के उस कम से देवेन्द्र सुरक्षित हो गये।[3] ४८ वें अध्याय की कथा म बलि को सत्यवादी जितेन्द्रिय तत्त्वदर्शी शक्तिशाली और दत्येन्द्र विशषणा से विभूषित किया है।[4] ब्रह्माजी ने भी बलि का हिरण्यकश्यपु के राज्य पर अभिषेक किया था।[5] दानवा ने बलि को ही इन्द्र बना दिया।[6] दानवो के कहने पर बलि ने दत्यो से त्रलोक्य का राज्य छीन लिया जो बाद मे वामन विष्णु ने युक्तिपूवक देवो को दिलाया।

भविष्य पव के ६७वें से ७२वें अध्याय तक जो कथा दी गयी है उसम विशेष बातें ये हैं—देवतागण बलि स सत्रस्त होकर ब्रह्मा के पास गये। ब्रह्मा ने सुझाया कि वे सब कश्यप अदिति सहित क्षीरसागर के तटवर्ती 'अमृत नामक स्थान पर एक सहस्र वष तक विष्णु की आराधना करें।[7] विष्णु के प्रकट होने पर कश्यप अदिति उनसे अपने पुत्र रूप म अवतरित होने का वर माँगें और इन्द्र उनसे अपना छोटा भाई बन जाने का।[8] ऐसा ही किया गया। कश्यप अदिति तथा देवताओ को विष्णु द्वारा ये वर प्राप्त हुए।[9] अदिति ने वामन (विष्णु) को गभ म एक सहस्र वष तक धारण किय रखा। बालक वामन स्वय ही बलि के यज्ञमण्डप म पहुँच गये, बहस्पति की सहायता से नहीं। वामन ने अपने गुरु के लिए अग्निशाला बनवाने के निमित्त तीन पग भूमि बलि से मांगी।[1] शुक्राचाय ने बलि को चेताया कि ये विष्णु हैं ये तुम्हें ठग लेंगे, इनके चक्कर मे मत आओ।[1] बलि जब सोने की झारी लेकर याचित भूमि का सकल्प करने चले, तब शुक्रा

१ हरिवश पुराण भविष्य पव अ० ३१ ४८, ६७ ७२
२ वही भविष्य पव अ ३१।३ १४
३ वही भविष्य पव ३१।१५ १६
४ वही भविष्य ४८।१८ २०
५ वही भविष्य० ४८।२१
६ वही भविष्य० ४८ । २४
७ वही भविष्य ६७।१
८ वही भविष्य० ६७।११ १८
९ वही भविष्य० ६६।६
१ वही भविष्य० ७१।१ ११

चाय ने बलि को पुन रोका, किन्तु जब साक्षात् विष्णु दान ग्रहण करने के निमित्त उप स्थित हुए हो तब बलि उनकी वजना पर ध्यान कैसे देते ? प्रह्लाद ने भी बलि को रोका था। महादानी बलि ने याचक को बिना दिये लौटाने मे पाप बताया। हाथ मे सकल्प का जल लेते ही विष्णु विराट बन गये। दत्यगण विष्णु को मारने दौडे, पर बलि ने उन्हे रोक दिया। वामन ने बलि को वर रूप मे देवनाओ से अभय और सुतल नामक पाताल म दत्यो सहित निवास प्रदान किया। उन्हाने बलि को इन्द्र से द्रोह न करने का परामश भी दिया। विष्णु ने बलि से प्राप्त त्रलोक्य के राज्य का विभाजन इस प्रकार किया—इन्द्र को ऐन्द्री या पूव दिशा का तथा सोम को ऊपर की दिशा का राज्य मिला।[1] बलि को नागपाश मे बाधकर विष्णु स्वगलोक चले गय।[2] नारद के परामश पर पातालवासी, नागपाश से बद्ध बलि ने विष्णु की आराधना की। विष्णु ने प्रसन्न होकर गरुड का भजा। गरुड को देखत ही डरकर नाग बलि को मुक्त कर भोगवतीपुरी (नागलोक) में चले गये।[3] गरुड ने विष्णु द्वारा बलि के लिए बाधी हुई मर्यादा का स्मरण उस कराया। मयादा यह थी—सुतल लोक से दो कोस भी बाहर जान पर तुम्हारे सिर के सकडों टुकडे हो जाएँग।[4]

'ब्रह्म पुराण'[5] मे देवतागण राजा बलि के ऐश्वय को सहन न कर पाने के कारण विष्णु के पास जाते हैं। अदिति के गभ से वामन की उत्पत्ति बलि के यज्ञ मे जाकर शुक्राचाय स इनका सवाद आदि 'हरिवश' के अनुसार ही वर्णित हैं। विष्णु ने बलि को वरदान स्वरूप रसातल का अधिपति बनाया और भावी इन्द्र का पद दिया।

'पद्म पुराण' के उत्तर खण्ड'[6] स्वग खण्ड[7] तथा सष्टि खण्ड[8] मे यह कथा कुछ अधिक विस्तार से आयी है। उत्तर खण्ड की कथा का क्रम 'पद्म पुराण' एव 'हरिवश पुराण' के अनुसार ही है। स्वग खण्ड के अध्याय १ और २ मे वामनावतार की कथा आयी है, पर तु दोनो म अन्तर यह है कि अध्याय २ म वामनावतार का ववस्वत मन्वन्तर म होना बताया गया है और वामन बलि स पथ्वी का दान ग्रहण करते हैं जब कि अध्याय २ म वामनावतार स्वारोचिष मन्वन्तर मे हुआ है और वहाँ वामन वाष्कलि स त्रिविक्रम के रूप में तीन पग भूमि का दान लेते हैं। पहले वाष्कलि वाली घटना घटी बाद म बलि वाली। इस प्रकार यहा दो बार वामनावतार हाना बताया गया है।

---

१ ब्रह्म भविष्य० ७२।५३ ५६ १/२
२ वही भविष्य ७२।५६
३ वही भविष्य ७२।६०
४ वही भविष्य ७२।६३
५ ब्रह्मपुराण अ० ७३
६ पद्मपुराण उत्तर खण्ड अ० २६६ २६७
७ वही स्वग खण्ड अ० १ २
८ वही सष्टि खण्ड अ ३०

द्वितीय अध्याय वाली कथा मे वामन बलि के पास अकेले ही दान माँगने गये हैं किन्तु अध्याय १ की कथा म वामन इन्द्र के साथ वाष्कलि के पास जाते हैं और इन्द्र वाष्कलि से यह कहते हैं कि तुमने हमारा सारा राज्य हमसे छीन लिया अब हम इस याचक ब्राह्मण को, जो हमसे अग्नि के रक्षार्थ कुटिया बनाने के लिए तीन पग भूमि मागता है, दान कहाँ से दें ? वाष्कलि ने इन्द्र का आदर सत्कार किया और बटुक वेशधारी वामन को तीन पग पृथ्वी का सकल्प कर दिया। उशना (शुक्राचार्य) ने यहाँ भी उन्हें रोका है। प्रथम अध्याय की कथा की अन्य विशेषताएँ ये हैं —(१) इन्द्र ने वाष्कलि स याचना करते समय यह स्पष्ट कर दिया है कि मैं अपने लिए नही याचना कर रहा हूँ। (२) वामन ने प्रथम चरण म सूर्य्य सहित नीचे का सब ससार नाप लिया। उनका दूसरा चरण ध्रुवलोक स जा लगा और तीसरे चरण से उन्होंने ब्रह्माण्ड को ठोकर मारी किन्तु तीसरे चरण के लिए स्थान नहीं बच रहा। वामन ने वाष्कलि से कहा कि अब हम तीसरा चरण कहा रखें ? बाष्कलि असमर्थ होकर सिर झुकाये खडा रहा। तब वामन ने प्रसन्न होकर उससे वर माँगने को कहा। वाष्कलि न विष्णु की भक्ति उनके हाथ स मरण और मरने पर विष्णु के श्वेतद्वीप मे जाने की इच्छा प्रकट की। विष्णु ने य वर दे दिये और कहा कि जब मैं वाराह रूप धारण कर पृथ्वी का उद्धार करने पाताल जाऊँगा तब तुम यदि मेरी चपेट म आ गये तो मैं तुम्हें मार डालूगा। वामन ने तीनो लोकों को अपने पैरा से नापकर उन्हें इन्द्र को दे दिया और वाष्कलि को पाताल भेज दिया। (३) इस कथा के साथ ही गगा की उत्पत्ति की कथा भी जुडी हुई मिलती है। विष्णु का तीसरा चरण जब ब्रह्माण्ड की ओर बढा तब उनके अँगूठे की ठोकर स उसका एक खण्ड अलग हो गया और वहा से जल की धारा निकली जो ब्रह्मलोक, ध्रुवलोक सूर्यलोक आदि को डुबोती हुई नीचे को यज्ञपर्वत पर पहुँची। वह धारा फिर विष्णु के पग म समा गयी। वही विष्णुपदी गगा हुई।

'पदम पुराण' के सृष्टि खण्ड के अध्याय ३० म भी यही कथा मिलती है।

'विष्णु पुराण'[1] म इस सूचना के अतिरिक्त कि बलि विरोचन का पुत्र और प्रह्लाद का पौत्र था उसके सम्बन्ध म और कोई सूचना नही मिलती।

'श्रीमदभागवत पुराण'[2] म यह कथा कुछ विस्तार से वर्णित है। इन्द्र से पराजित होकर बलि का शुक्राचार्य के होतृत्व म विश्वजित यज्ञ कराना और अग्नि से दिव्य रथ तथा अस्त्रादि प्राप्तकर त्रिलोक विजय करना एव अदिति के गर्भ स वामन का पुत्र रूप मे उत्पन्न होना आदि घटनाएं यहाँ महाभारत के शान्तिपर्व और 'रामायण' म मिलती जुलती हैं। शुक्राचार्य यहा भी बलि को दान करने से मना करते है और न मानने पर उसे श्रीभ्रष्ट होने का शाप देते हैं। वामन बलि को नागपाश मे बाँधने लगे तब दैत्य उन्हें मारने दौडे। पर बलि ने उन्हें हरिवश पुराण की कथा के अनुसार ही

---

१ विष्णु पुराण १।२१।१

२ भागवत पुराण स्कन्ध ८ अ १५ २३

रोक लिया। प्रह्लाद और ब्रह्मा की प्रार्थना पर यहाँ विष्णु ने बलि को नागपाश से मुक्त किया है तथा उसे सुतल लोक में भेज दिया है। शेष कथा 'वाल्मीकि रामायण' के समान है।

'बृहन्नारदीय पुराण'[1] में बलि के द्वारा देवताओं की पराजय देव माता अदिति का विष्णु को पुत्र रूप में प्राप्त करने के लिए तप और विष्णु का इसके लिए सहमत होना आदि घटनाएँ तो हैं ही अन्य घटनाएँ भी वाल्मीकि रामायण के समान हैं। किन्तु कुछ कथांश 'पद्म पुराण' के सृष्टि खण्ड अ० २५ और तृतीय स्वर्ग खण्ड अ० १ के समान है। यहाँ भी वामन के अंगुष्ठाग्र भाग से ब्रह्माण्ड के टूटने और उससे गंगा के निकलने की कथा का संकेत है। यद्यपि नारद उपपुराण' बहुत बाद की रचना है तो भी उसमें एक रोचक तत्त्व इस कथा में जोड़ दिया गया है। जब शुक्राचार्य के बार-बार मना करने पर भी बलि दान का संकल्प करने से विरत न हुए तब अपने शिष्य को भावी सर्वनाश से बचाने के लिए शुक्राचार्य सोने की झारी (जलपात्र) की टोंटी में जा अड़े जिससे संकल्प के लिए जल बाहर ही न आ सके। इस पर वामन के कहने पर बलि ने एक डाभ (कुश) से झारी की टोंटी को साफ किया। टोंटी का छिद्र तो खुल गया, पर बेचारे शुक्राचार्य की एक आँख फूट गयी। तब से वह एकाक्ष ही रह गए। उसमें की शेष कथा रामायण के समान है।

अग्नि पुराण[2] में यह कथा संक्षेप में आयी है और ब्रह्मपुराण' में आयी कथा के समान है।

'स्कन्द पुराण' में यह कथा कई स्थानों[3] पर वर्णित है। अवन्ती खण्ड तथा प्रभास खण्ड के गिरनारक्षेत्र माहात्म्य अध्याय की कथा और ब्रह्म पुराण में आगत कथा में पूर्ण समानता है। प्रभास खण्ड के द्वारका क्षेत्र माहात्म्य में आगत कथा बहुत संक्षिप्त है। विष्णु का पाताल में बलि का द्वारपालत्व करने की घटना के अलावा शेष घटनाएँ ब्रह्म पुराण के सदृश हैं। माहेश्वर खण्ड की कथा में कुछ नयी बातें हैं, जैसे देवताओं द्वारा पराजित होकर बलि द्वारा शुक्राचार्य के परामर्श पर विश्वजित यज्ञ करना अग्नि से दिव्य रथ तथा आयुध प्राप्त करना और उस रथ पर सवार होकर दिव्यास्त्रों की सहायता से देवताओं को जीतना, अदिति की तपस्या, वामन का उसका पुत्र होना स्वीकार करना आदि इसमें वर्णित घटनाएँ तो श्रीमद्भागवत और अन्य पुराणों में भी आ चुकी हैं किन्तु बलि के पूर्व जन्म से सम्बन्धित वृत्तान्त तो बिल्कुल अनूठा है। इसमें बताया गया है कि बलि पूर्व जन्म में पापी जुआरी तथा वेश्यागामी था। एक

---

१ बृहन्नारदीय पुराण अ० १०

२ अग्नि पुराण अ० ४

३ स्कन्द पुराण अवन्ती खण्ड अवन्ती क्षेत्र माहात्म्य अ० ६३ ७४ प्रभास खण्ड गिरनार क्षेत्र माहात्म्य अ० १७-१९ प्रभास खण्ड द्वारका क्षेत्र माहात्म्य अ० १८ माहेश्वर खण्ड (केदार खण्ड) अ० १७ १९

दिन वह अपनी प्रिया वेश्या के पास पुष्पहार आदि लेकर जा रहा था कि उसे ठोकर *लग गयी। गिरते ही उसे सुबुद्धि आ गयी और उसने वे हार आदि शिव की मूर्त्ति पर* चढ़ा दिए। इससे प्रसन्न होकर यमराज ने उसे तीन घडी तक के लिए स्वर्ग का राज्याधिकार दे दिया। बलि ने उस अल्पावधि मे इन्द्र के उच्चैःश्रवा अश्व ऐरावत गजराज तथा अप्सराओ आदि को ऋषियो को दान कर दिया। इस दान के प्रभाव से बलि को स्वर्ग का राजा बना दिया गया। बलि ने अपने सभी दैत्यो को भी स्वर्ग मे लाने का विचार किया किन्तु शुक्राचार्य ने बताया कि स्थायी रूप से स्वर्ग मे रहने के लिए सौ अश्वमेध यज्ञ करने पडते हैं। बलि ने ९९ अश्वमेध यज्ञ तो कर लिए, १००वाँ यज्ञ करने ही जा रहा था कि विष्णु भगवान वामन रूप मे आ पहुचे। शुक्राचार्य ने वामन के छल से बलि को सावधान किया पर बलि न माना। उसने सकल्प कर ही दिया। वामन ने विराट् रूप धारण कर अपने दो डगो मे तो सारा ब्रह्माण्ड नाप लिया। अपने तीसरे चरण को उन्होंने जसे ही सत्यलोक तक पहुचाया, ब्रह्मा ने उनका चरण धोया और चरणोदक अपने कमण्डलु मे भर लिया। वही सुरसरिता (गगा) हुई। जब वामन के तृतीय चरण के लिए कोई स्थान शेष न रहा तब बलि की पत्नी ने उस चरण को अपने पुत्र तथा पति के मस्तक पर रखने को कहा। विष्णु इसमे बहुत प्रसन्न हुए। वर माँगने को कहा। उसने जो वर माँगा उसके फलस्वरूप भगवान विष्णु को बलि के द्वारपाल की नौकरी सँभालनी पडी। विष्णु ने बलि को पाताल का राज्य दे दिया।

'वामन पुराण'[1] मे यह कथा आठ अध्यायो मे विस्तार से वर्णित है। कथा का अधिकाश तो 'वाल्मीकि रामायण' मे कथित कथा के समान ही है केवल दो बातो मे उसका वशिष्टय है—(१) जसे ही अदिति के गर्भ से भगवान विष्णु ने वामनावतार लिया स्वर्ग मे रहते हुए भी बलि का तेज क्षीण हो गया। बलि ने अपने पितामह प्रह्लाद से इसका कारण पूछा। प्रह्लाद ने वामनावतार की बात कही। बलि ने विष्णु की निन्दा की तब प्रह्लाद ने उसे श्री भ्रष्ट हो जाने का शाप दिया। बलि ने क्षमा माँगी। प्रह्लाद ने उसका अज्ञान दूर किया। (२) वामन के साथ अन्य देवतागण भी बलि के यज्ञमण्डप मे गये। जब ये लोग उधर जा रहे थे तब पृथ्वी कम्पित हुई। बलि ने कारण जानना चाहा। शुक्राचार्य ने वामन विष्णु के आने की बात कही। बलि विष्णु को अपने द्वार पर स्वत आया जान बहुत प्रसन्न हुआ और उसने उनके बिना माँगे उन्हे तीन पग पृथ्वी का दान दिया।

कूर्मपुराण[2] मे आगत कथा रूप कई बातो मे 'वामन पुराण' और 'बृहन्नारदीय पुराण' के समान है। एक बात विशिष्ट है कि बलि के यज्ञमण्डप मे वामन के जाने पर *भारद्वाज मुनि उनका परिचय बलि से कराते हैं।* बलि वामन का चरणोदक लेता है। वामन अपने परो मे समा जाने योग्य भू भाग की याचना करते हैं। बलि सकल्प

१ वामन पुराण अ० २४ ३१
२ कूर्म पुराण अ १६ १७

करता है। वामन ने एक पैर में ही तीनों लोकों को नाप लिया। दूसरा पैर उन्होंने ब्रह्मलोक की ओर बढाया। ब्रह्मा ने विष्णु के संतोष के लिए ब्रह्माण्ड का आधा भाग तोड दिया जिससे महापुण्यसलिला फूट निकली। इसी को आकाश गंगा कहते हैं। विष्णु ने बलि को पाताल का और इन्द्र को त्रिलोक का राज्य दे दिया।

'मत्स्य पुराण'[1] में शौनक-अर्जुन संवाद के रूप में वामनावतार की कथा दी गयी है। यहाँ भी अदिति के गर्भ से विष्णु अवतार लेते हैं। उनके जन्मते ही असुरादि निस्तेज हो गये। बलि ने प्रह्लाद से इसका कारण पूछा। प्रह्लाद ने वामनावतार की बात कही। बलि ने विष्णु की निन्दा की। प्रह्लाद ने श्री-भ्रष्ट होने का शाप दिया और उसे भगवद्भक्ति का उपदेश भी दिया। यह कथांश 'वामन पुराण' के अनुसार ही वर्णित है। वामन जब बलि के यज्ञ में जाने लगे, तब बृहस्पति ने उन्हें कृष्णमृगचर्म, वसिष्ठ ने कमण्डलु, मारीच ने दण्ड, पुलह ने अक्षसूत्र और पुलस्त्य ने श्वेत वस्त्र दिए। वेदमय और देवमय होकर वामन बलि के यज्ञ में गए। वामन जैसे ही यज्ञमण्डप के समीप पहुँचे सारी पृथ्वी काँपने लगी और अग्नि ने असुरों के दिए भाग को खाना बन्द कर दिया। इसका कारण शुक्राचार्य ने वामन का आगमन बताया। शुक्राचार्य ने बलि को पहले ही आगाह कर दिया कि वामन तुम से दान माँगेंगे, तुम साफ नकार जाना। परन्तु बलि याचक बनकर आये भगवान के लिए कुछ भी अदेय नहीं मानता। यहाँ वामन इन्द्र के साथ नहीं अकेले ही बलि के यज्ञमण्डप में गये हैं। ब्रह्माण्ड के टूटने से गंगा की उत्पत्ति का इसमें उल्लेख नहीं है। तीन पग में वामन त्रैलोक्य को ले लेते हैं और इन्द्र को दे देते हैं। बलि को सुतल में स्थापित कर देते हैं।

(३८) शकुन्तला-दुष्यन्त प्रेमाख्यान

शकुन्तला और दुष्यन्त के प्रेमाख्यान का प्रथम उल्लेख महाभारत के आदि पर्व[2] में आता है। पुरुवंशी राजा दुष्यन्त बड़े चक्रवर्ती सम्राट थे। एक बार वे बहुत से सैनिकों और हाथी घोडों के साथ गहन वन में मृगया करने चले। वन में बहुत से पशुओं का उन्होंने वध किया। शिकार करते हुए वे वन में काफी दूर तक चले गए उनके साथी भी उनसे बिछुड गये। वन में उन्हें एक मनोरम आश्रम दिखायी दिया। वह आश्रम कण्व मुनि का था। तपोधन कण्व के दर्शन की अभिलाषा से दुष्यन्त ने आश्रम में प्रवेश किया।[3]

कण्व मुनि उस समय फल संग्रह के लिए आश्रम से बाहर गये हुए थे। आश्रम सूना था। एक तापसी-वेश धारण किए सुन्दरी कन्या ने आश्रम में उनका स्वागत किया।[4] उस कन्या के सर्वांग सौन्दर्य के प्रति आकर्षित होकर दुष्यन्त ने उसका परिचय

---

१ मत्स्य पुराण अ० २४ २४५

२ महाभारत आदि पर्व ७० ७४

३ वही आदि पर्व ७०

४ वही आदि पर्व ७१।४६

पूछा। वह अपना परिचय बताये, उसके पूर्व ही दुष्यन्त न अपना परिचय और उसे अपनी पत्नी बनाने की अभिलाषा प्रकट कर दी। साथ ही, यह भी कह दिया कि क्षत्रिय-कन्या के सिवा मेरा मन दूसरी किसी स्त्री पर कभी नहीं जाता अत तुम क्षत्रिय कन्या ही हो।[1] तापसी कन्या ने बताया कि मैं तपस्वी कण्व की पुत्री मानी जाती हूँ। मैं परतन्त्र हू। विवाह के विषय म आप मेरे गुरु और पिता महर्षि कण्व स ही बात करें।[2] दुष्यन्त न कहा कि कण्व तो नैष्ठिक ब्रह्मचारी हैं उनके पुत्री कहाँ स हुई? शकुन्तला न अपने पिता के मुख स सुनी बात राजा दुष्यन्त स इस प्रकार बतलाई—

महर्षि विश्वामित्र की घोर तपस्या स डरकर देवराज इन्द्र न मनका नामक अप्सरा को उनका तप भग करने के लिए भजा। मनका के रूप को देखकर विश्वामित्र काममोहित हो गये। विश्वामित्र और मेनका कई वर्ष तक विहार करते रहे। विश्वामित्र स मेनका के एक पुत्री उत्पन्न हुई जिसे उसने मालिनी नदी के तट पर छोड दिया और इन्द्रलोक चली गयी क्योंकि वह जिस काम के लिए इन्द्र द्वारा भजी गयी थी वह पूरा हो चुका था। नदी तट पर उस नवजात कन्या का शकुन्तों (पक्षियों) ने अपनी पाँखों स ढक लिया ताकि कोई हिंसक जन्तु उसे खा न जाय। उसी समय कण्व मुनि आचमन के लिए नदी पर गए तो उन्हें वह कन्या मिली।[3] पक्षियों न महर्षि कण्व स कहा कि यह विश्वामित्र की पुत्री है आप दयालु हैं इसका पालन कीजिए।[4] महर्षि उस कन्या को ले आये और शकुन्तान लाति रक्षकत्वेन गृह्णाति व्युत्पत्ति के अनुसार उसका नाम 'शकुन्तला' रख दिया। वह शकुन्तला मैं ही हूँ। मैं कण्व को ही अपना पिता मानती हूँ।[5]

यह जानकर कि शकुन्तला क्षत्रिय कन्या है दुष्यन्त का आकर्षण और अनुराग उसके प्रति अधिक बढ गया। उसे गान्धर्व विवाह द्वारा भार्या बनाने का प्रस्ताव उन्होंने दुहराया। शकुन्तला ने राजा दुष्यन्त के सम्मुख एक शर्त रखी कि 'मेरे गर्भ से आपके द्वारा जो पुत्र उत्पन्न हो वही आपका युवराज हो। यदि यह शर्त आपको स्वीकार हो तो मेरा आपका समागम हो सकता है।'[6] दुष्यन्त न यह शर्त स्वीकार कर ली। गान्धर्व विवाह करके राजा न शकुन्तला के साथ सहवास किया और उसे शीघ्र ही अपने नगर में बुलाने का विश्वास दिलाकर वहाँ से विदा हुए।[7]

दुष्यन्त को गये दो ही घड़ी बीती थी कि महर्षि कण्व आश्रम पर आ गये। शकुन्तला लज्जावश उनसे कुछ कह नहीं पा रही थी पर मन में बहुत भयभीत थी। कण्व द्वारा अभय दिलाने पर उसने दुष्यन्त के साथ अपने विवाह आदि की बातें उन्हें

---

१ महाभारत आदि पर्व ७१।१३
२ वही आदि पर्व ७१।१४ १५
३ वही आदि पर्व ७१।२० ४२ और ७२।१ १३
४ वही आदि पर्व ७२।१३ १४
५ वही आदि पर्व ७२।१६ १६
६ वही आदि पर्व ७३।१६ १७
७ वही आदि पर्व ७३।२ २१

बतला दी। कण्व को यह जानकर प्रसन्नता हुई कि उनकी पालिता पुत्री दुष्यन्त जस राजेश्वर की महारानी बनगी। मुनि को प्रसन्न देखकर शकुन्तला ने दुष्यन्त के लिए यह वर माँग लिया कि व कभी धम और राज्य से भ्रष्ट न हो।[1]

इधर ता शकुन्तला के उदर म दुष्यन्त द्वारा स्थापित गभ धीरे धीरे बढ रहा था और उधर दुष्यन्त अपन नगर म जाकर उस भूल गए। शकुन्तला की प्रतीक्षा करत-करते तीन वष बीत गए। पूरे तीन वष व्यतीत होने पर शकुन्तला के गभ से एक तजस्वी कुमार का जन्म हुआ।[2] शिशु जन्म के अवसर पर देवताओं सहित इन्द्र ने आकर कहा कि यह शिशु चक्रवर्ती सम्राट होगा तथा बल-तेज मे कोई इसकी समानता न कर सकेगा।[3] कण्व के आश्रम मे वह बालक क्रमश बढने लगा। छ वष की ही अवस्था म वह बलवान बालक सिंहो, व्याघ्रो वराहों और भसों हाथियो को पकड कर खींच लाता। इसी प्रकार वह सबका दमन कर उनकी पीठ पर चढ जाता, उन्हें दौडाता। इसीलिए ऋषियों न उसका सवदमन' नामकरण किया।[4] सवदमन बारह वष का किशोर हो गया और कण्व द्वारा पठित होकर वेद शास्त्र का ज्ञाता भी हो गया पर दुष्यन्त की ओर स शकुन्तला को बुलाने कोई भी न आया।[5] चिन्ता के मारे शकुन्तला का बुरा हाल था। कण्व न शकुन्तला को अपने पतिगह जाने की आज्ञा दे दी, क्योकि सवदमन की आयु युवराज बनने की हो गयी थी। कण्व ने सवदमन को भी उसके पिता का परिचय दिया। फिर, अपने कुछ शिष्यो के साथ शकुन्तला और सवदमन को राजा दुष्यन्त के नगर मे भज दिया।[6]

कुमार को लेकर कण्व के शिष्यो के साथ, शकुन्तला दुष्यत की राजसभा मे पहुँची और कुमार को अपने पिता को प्रणाम करने के लिए कहा। दुष्यत न शकुन्तला से उसके आगमन का हेतु ऐसे पूछा मानो उससे उनका कभी कोई परिचय न रहा हो। शकुन्तला ने सवदमन को उनका पुत्र बतलाकर उस युवराज पद पर अभिषिक्त करने को कहा और गान्धव विवाह के समय की गयी प्रतिज्ञा का स्मरण कराया,[7] परन्तु दुष्यत को तो कुछ भी याद न था। शकुन्तला ने अपनी जन्म कथा वन मे दुष्यत का उससे प्रणय निवेदन आदि सब बातो को एक एक कर स्मरण दिलाया, किन्तु उन बातो का स्मरण करना ता दूर दुष्यत ने उलटे उसको लाछित करना आरम्भ किया। उन्होने कहा कि मैं तुम्हें बिलकुल नही पहचानता। दुष्यन्त द्वारा अपमानित होकर क्षुब्ध अमर्षित और लज्जित शकुन्तला जसे ही वहाँ स चलने को हुई वसे ही समस्त सभा

---

१ महाभारत आदि पर्व ७३।३४ ३५
२ वही आदि पव ७४।१ २
३ वही आदि पव ७४।३
४ वही आदि पव ७४।५ ८
५ वही आदि पव ७४।६
६ वही आदि पर्व ७४।१० १२
७ वही आदि पर्व ७४।१३ १८

सदा के सम्मुख दुष्यत को सम्बोधित करते हुए आकाशवाणी हुई जिसमे सवदमन को उनका ही पुत बतलाकर उसे स्वीकार करने और शकुन्तला को भार्या बतलाकर उसका अनादर न करने का आदेश दिया गया। सवदमन के विषय मे भी कहा गया कि यह 'भरत' के नाम स विख्यात होगा।[1]

दुष्यत ने अपने मत्रियो आदि से कहा कि मैं भी अपने को इसी रूप म जानता हू कि तु यदि मैं केवल शकुन्तला के कहने मात्र स इसे ग्रहण कर लेता ता सब लोग इस पर स देह करते और यह बालक विशुद्ध नही माना जाता।[2] तदनन्तर दुष्यत ने आदर और स्नेहपूवक सवदमन तथा शकुन्तला को स्वीकार किया। फिर शकुतला स कहा कि देवि तुम निस्सदेह पतिव्रता हो, कि तु मैंने तुम्हारे साथ जो विवाह सबध स्थापित किया था उस साधारण जनता नही जानती थी, अत तुम्हारी शुद्धि क लिए ही मैंन यह उपाय सोचा था।[3] इसके बाद शकु तला का अन पान वस्त्र आदि के सत्कार करके राजा दुष्यत ने अपनी माता रथन्तर्या को भी सारा वृत्ता त बताया। दुष्यत न सवदमन का नाम भरत' रखकर उस युवराज पद पर अभिषिक्त किया। सौ वर्षों तक राज्य करने क बाद दुष्यत स्वग सिधारे।

कालिदास क 'अभिज्ञान शाकुन्तल' नाटक में महाभारत' के इस उपाख्यान को कुछ एसे मौलिक तत्त्वो से सयुक्त कर दिया गया है कि उनस इसका वस्तुगत सौन्दय और भी बढ गया है। इस नाटक की मौलिक उद्भावनाए निम्न हैं —

(१) इसम शकुतला की सखियो—अनसूया और प्रियवदा की कल्पना कर ली गयी है। प्रेमोदय और प्रेम विकास म इन सखियो का भी याग रहता है। 'महाभारत' की तरह यहाँ शकुतला को अपनी ज म कथा स्वय नही बतानी पडता वरन ये सखिया ही दुष्यत को बतला देती हैं।

(२) महाभारत की कथा म प्रेम निवेदन दुष्यत करत हैं परन्तु प्रारम्भ मे यह पता नही चलता कि शकुतला भी दुष्यत को उतनी ही मात्रा म प्रेम करने लगी है जिस मात्रा म दुष्यत शकुतला को। 'अभिज्ञान शाकुन्तल' म तुल्यानुराग है। शकु तला का चित्त दुष्यत को देखते ही उनकी ओर आकर्षित हो जाता है। दुष्यत से कुछ घडी को विलग होत ही वह कमलिनी पत्र पर अपने नखो से प्रेम पत्र तक लिखने लगती ह। दुष्यत उस सहिदानी के रूप म अपनी नामाक्ति अगूठी भी दत है।[4]

(३) दुर्वासा के शाप—जिसक ध्यान म मग्न होकर तू मुझ जस तपस्वी के

---

१ महाभारत आदि पव ७४।१ ६ ११४ १/२
२ वही आदि पव ७४।११७ १/२
३ वही आदि पव ७४।१२२
४ अभिज्ञान शाकुतल (कालिदास-ग्रथावली विक्रम परिषद काशी)
५ वही अक १ प० १६

आने की सुध नही ले रही है, वह स्मरण दिलाने पर भी तुझ भूल जाएगा[1]—और उसके मोचन के उपाय 'यदि यह कन्या अपने प्रेमी को कोई पहचान का आभूषण दिखला दे, तो मेरा शाप छूट जाएगा'[2]—की योजना करके कालिदास ने इस कथा का उस असगति और अस्वाभाविकता को दूर कर दिया है जो महाभारत वाली कथा म मिलती हैं। 'महाभारत मे दुष्यत जान बूझकर शकुतला को न पहचानने का बहाना करते हैं ताकि जनता के सम्मुख यह प्रमाणित हो जाय कि सवन्मन उन्ही का पुत्र है। ऐसा लगता है, मानो उन्हें पहले से पता था कि जब वे शकुतला को तिरस्कृत करेंगे तब उसके सतीत्व का साक्ष्य देने के लिए आकाशवाणी होगी ही। दुष्यत का शकुतला को अपनी सफाई देना हास्यास्पद लगता है। 'शाकुतल' मे अगूठी को मछली निगल जाती है, उसके खो जाने से और दुर्वासा के शाप वश वह अपनी पहचान नही दे पाती। दुष्यत की राज सभा स उसके चले जाने और हेमकूट पवत पर जाकर रहने लगने पर जब एक मछुए से राजा को अगूठी प्राप्त होती है तब शाप मोचन हो जाता है और दुष्यत का शकुतला की स्मति हो आती है। उसके उपरा त व उसके लिए बहुत बेचन हो जात हैं। दुष्यत के चरित्र चित्रण की दृष्टि स कालिदास द्वारा इस प्रेमाख्यान मे दुर्वासा के शाप और अगूठी की योजना वस्तुत एक सु दर और मौलिक उदभावना है।

(४) महाभारत' के 'शकुतलोपाख्यान मे सवदमन की उत्पत्ति कण्व के आश्रम मे ही हो जाती है। वह जब तरह वप का हो जाता है तब कण्व शकुन्तला-सहित उसको दुष्यत के पास भेजने की चिन्ता करत हैं। प्रश्न उठता है कण्व ने पुत्र रत्न-उत्पत्ति की सूचना दुष्यत को इससे पहल क्यो नही भेजी ? 'अभिज्ञान शाकुतल मे शकुतला गभवती अवस्था मे ही दुष्यत की राजसभा म जाती है और पति द्वारा तिरस्कृत होने के बाद उसको पुत्र उत्पत्ति होती है। 'महाभारत की कथा म एक और भी अस्वाभाविकता है कि सवदमन तीन वप तक गभ म पडा रहा।

(५) अभिज्ञान शाकुतल' मे शकुतला के दुष्यत स गभवती होने की सूचना आकाशवाणी से मिलती है।[3]

(६) शकुन्तला के पतिगृह जाते समय उसर साथ एक वयोवृद्धा तपस्विनी गौतमी को साथ भजना भी 'अभिज्ञान शाकुतल' की एक सुन्दर

---

[1] अभिज्ञान शाकुन्तल अक ४ पृ० ४२
[2] वही अक ४ पृ० ४३
[3] वही अक ४ पृ० ४६

सदो के सम्मुख दुष्यत को सम्बोधित करते हुए आकाशवाणी हुई जिसमे सवदमन को उनका ही पुत्र बतलाकर उसे स्वीकार करने और शकु तला को भार्या बतलाकर उसका अनादर न करने का आदेश दिया गया। सवदमन के विषय मे भी कहा गया कि यह 'भरत' के नाम स विख्यात होगा।[1]

दुष्यत ने अपने मत्रियो आदि से कहा कि मैं भी अपन को इसी रूप मे जानता हू किन्तु यदि मैं कवल शकुतला के कहने मात्र से इसे ग्रहण कर लेता तो सब लोग इस पर स देह करत और यह बालक विशुद्ध नही माना जाता।[2] तदन तर दुष्यत ने आदर और स्नेहपूवक सवदमन तथा शकुतला को स्वीकार किया। फिर शकुतला स कहा कि देवि, तुम निस्सदेह पतिव्रता हो किन्तु मैंने तुम्हारे साथ जो विवाह सबध स्थापित किया था उस साधारण जनता नही जानती थी अत तुम्हारी शुद्धि क लिए ही मैंने यह उपाय सोचा था।[3] इसके बाद शकु तला का अन्न पान वस्त्र आदि न सत्कार करके राजा दुष्यत ने अपनी माता रथन्तर्या को भी सारा वृत्ता त बताया। दुष्यत न सवदमन का नाम भरत रखकर उसे युवराज पद पर अभिषिक्त किया। सौ वर्षों तक राज्य करने के बाद दुष्यत स्वग सिधारे।

कालिदास क 'अभिज्ञान शाकुतल' नाटक में महाभारत' के इस उपाख्यान को कुछ ऐसे मौलिक तत्त्वो से सयुक्त कर दिया गया है कि उनस इसका वस्तुगत सौन्दय और भी बढ गया है। इस नाटक की मौलिक उदभावनाएँ निम्न हैं —

(१) इसम शकुतला की सखियो—अनसूया और प्रियवदा की कल्पना कर ली गयी है। प्रेमोदय और प्रेम विकास म इन सखियो का भी योग रहता है। 'महाभारत' की तरह यहाँ शकु तला को अपनी जन्म कथा स्वय नही बतानी पडती वरन ये सखियाँ ही दुष्यत को बतला देती हैं।

(२) महाभारत की कथा म प्रेम निवेदन दुष्यत करत हैं परन्तु प्रारम्भ मे यह पता नही चलता कि शकुतला भी दुष्यत को उतनी ही मात्रा म प्रेम करन लगी है, जिस मात्रा म दुष्यत शकुन्तला को। 'अभिज्ञान शाकुतल' म तुल्यानुराग है। शकु तला का चित्त दुष्यत को देखते ही उनकी ओर आकर्षित हो जाता है। दुष्यत से कुछ घडी को विलग होत ही वह कमलिनी पत्र पर अपने नखो से प्रेम पत्र तक लिखने लगती ह। दुष्यत उसे सहिदानी के रूप म अपनी नामाकित अगूठी भी देते है।[5]

(३) दुवासा के शाप—जिसके ध्यान मे मग्न होकर तू मुझ जस तपस्वी के

१ महाभारत आदि पव ७४।१ ६ ११४ १/२
२ वही आदि पव ७४।११७ १/२
३ वही आदि पव ७४।१२२
४ अभिज्ञान शाकुन्तल (कालिदास-ग्रन्थावली विक्रम परिषद काशी)
५ वही अक १ प १६

आने की सुध नही ले रही है, वह स्मरण दिलाने पर भी तुझ भूल जाएगा'[1]—और उसके मोचन के उपाय 'यदि यह कन्या अपने प्रेमी को कोई पहचान का आभूषण दिखला दे तो मेरा शाप छूट जाएगा'[2]—की योजना करके कालिदास ने इस कथा की उस असगति और अस्वाभाविकता को दूर कर दिया है जो महाभारत वाली कथा मे मिलती हैं। 'महाभारत' म दुष्यत जान बूझकर शकुतला को न पहचानने का बहाना करत हैं ताकि जनता के सम्मुख यह प्रमाणित हो जाय कि सवन्मन उन्ही का पुत्र है। ऐसा लगता है मानो उन्हे पहले से पता था कि जब वे शकुतला को तिरस्कृत करेंगे तब उसके सतीत्व का साक्ष्य देन के लिए आकाशवाणी होगी ही। दुष्यत का शकुतला को अपनी सफाई देना हास्यास्पद लगता है। 'शाकुन्तल' मे अगूठी को मछली निगल जाती है उसके खो जाने से और दुर्वासा के शाप वश वह अपनी पहचान नही दे पाती। दुष्यत की राज सभा से उसके चले जाने और हेमकूट पवत पर जाकर रहने लगने पर, जब एक मछुए से राजा को अगूठी प्राप्त होती है तब शाप मोचन हो जाता है और दुष्यत का शकुन्तला की स्मति हो आती है। उसके उपरा त वे उसके लिए बहुत बेचन हो जाते हैं। दुष्यत के चरित्र चित्रण की दष्टि से कालिदास द्वारा इस प्रेमाख्यान में दुर्वासा के शाप और अगूठी की योजना वस्तुत एक सुन्दर और मौलिक उदभावना है।

(४) महाभारत' के 'शकुतलोपाख्यान मे सवदमन की उत्पत्ति कण्व के आश्रम म ही हो जाती है। वह जब तेरह वष का हो जाता है तब कण्व शकुन्तला-सहित उसको दुष्यत के पास भेजने की चिन्ता करत हैं। प्रश्न उठता है कण्व ने पुत्र रत्न उत्पत्ति की सूचना दुष्यत को इससे पहल क्यों नही भजो ? 'अभिज्ञान शाकुतल म शकुतला गभवती अवस्था मे ही दुष्यत की राजसभा म जाती है और पति द्वारा तिरस्कृत होने क बाद उसका पुत्र उत्पत्ति होती है। महाभारत की कथा मे एक और भी अस्वाभाविकता है कि सवदमन तीन वष तक गभ मे पडा रहा।

(५) अभिज्ञान शाकुतल' मे शकुतला क दुष्यत से गभवती होने की सूचना आकाशवाणी से मिलती है।[1]

(६) शकुतला के पतिगृह जाते समय उसक साथ एक वयोवद्धा तपस्विनी गौतमी को साथ भेजना भी अभिज्ञान शाकुतल' की एक सुन्दर

१ अभिज्ञान शाकुन्तल अक ४ पृ ४२
२ वही अंक ४ पृ ४३
१ वही अंक ४ पृ० ४६

कल्पना है 'महाभारत' मे ऐसा नही है।

(७) 'अभिज्ञान शाकुन्तल' मे दुष्यत द्वारा तिरस्कृत होने पर मेनका आकर शकुतला को अप्सरा लोक की ओर ले जाती है।[1]

(८) कश्यपमुनि द्वारा सवदमन क हाथ मे पहनाने के लिए अपराजिता नामक जडी दना और उसम यह गुण होना कि उसके पृथ्वी पर गिरने पर माता पिता का छोड कोई अय उठावे ता सॉप बनकर तत्काल डॅस ले—यह भी एक नूतन उदभावना अभिज्ञान शाकुन्तल' की है। उसस ही दुष्यत के सवदमन का पिता होने की पहचान होती है।[2]

(३९) श्रवणकुमार की कथा

यह कथा सवप्रथम वाल्मीकि रामायण म ही मिलती है। रामायण' के अन तर लिखे गय अय राम-कथा काव्यो म यह आख्यान किसी न किसी रूप म मिल जाता है परन्तु पुराणो म इस आख्यान का अधिक विकास नही हुआ।

'वाल्मीकि रामायण' म राम के वन जाने के बाद की छठी रात को महाराज दशरथ ने कौसल्या स यह कथा सुनायी है।[3] दशरथ ने बताया कि युवावस्था म उन्हे श-द वेधी वाण चलाने का चाव था और उसी के कारण अनजान उनस एक अपराध हो गया। वे रात को आखट करने गय हुए थे। अधरे म उन्ह कहीं दूर घडा भरने की ध्वनि सुनायी दी। उन्होने यह समझकर कि कोई हाथी पानी पी रहा है ध्वनि को लक्ष्य करक एक विष बुझा तीर छाड दिया। तुर त ही एक मनुष्य के यथापूण श-द सुनायी दिये।[4] दशरथ ने जाकर देखा। एक मुनिकुमार तीर स बिंधा छटपटा रहा है। वह अपने बूढे अ ध और पगु माता पिता की उसके न रहने पर होने वाली दुदशा को स्मरण कर और भी दु खी हो रहा था। वह दशरथ को अपनी निरपराध हत्या के लिए कोसने लगा। उसने दशरथ से अपने माता पिता के आश्रम म जाकर उन्ह समाचार बताने और उनस क्षमा मागने को कहा। उसके ममस्थल से दशरथ ने बाण निकाला। उसने बताया कि मैं ब्राह्मण नही हूँ बल्कि मेरी माता शूद्रा और मेरे पिता वश्य हैं, अत आपको ब्रह्म हत्या का पाप नही लगेगा। यह कहकर वह मर गया।[5]

दशरथ घडे म जल लेकर उसक अन्धे माता पिता क पास गय। डरत-डरते उन्होन उस अन्धे तपस्वा दम्पती से उनक पुत्र के अपने हाथो अनजान म मारे जाने का

१ अभिज्ञान शाकुन्तल अक ५ प ६७
२ वही अक ५ प० ६७
३ वाल्मीकि रामायण अयोध्या काण्ड सग ६३ ६४
४ वही अयोध्या काण्ड ६३।२१ २४
५ वहा अयोध्या० ६३।२५ ५२

अपराध कह सुनाया और उसके लिए क्षमा चाही ।[1] उनकी इच्छा जान दशरथ उन दोनों को वहाँ ले आये जहाँ उनके पुत्र का शव पड़ा था । माता पिता ने अपने पुत्र के शव से लिपटकर हृदय विदारक विलाप किया । उन्होंने उसके द्वारा प्रदर्शित भक्ति और अपनी की हुई सेवाओं का स्मरण कर उसकी सद्गति के लिए आशीर्वाद दिया । मुनि पुत्र अपने पुण्यकर्मों के बल से दिव्य रूप धारण कर इन्द्र के साथ विमान में बैठकर तुरन्त स्वर्ग चला गया ।[2] चलते चलते वह दिव्यात्मा अपने दुःखी माता पिता से बोला — "मैंने आपकी जो सेवा की थी, उसी पुण्य के बल से मुझे यह उत्तम गति मिली है[3] ।" अन्धे तापस ने दशरथ को शाप दिया कि 'मुझको इस समय जैसा पुत्र शोक हुआ है ऐसे ही पुत्र शोक से तुम्हारी मृत्यु होगी[4] ।' दशरथ ने कौसल्या को बताया कि बहुत विलाप करने के बाद मुझे शाप दे, वे दम्पति चिता बनाकर और उस पर बैठकर (भस्म होकर) स्वर्ग को चले गये ।[5]

इस आख्यान में कहीं मुनि-पुत्र का श्रवणकुमार नाम नहीं आता ।

महाभारत में यह कथा रामोपाख्यान में नहीं आती । ब्रह्म पुराण[6] में यह कथा संक्षेप में मिलती है । वाल्मीकि रामायण की कथा से इसमें इतनी ही भिन्नता है कि इसमें अन्ध तापस को ब्राह्मण बताया गया है और उसका नाम 'श्रवण' । मुनि-पुत्र का नाम 'श्रावण' कहा गया है ।

'अग्नि पुराण'[7] में भी इस कथा का संक्षिप्त रूप ही प्राप्त होता है । इसमें मुनि-पुत्र का नाम 'श्रवण' न होकर यज्ञदत्त मिलता है । शेष कथा वाल्मीकि-कृत रामायण के समान ही है ।

एक बौद्ध ग्रन्थ 'सामजातक' में भी यह कथा मिलती है । वहाँ 'श्रवण' का सरवन कहा है और दशरथ को अन्धमुनि के शाप से पुत्र वियोग में मरता दिखाया गया है ।

अध्यात्म रामायण[8] (ब्रह्माण्ड पुराण का अंश) में भी अन्ध तापस के शाप की कथा आयी है । इसमें मुनि पुत्र का कोई नाम नहीं दिया है । उसे मुनिकुमार न कह कर 'मुनीश्वर' ही कहा है । मुनीश्वर (मुनि-पुत्र) यहाँ वैश्य है । वाल्मीकि रामायण में मुनि-पुत्र की हत्या करते समय दशरथ राजा नहीं बने होते युवराज ही होते हैं पर यहाँ वे राजा हैं । यहाँ अपने माता पिता से पहले मुनि-पुत्र के इन्द्र के साथ स्वर्ग जाने का उल्लेख नहीं है । माता पिता पुत्र के शव को लेकर जीते-जी चिता पर बैठ

१ वाल्मीकि रामायण अयोध्या ६४।१२०
२ वही अयोध्या काण्ड ६४।४८
३ वही अयोध्या० ६४।४६ ५
४ वही अयोध्या काण्ड ६४।५५
५ वही अयोध्या काण्ड ६४।५८
६ ब्रह्मपुराण अ १२३
७ अग्नि पुराण अ ६
८ अध्यात्म रामायण अयोध्याकाण्ड ७।१६ ४७

जाते हैं और भस्म होकर स्वर्ग चले जाते हैं। 'वाल्मीकि रामायण' म चिता अध तापस तापसी ही बना लेते हैं पर यहाँ दशरथ उस चिता को बनाते हैं। चिता पर बैठकर वद्ध तापस ने उन्हें पुत्र शोक मे मरने का शाप दिया है। इन सामान्य अन्तरों के अतिरिक्त सारी कथा वाल्मीकि कृत रामायण' के समान है।

'आनन्द रामायण'[1] मे भी यह कथा है। वहा मुनि पुत्र का नाम 'श्रवण' मिलता है। यह भी उल्लेख है कि वह अपने अन्धे माता पिता को कांवर म बठाकर काशी की तीर्थ यात्रा कराने ले जा रहा था। किसी वन म जाते हुए दोपहरी की गर्मी म माता-पिता और स्वय के प्यास से व्याकुल होन पर वह एक जलाशय से जल लाने गया था। शष घटनाएँ वाल्मीकि कृत रामायण के अनुसार हैं।

(४०) शिवजी के ललाट पर द्वितीया का चद्र

'वाल्मीकि रामायण और 'महाभारत दोनो म समुद्र मथन प्रसग का वर्णन है।[2] 'वाल्मीकि रामायण' म समुद्र मथन के फलस्वरूप निकलने वाले जिन रत्नो का उल्लेख हुआ है उनम चन्द्रमा का नाम नही है। महाभारत म चन्द्रमा के समुद्र से निकलने का उल्लेख है। दोनो ही ग्रन्था म शिव द्वारा कालकूट पीने का उल्लेख है। किन्तु दानो म से किसी म यह नही लिखा कि कालकूट के दाह को शान्त करने के लिए शिव ने चन्द्रमा को अपने ललाट पर धारण किया और चन्द्रमौलि कहलाय। 'महाभारत के अनुशासन पर्व' मे जहाँ पार्वती शिव की विचित्र वेश भूषा के सम्बन्ध मे प्रश्न करती हैं वहाँ भी उन्होने उनके ललाट पर चन्द्रमा धारण करने का कारण नही पूछा है। वे उनके चतुर्मुख के विषय म पूछती हैं उनके नीलकठ होने का कारण जानना चाहती हैं उनकी पिंगल केश राशि और पिनाक आदि के विषय मे भी जिज्ञासा करती हैं किन्तु चन्द्रमा के सम्बन्ध मे मौन ही रहती हैं। बस उसी पर्व म वह हे चन्द्रमा के पालक आपको नमस्कार है[4] कहकर शिव के द्वारा चन्द्रमा धारण करने का सकेत देती हैं।

'विष्णु पुराण मे यह उल्लेख आता है कि समुद्र मथन के समय जब उसम स स्निग्ध प्रकाश युक्त चन्द्रमा निकला तब उसे शिवजी ने ग्रहण कर लिया।[5]

ब्रह्मवैवर्त पुराण मे ऐसा उल्लेख है कि गुरु पत्नी तारा का जब चन्द्रमा बलात हरण कर लाया, तब शकर जी उस पर बहुत क्रुद्ध हुए। अपने त्रिशूल स उस नष्ट करन पर तुल गये किन्तु जब शुक्राचाय ने जिनकी शरण मे चन्द्रमा था शकर जी स प्राथना

१ आनन्द रामायण सार खण्ड १।८६ ९५

२ वाल्मीकि रामायण बाल काण्ड ४५।१५ ४२ महाभारत आदि पव अध्याय १७ १९

३ महाभारत अनुशासन पव अ १४१

४ वही अनुशासन पव अ० १४१।१९ के बाद के दाक्षिणात्य पाठ का १६वाँ श्लोक

५ विष्णु पुराण १।९।९६

की तब शंकर जी पसीज गये। उन्होंने चन्द्रमा को क्षीरोद में स्नान कराकर पवित्र कर लिया और उसके दो खण्ड कर आधे को अपने मस्तक पर धारण कर लिया और आधे को ब्रह्मा के सामने छोड़ दिया। चन्द्रमा ने लज्जित होकर समुद्र में डूबकर आत्महत्या कर ली। अपने पुत्र चन्द्रमा के वियोग में अत्रि ऋषि की आँखों से आँसू जल में गिरे। चन्द्रमा निष्पाप होकर पुनः समुद्र से प्रकट हुआ। शंकर जी ने चन्द्र से कहा कि तारा के शाप के कारण तुम्हें यक्ष्मा रोग तो अवश्य होगा किन्तु मेरे आशीर्वाद से उसका प्रतीकार हो जाएगा।[1]

(४१) शिवजी के कन्धे पर दो हत्याएँ होना

(१) ब्रह्मा की हत्या

(२) कामदेव की हत्या—(कामदेव दहन)

शिवजी के कंधों पर किन दो हत्याओं का पाप था, इसके विषय में विद्वानों में मतैक्य नहीं है। यहाँ 'पदमावत मूल और संजीवनी टीका' की एक टिप्पणी उद्धृत की जाती है जिससे इस विषय पर प्रकाश पड़ेगा—शुक्लजी (आचार्य रामचन्द्र शुक्ल) ने लिखा है—'कवि ने शिव के कंधों पर हत्या की कल्पना क्यों की, यह स्पष्ट नहीं होता।' श्री सुधाकर द्विवेदी ने गंगा और चन्द्रमा को शिव के कंधों की दो हत्याएँ समझा था, क्योंकि पार्वती उन्हें अपने एकान्त प्रेम की बाधक आठ पहर की हत्या जैसी मानती हैं। श्री शिरेफ ने सती के मृत शरीर को कंधे पर रखने और मदन दहन को दो हत्याएँ माना है। डा० मुंशीराम शर्मा 'सोम' ने 'पदमावत' की अपनी हिन्दी टीका में गणेशजी को मारने और उनको जीवित रखने के लिए हाथी को मारने का दो हत्याएँ माना है। प्राचीन विश्वास के अनुसार ब्राह्मण, गाय या देवता को मारने से हत्या लगी मानी जाती है। अपनी ही पुत्री सरस्वती पर आसक्त होकर उसके पीछे भागते हुए ब्रह्मा का मस्तक शिव ने काट लिया था। सम्भव है ये ही दो हत्याएँ शिव को लगी हों। क्षेमेन्द्र ने अपने 'देशोपदेश' ग्रंथ में शिव की ब्रह्महत्या का उल्लेख किया है (शक्रराज्यापहरण क्षमा शिवबुध वर्जिता। कुट्टनी ब्रह्महत्येव भयप्रदा॥ ४।२)' डा० वासुदेवशरण अग्रवाल भी इस उद्धरण में ब्रह्मा और कामदेव—दो की हत्याओं के पाप के शिव के कंधे पर होने के विषय में पूर्ण आश्वस्त नहीं जान पड़ते फिर भी कामदेव दहन को दूसरी हत्या मानने की ओर उनका झुकाव लगता है। किन्तु आगे चलकर उनके इस कथन ने दूसरी हत्या सम्बन्धी उनके मत को अधिक दुविधाग्रस्त बना दिया है— शिव को एक ब्रह्म हत्या तो निश्चित रूप से ब्रह्मा के सिर काटने से लगी थी जिसकी कथा 'मत्स्यपुराण' (१८३।१०३) में है। दूसरी ब्रह्म हत्या सम्भवतः दक्ष प्रजापति के वध से लगी थी। किन्तु उसका

---

१ ब्रह्मवैवर्त पुराण कृष्ण जन्म खण्ड अ० ८१

२ पदमावत मूल और संजीवनी टीका डा० वासुदेवशरण अग्रवाल साहित्य सदन चिरगाँव झाँसी प्र० सं० २०१२ वि० पृ० २०१

उल्लेख अभी तक मुझे नहीं मिला।[१]

उपयुक्त उद्धरणों के अनुसार विभिन्न विद्वानों के मत दो हत्याओं के सम्बन्ध मे ये हैं —

विद्वान	दो हत्याएँ किस किस की ?
आचार्य रामचन्द्र शुक्ल	(इस सम्बन्ध मे अस्पष्ट)
प० सुधाकर द्विवेदी	*गगा और चन्द्रमा*
श्री शिरेफ	सती के शव को कन्धे पर रखकर शिव का घूमना और मदन दहन
डा० मुशीराम शर्मा 'सोम'	गणेश और हाथी।
डा० वासुदेव शरण अग्रवाल	(१) ब्रह्मा और कामदेव किन्तु (२) ब्रह्मा और दक्ष अनिश्चित।

उपयुक्त सभी मतों मे हम डा० वासुदेवशरण अग्रवाल के मत मे अधिक तक-सगति जान पडती है, किन्तु दक्ष प्रजापति के जाने की घटना लोक विश्रुत होते हुए भी पुराणों मे उल्लिखित नहीं है। शिव ने अपने अंश से वीरभद्र नामक गण को दक्ष-यज्ञ का विध्वस करने के लिए उत्पन्न किया था[२] और इसी के द्वारा दक्ष के मारे जाने का उल्लेख मिलता है[३] किन्तु शिव ने अपने हाथों से दक्ष को मारा हो इसका कहीं उल्लेख हमे नहीं मिल पाया है। इसके विपरीत शिवजी द्वारा दक्ष को देवताओं के अनुरोध पर क्षमा कर देने और उनके यज्ञ की विध्वस्त सामग्री को यथावत कर देने का उल्लेख अवश्य मिलता है।[४]

अत हम शिव के कधों पर दो हत्याओं के पाप को (१) ब्रह्मा की हत्या और (२) कामदेव दहन से ही सम्बन्धित मानकर चलना अधिक उचित समझते है। इन दोनों हत्याओं से सम्बन्धित कथा सक्षेप मे यह है —

(१) शिवजी द्वारा ब्रह्मा की हत्या

शिवजी ने ब्रह्मा की हत्या इसलिए की थी कि उन्होंने अपनी पुत्री के साथ बलात्कार किया था। यह कथा पुराणों मे आयी है। किन्तु इस कथा का सकेत ऋग्वेद मे भी मिलता है।[५] ऐतरेय ब्राह्मण[६] 'शतपथ ब्राह्मण'[७] और 'निरुक्त'[८] मे भी इसका

१ पद्मावत मूल सजीवनी टीका अर्थ परिशिष्ट टिप्पणी पृ० ७२२

२ शिवपुराण रुद्र सहिता सती खण्ड अ १ तथा अ० २४ ४३ भागवत पुराण ४।२।१ २४ लिंग पुराण पूर्वार्द्ध ६६ १०

३ ब्रह्म पु अ ३९ शिव पु रुद्र सती खण्ड अ १ २४ ४३ भागवत पु ४।२।१ ३४ लिंग पु० पूर्वार्द्ध ६६ १ ०

४ पद्म पुराण सृष्टि० अ ५ शिव पु रुद्र सती खण्ड अ २४ ४३ भागवत पु ४।२।१ ३४ लिंग पु पूर्वार्द्ध ६६ १

५ ऋग्वेद १।१६४।३४

६ एतरेय ब्राह्मण ३।३३।३४

७ शतपथ ब्राह्मण १।७।४।४

८ निरुक्त ४।२१

सांकेतिक उल्लेख हुआ है। वाल्मीकि रामायण और 'महाभारत' में इस कथा का उल्लेख नहीं मिलता। 'महाभारत' में सरस्वती के ब्रह्माजी की पुत्री होने का उल्लेख अवश्य है।[1]

वैदिक साहित्य और महाभारत में इस कथा का प्रतीकात्मक रूप स्पष्ट है। ब्रह्मा का अर्थ प्रजापति है, यद्यपि कथा का मर्म बतलाते हुए ऐतरेय तथा शतपथ ब्राह्मणों ने यही अर्थ लिया है। प्रजापति का शाब्दिक अर्थ है राजा। अथर्ववेद में सभा और 'समिति' प्रजापति की दो पुत्रियाँ कही गयी हैं।[2] ये आज की लोक सभा और राज्य सभा या लोक सभा और मन्त्रि परिषद् को समानार्थी मानी जा सकती है। जो राजा अपनी सभा' और 'समिति' के परामर्श की अवहेलना कर, सत्तान्ध होकर एक निरंकुश शासक के रूप में बलपूर्वक शासन करता है वह अपनी सभारूपी दुहिता पर बलात्कार ही तो करता है। यह रूपक महाभारत' में और अधिक स्पष्ट कर दिया गया है। वहाँ यह उल्लेख है—'दण्ड सर्वत्र व्यापक होने के कारण भगवान् विष्णु है। इसी प्रकार दण्ड नीति भी ब्रह्माजी की कन्या कही गयी है। लक्ष्मी, वृत्ति सरस्वती तथा जगद्धात्री भी उसी के नाम हैं।[3] और दण्ड से सुरक्षित रहती हुई प्रजा ही इस जगत में अपने राजा का प्रतिदिन धन धान्य से सम्पन्न करती रहती है। इसलिए दण्ड ही सबको आश्रय देने वाला है।[4] यदि कोई प्रजापति या राजा अपनी दण्डनीति में निष्पक्ष न रहे उसके प्रति तटस्थ भाव न रखे उसको अपनी प्रिया बना ले उसके प्रति पक्षपातपूर्ण बन जाय तो उसकी प्रजा का सन्तप्त होना स्वाभाविक है।

फिर भी, अन्य अनेक प्रतीकात्मक पौराणिक कथाओं के समान प्रजापति, ब्रह्मा द्वारा अपनी दुहिता वाक या सरस्वती से बलात्कार की यह कथा पुराणों में रोचकता और रसिकता से कही गयी है।

शिव पुराण[5] में यह कथा आती है कि ब्रह्मा के मुख से एक अत्यन्त सुन्दरी स्त्री उपजी जिसका नाम उन्होंने सन्ध्या रखा। उसको देख ब्रह्मा को कामवासना उपजी। उसके दस मानस पुत्रों—मरीचि अत्रि अंगिरस, पुलस्त्य, पुलह, क्रतु, भृगु वसिष्ठ सुर ऋषि और दक्ष—ने निषेध किया, किन्तु कामी तो बुद्धिहीन होजाता है। ब्रह्मा ने सन्ध्या को पकड़ कर उससे मैथुन करना चाहा, तभी शिव प्रकट हो गये और उन्हें धिक्कार उनके वेदपाठी होने पर लानत दी। शिव की कृपा से ब्रह्मा वह कुकर्म करने से बच गये। बाद में सन्ध्या पितरों से गर्भवती हुई।

---

१ महाभारत शान्तिपर्व १२१।२४

२ सभा च या समितिश्चावतां प्रजापतेर्दुहितरौ संविदाने।
येन संगच्छा उपमा स शिक्षाच्चारु वदानि पितरः संगतेषु ॥
—अथर्ववेद ७।१२।१

३ महाभारत शान्तिपर्व १२१।२४

४ वही शान्तिपर्व १२१ ३५

५ शिव पुराण द्वितीय खण्ड अ १

ब्रह्मा के इस कुकर्म म प्रवत्त होने का कारण यहाँ यह दिया है कि जसे ही सध्या के अपूव सौन्दय को देखकर ब्रह्मा के मन म कामवासना उत्पन्न हुई, वसे ही एक सुन्दर कुमार उनके शरीर से उत्पन्न हुआ। उसने ब्रह्मा से अपना नाम और काम जानना चाहा। ब्रह्मा ने उसका नाम 'मन्मथ' रखा और उसे वरदान दिया कि सारा ससार उसके प्रभाव म रहेगा। मन्मथ ने उस वरदान का प्रभाव पहले ब्रह्मा पर ही आजमाना चाहा। उसने उसकी पुत्री सध्या को पास ही खडा देख एक बाण ब्रह्मा पर मारा और दूसरा बाण सध्या के हृदय पर। दोनो परस्पर काममोहित हो गये। ब्रह्मा न सध्या को पकडना चाहा। तभी शिव प्रकट हुए। शिव द्वारा उस कुकर्म से विरत कर दिये जान पर ब्रह्मा ने कामदेव को शाप दिया कि तुझ शिव नेत्र की ज्वाला जला देगी। ब्रह्मा स जब उसने कहा कि इसमे मेरा क्या अपराध आपने मुझ जिस काय के लिए उत्पन्न किया था, वही काय तो मैंने किया। तब ब्रह्मा ने उसे वरदान दिया कि द्वापर म कृष्ण के पुत्र प्रद्युम्न के रूप मे तू पुन शरीरी बन जाएगा और रति को प्राप्त करेगा।

'शिव पुराण' मे ही अन्यत्र[1] ब्रह्मा ने नारद को स्वय बताया है कि पहले मेरे एक कन्या उपजी उसका नाम मैंने सध्या रखा। मेरे एक पुत्र भी हुआ उसका नाम मैंने 'मन्मथ' रखा। उसको मैंने वर दिया कि तुम तीनो लोको पर प्रबल रहोगे और सब तुम्हारे वश मे रहेगे। काम ने पहला बाण मुझ पर ही चलाया मुझसे कुकम कराना चाहा तब मैंने कामदेव को शाप दिया कि तुम शिव के तीसरे नेत्र से जला दिये जाओगे।

मत्स्यपुराण के अध्याय १८३ श्लोक १०३ मे शिव द्वारा ब्रह्मा का सिर काटे जाने की घटना का उल्लिखित होना डा० वासुदेवशरण अग्रवाल ने बताया है परन्तु 'मत्स्य पुराण' के जितने सस्करण हमे उपलब्ध हो पाये उनमे उक्त अध्याय मे ऐसी किसी घटना का उल्लेख नही मिला। १८३ वें अध्याय मे तो वाराणसी माहात्म्य का वणन है और उसकी कुल श्लोक सख्या ६३ ही है। "मत्स्यपुराण" मे अन्यत्र दो स्थलो[2] पर ब्रह्मा के अपनी पुत्री सरस्वती पर मोहित होने की घटना का उल्लेख हुआ है। किन्तु वहाँ भी शिव द्वारा ब्रह्मा का सिर काटने का उल्लेख नहीं आया। 'मत्स्यपुराण' के अध्याय ३ म कहा गया है कि ब्रह्माजी ने अपने आधे शरीर को स्त्री रूप और आधे को पुरुष रूप किया। स्त्री रूप सावित्री को ही शतरूपा कहते हैं। और इसी को गायत्री और ब्रह्माणी भी। ब्रह्माजी अपनी देह से उत्पन्न उस स्त्री को आत्मजा मानने लगे।[1] ब्रह्मा उसके अद भुत सुन्दर रूप को देखकर कामपीडित हुए। वसिष्ठादि जो ब्रह्मा के पुत्र थ, वे सरस्वती को अपनी बहिन समझने लगे। ब्रह्माजी अपने पुत्रो की ओर दखना छोड बारम्बार अपनी आत्मजा को ही देखने लगे। सरस्वती अपने पिता की प्रदक्षिणा करने लगी। पुत्रो की उपस्थिति से लज्जित हो ब्रह्मा जी ने अपना एक मुख पीछे की ओर भी कर

---

१ शिवपुराण ततीय खण्ड अ ३४

२ मत्स्य पुराण अ ३।३ ४ और अध्याय ४।१ २१

३ वही ३।३० ३२

लिया। ब्रह्मा जब बहुत कामातुर हो गये, तब सरस्वती के ही समान रूप वाली एक दूसरी स्त्री उनमें उत्पन्न हो गयी। सृष्टि रचने के लिए ब्रह्मा ने जो कठोर तप किया था वह अपनी पुत्री के साथ सम्भोग की इच्छा व्यक्त करने से नष्ट हो गया था। ब्रह्मा के एक पांचवां मुख ऊपर की ओर और उत्पन्न हो गया। ब्रह्मा ने उस मुख को अपनी जटाओं से ढँक लिया।[1]

'मत्स्य पुराण' के अध्याय ४ की कथा में इस कथा से इतनी ही भिन्नता है कि उसमें कामदेव का प्रसंग भी आ जुड़ा है। मत्स्यावतारी विष्णु मनु से कहते हैं कि ब्रह्मा से गायत्री उत्पन्न हुई है। जहां ब्रह्मा हैं वहीं सरस्वती भी हैं, और जहाँ सरस्वती हैं वहां ब्रह्मा भी। सरस्वती या गायत्री ब्रह्मा के पास से कभी नहीं हटती। ब्रह्मा वेद की राशि हैं और गायत्री वेद का अधिष्ठात्री, अतः गायत्री के साथ समागम करने में ब्रह्मा को कुछ दोष नहीं है।[2] ऐसा होने पर भी प्रजापति ब्रह्मा अपनी पुत्री के साथ संगम करने से बड़े लज्जित हुए और क्रोध में उन्होंने कामदेव को यह शाप दिया कि चूंकि तूने मेरा भी मन अपने बाणों से चलायमान कर दिया इसलिए तुझे शिवजी भस्म करेंगे।[3] तत्पश्चात कामदेव ने ब्रह्मा से कहा कि पिता आपने ही तो कहा था कि मुझे जैसे बन स्त्री पुरुषों के मन को बिना किसी विचार के चंचल कर देना है। मैंने यही किया, फिर आपने मुझे शाप क्यों दिया? तब ब्रह्मा ने कामदेव पर प्रसन्न होकर कहा कि वैवस्वत मनु के अंत में मेरा अंश लेकर यादव कुल में कृष्ण पैदा होंगे, तू उन्हीं का पुत्र होगा।[4]

उपर्युक्त सभी कथा रूपों में शिव द्वारा ब्रह्मा की हत्या करने का कोई उल्लेख नहीं मिलता।

शिव द्वारा ब्रह्मा का एक सिर काट लेने का उल्लेख 'पद्म पुराण'[5] में हुआ है, किंतु उसका कारण भिन्न है। प्रसंग यों है कि ब्रह्मा का पांचवां मुंह ऊपर की ओर होने के कारण उनमें रजोगुण रूपी अहंकार का प्रवेश हुआ। ब्रह्मा समझने लगे कि मेरे समान अन्य कोई नहीं है, मैंने ही सृष्टि की रचना की है। ब्रह्मा के पंचम मुख के कारण सभी देवता हततेज हो गये। फिर देवों ने शंकर से प्रार्थना की। शंकर ने उनकी प्रार्थना पर अपने बायें अँगूठे के नखाग्र से ब्रह्मा के पाँचवें सिर को काट डाला।[6] ब्रह्मा का पांचवां मुख नष्ट हो जाने पर देवता बहुत प्रसन्न हुए उन्होंने शिव की स्तुति की।

किंतु शिव को तो ब्रह्म हत्या का पातक लग ही गया और उसके कारण

१ मत्स्य पुराण ३।३३।४०
२ वही ४।७ १०
३ वही ४ ९ १२
४ वही ४।१३ १८
५ पद्म पुराण सृष्टि खण्ड १४
६ वही सृष्टि १४।१ ७ १११

उनका सारा शरीर काला पड गया शरीर से शव की-सी दुर्गन्ध आने लगी और उनके आभूषण लोहे के हो गये।[1] शिव ब्रह्मा के पास गये, उनकी आराधना की और उनसे पूछा कि यह ब्रह्म हत्या का पाप अब कैसे छूटे ? ब्रह्मा ने कहा कि विष्णु के पास जाओ वही कोई उपाय बतायेंगे। तब शिव विष्णु के पास गये, उनकी आराधना की। विष्णु ने ब्रह्म हत्या के पाप की जघन्यता बताते हुए उनसे कहा कि आप सम्पूर्ण शरीर मे भस्म लगाइये, काना और हाथो मे हड्डियों को धारण कीजिये तब आपका यह कष्ट मिटेगा। जिस स्थान पर ब्रह्मा का सिर काटा गया वह कपालमोचन तीर्थ हुआ। वह वरणा और असी (वाराणसी) के बीच का क्षेत्र है।

इस कथा से यह पता चलता है कि शिव द्वारा ब्रह्मा की हत्या का कारण केवल सरस्वती के साथ उनका दुराचरण ही न था अपितु उनका पचमुख होकर देवताओं को निस्तेज कर देना और रजोगुण होकर अहकारी बन जाना भी था।

'स्कन्द पुराण'[2] मे भी यह कथा आयी है किन्तु कुछ भिन्न रूप मे। उसमे शिव को ब्रह्म हत्या लगने और उससे मुक्ति के लिए उनके विष्णु के पास जाने का वर्णन नही आता। उसका रूप यों है—प्राचीन काल मे समुद्र मे सब कुछ स्थावर और जगम समा गये, न अग्नि रहा, न वायु न सूर्य रहा न पृथ्वी न आकाश न नक्षत्र न चन्द्र न सूर्य, न देव न असुर न पिशाच न राक्षस न नदी न झील—कुछ भी न रहा। बस, रह गया एक महाकाल। महाकाल ने एक दिन एक काष्ठ देखा। वे सृष्टि रचने के निमित्त उसी काष्ठ को अपने दायें हाथ की तर्जनी से मथने लगे। मथने से वहाँ एक बुदबुद उत्पन्न हुआ। उसे महाकाल ने हाथ से फोड दिया तो उसके दो दल हो गये। एक पृथ्वी हुआ और दूसरा दल तारकादि समन्वित ऊर्ध्वाकाश। इन दोनों के बीच मे पाँच मुख और चार हाथों वाले ब्रह्मा उत्पन्न हुए। ब्रह्मा को किसी ने यह कहा कि तुम सृष्टि रचो। किसने कहा यह ब्रह्मा ने नही जाना। ब्रह्मा ने महाकाल (शिव) की आराधना आरम्भ की। शिव प्रसन्न हुए। उन्होंने कहा—वर माँगो! ब्रह्मा ने कहा कि आप मेरे मानस पुत्र बनें। शिव ने कहा कि चूंकि तुम मुझे अपना मानस पुत्र बना रहे हो और यह एक ऐसी चीज है, जो तुम्हे माँगनी नही चाहिए थी इसलिए मैं किसी कारण से तुम्हारा सिर काटूंगा। फिर परमेश्वर (शिव) ने कहा कि मेरे ही अंश से नीललोहितवर्ण रुद्र तुम्हारे मानस पुत्र होंगे।

ब्रह्मा ने वर और शाप दोनो साथ साथ पाने के बाद अपने तेज से अग्नि उत्पन्न की जिससे उनके ललाट पर पसीना आया। वह स्वेद बिन्दु जब गिरा तो वह नील-लोहित वर्ण का रुद्र बन गया। रुद्र के पाँच मुख और एक एक मुख मे तीन तीन आँखें होने से पन्द्रह नेत्र थे सर्प का यज्ञोपवीत था सिंहचर्म का अधोवस्त्र उन्होंने पहन रखा था। ब्रह्मा ने सनकादि मरीचि, दक्ष प्रभृति मानस पुत्रों को उत्पन्न किया। तदुपरान्त

---

१ पद्म पुराण सृष्टि अ० १४।१५५
२ स्कन्द पुराण अवन्ती खण्ड अ० २

सुरो गंधर्वो यक्षों, मनुष्यो आदि का सृजन किया। यद्यपि सुरों आदि को ब्रह्मा ने उत्पन्न किया था किन्तु उन्होने उत्पन्न होते ही केवल रुद्र को प्रणाम किया। ब्रह्मा ने इससे अपने को अपमानित अनुभव किया। ब्रह्मा ने रुद्र को हिमालय पर भेज दिया। रुद्र वहीं चले गये जहाँ परमेश्वर (शिव) थे।

तत्पश्चात ब्रह्मा रजोगुणी हो गये। उन्हे इस बात का अभिमान हो गया कि मैंने ही सारी सृष्टि रची है, मेरे समान दूसरा देवता है ही कौन ? ब्रह्मा के चार मुखो से चार वेदों और पाचवें मुख में सांगोपांग इतिहास का प्रवर्तन हुआ। पांच मुख होने से ब्रह्मा का तेज इतना अधिक बढ गया कि सूर्य का प्रकाश भी उसके सामने कुछ न था। ब्रह्मा के सभी मानस पुत्र हतचेतस होकर उद्विग्न हुए। ब्रह्मा के तेज से निस्तेज हुए देवताओ ने महेश्वर की शरण ली, उनकी स्तुति की। महेश्वर प्रसन्न हुए। देवताओं ने अपना दुःख निवेदन किया। उनको लेकर परमेश्वर ब्रह्मा के पास आये। महेश्वर के एक अट्टहास से ब्रह्मा विमोहित हो गये और महेश्वर ने अपने बायें हाथ के अँगूठे के नखाग्र से ब्रह्मा का पाँचवा सिर काट लिया। उनके कटे शिर को हाथ में लेकर भगवान शशिशेखर उसे उछाल उछालकर नाचने लगे। देवताओं ने उनकी स्तुति की।

(२) शिव द्वारा कामदेव की हत्या

'रामायण' तथा 'महाभारत' मे शिव द्वारा कामदेव के दहन का प्रसग नही वर्णित है।

'ब्रह्म पुराण' में इसका उल्लेख आया है। ३८ वें अध्याय के अनुसार शिव तपस्या करते थे। इन्द्रादि देवताओं ने कामदेव को शिव के मन में कामोत्तेजन करने के लिए भेजा ताकि देवताओ को शिव के वीर्य से उत्पन्न एक कुमार प्राप्त हो जो तारकासुर दैत्य के साथ उनके युद्ध मे उनका सेनापतित्व कर सके। कामदेव शिव के मन को चंचल करने की चेष्टा करता है। शिव अपने तृतीय नेत्र से उसे भस्म कर देते हैं।[1] विधवा रति विलाप करती है। शिव उसको वरदान देते हैं कि 'कामदेव अशरीरी होकर वे सारे कार्य करेगा, जो पहले शरीरी रहकर करता था। जब विष्णु भगवान वसुदेव के पुत्र के रूप में पृथ्वी पर अवतार लेंगे, तब यह उनके पुत्र के रूप मे देह धारण करेगा।'[2] कामदेव को क्षार करने के उपरान्त शिव अपनी अर्द्धांगिनी पार्वती के साथ हिमालय पर्वत पर कर्णिकार वन में नदी तीर पर और अन्य अन्य स्थानों पर रमण करते हुए घूमने लगे।[3]

'ब्रह्म पुराण' के ७१ वें अध्याय में यह कथा संक्षेप में वर्णित है। यहाँ बृहस्पति की आज्ञा से कामदेव शिव के सामने जाता है। ३८ वें अध्याय की ही तरह यहाँ भी शिव की तृतीय नेत्राग्नि से कामदेव का दहन होता है।

---

1 ब्रह्म पुराण अ० ३८ तथा ७१
2 वही अ० ३८।४३
3 वही अ० ३८।१०-११

'पद्म पुराण'[1] में उल्लिखित काम दहन कथा में 'ब्रह्मपुराण' की कथा की अपेक्षा इतनी ही विशेषता है कि यहाँ तारकासुर ने ब्रह्मा से अवध्य होने का वरदान ले लिया है। सात दिन के बालक को छोड़कर वह अन्य किसी से नहीं मारा जा सकता। ब्रह्मा देवताओं को बताते हैं कि केवल शिव से उत्पन्न बालक में ही यह शक्ति है जो यह कार्य कर सके। समस्या यह उपस्थित हुई कि शिव तो सती के वियोग को भूलने के लिए घोर तपस्या में लीन हैं दूसरा विवाह भी उन्होंने नहीं किया है। उधर पार्वती के पिता हिमालय के पास जाकर नारदजी यह कह ही आये थे कि इस कन्या के पति शिव होंगे। परन्तु जब तक शिव के मन में काम विकार न उत्पन्न हो उनका और पार्वती का विवाह कैसे हो? उनके चित्त को चंचल कैसे किया जाय? नारदजी के परामर्श पर इन्द्र ने कामदेव को बुलाया। अपना मन्तव्य कहा। कामदेव भयभीत तो हुआ, पर चला गया। शिव के कान के मार्ग से वह उनके मन में प्रविष्ट हो गया। शिव को अचानक कामावेग हुआ और सती से संयोग की इच्छा उन्हें हो आयी, पर सती अब कहाँ? उन्हें योग बल से पता चला कि उनके चित्त के क्षोभ का कारण कामदेव है। उन्होंने उसे अपने शरीर से बाहर निकाल दिया और पुनः तप में लीन हो गये। परन्तु कामदेव ने फिर खीचकर अपना पुष्पबाण मारा। अबकी बार शिव ने अपना तृतीय नेत्र खोलकर जो देखा तो कामदेव क्षार हो गया। रति ने विलाप किया। शिव के इस आश्वासन पर कि अनंग होकर भी कामदेव सारे कार्य पहले की भाँति ही करेगा, रति संतुष्ट होकर चली गयी किन्तु पति वियोग के कारण वन के एकान्त में फिर विलाप करने लगी। उधर से हिमालय पार्वती का विवाह प्रस्ताव लेकर अपनी पत्नी मेना और कन्या पार्वती-सहित शिव के पास ही आ रहे थे। रोती हुई रति से उन्होंने पूछा कि तुम क्यों रो रही हो? रति ने काम के भस्म हो जाने का वृत्त बतलाया। यह सुनकर हिमालय बहुत निराश हुए। पार्वती के साथ घर लौटने को हुए किन्तु पार्वती ने कहा कि मैं अब नहीं लौटूंगी, घोर तप द्वारा ही शिव को वरूंगी।

शिव पुराण[2] की कथा 'ब्रह्म पुराण' की कथा से बहुत मिलती-जुलती है। यहाँ भी पार्वती से विवाह हो जाने के बाद की यह घटना है 'पद्मपुराण' की भाँति पार्वती विवाह के पूर्व की नहीं। जब कामदेव अपना पुष्पबाण शिव पर मारता है तब पार्वती उनके सम्मुख ही सेवा रत होती हैं अतः शिव पार्वती के अंगों की प्रशंसा करने लगते हैं। वे पार्वती का हाथ पकड़ने की चेष्टा करते हैं पर पार्वती लज्जावश पीछे हट जाती हैं। शिव अपनी बाधा और कामदेव को छिपा देखकर उसे अपने तीसरे नेत्र से भस्म कर देते हैं। 'ब्रह्म पुराण' की ही भाँति शिव कामदेव को कृष्ण पुत्र प्रद्युम्न के रूप में शरीर धारण करने और रति को प्राप्त करने का वर देते हैं।

---

१ पद्म पुराण सृष्टि खण्ड अ० ४३।२ २ २६१

२ शिव पुराण रुद्रीय खण्ड अ० ३४

'भविष्य पुराण'[1] में कथा है कि हिमालय ने पार्वती को तपस्या रत शिव की सेवा में नियुक्त कर रखा था। कामदेव ने शिव पर उन्मादन बाण चलाया। शिव ने तृतीय नेत्र से कामदेव को भस्म कर दिया। रति के विलाप करने पर पार्वती को दया आयी। वह शिव से बोली कि मेरे कारण बेचारे कामदेव की यह दशा हुई है अतः इसे जीवन-दान दें। शिव ने कहा—वह चैत्र शुक्ला त्रयोदशी को प्रतिवर्ष एक बार जीवित होगा उस दिन पूजन करनेवाले सुखी रहेंगे। भविष्य पुराण की कथा में कोई नवीन तत्त्व नहीं है।

'ब्रह्मवैवर्त्त पुराण'[2] में वर्णन है कि पार्वती को सुन्दर वर प्राप्ति का वर देकर जब शिव पुनः ध्यान मग्न हो गये, तब इन्द्र की आज्ञा से कामदेव उनका तप भंग करने के लिए आया। कामदेव ने उन पर शक्र बाण छोड़ा। शिव के कपाल स्थित तृतीय नेत्र से अग्नि निकली और उसने कामदेव को भस्म कर दिया। रति ने बहुत विलाप किया। देवताओं के कहने से उसने तपस्या की। कामदेव का भस्म हुआ जान पार्वती भी तपस्या करने चली गयी। उन्होंने कठोर तप किया। बालक रूप में शिव ने दर्शन दिया और उनसे अपने घर जाने को कहा। पार्वती पिता के घर गयी। 'लिंग पुराण'[3] और 'स्कन्द पुराण'[4] में भी यह कथा इससे मिलते जुलते रूप में वर्णित है।

(४२) शिव का कामदेव से हार जाना

पुराणों में जहाँ जहाँ काम दहन का उल्लेख हुआ है वहाँ वहाँ शिव के कामजयी होने का ही संकेत मिलता है। शिव ने कामदेव पर क्रुद्ध होकर उसे भस्म कर दिया किन्तु 'पद्म पुराण'[5] में यह उल्लेख है कि सती के वियोग दुःख को भुलाने के लिए शिव जब घोर तपस्या में लीन थे तब देवताओं के द्वारा प्रेषित कामदेव ने कान के मार्ग से प्रविष्ट होकर उनके मन को चंचल कर दिया। शिव के मन में अचानक कामावेग होता है और नारी समागम की इच्छा उन्हें हो आती है। यह काम दहन से पूर्व की स्थिति है। इसे कामदेव के सामने उनका हार जाना माना जा सकता है यद्यपि यह हार क्षणिक थी क्योंकि दूसरे ही क्षण शिव ने अपने मन की चंचलता के मूल कारण कामदेव को अपनी क्रोधाग्नि से भस्म कर दिया। 'श्रीमदभागवत पुराण'[6] में काम के वशीभूत शिव के मोहिनी पर मोहित हो जाने की कथा आयी है। उसमें भी कामदेव के आगे उनका हार जाना माना जा सकता है।

---

१ भविष्य पुराण उत्तरार्द्ध अ० १२३ १२४
२ ब्रह्मवैवर्त्त पुराण कृष्ण-जन्म खण्ड अ० ३९
३ लिंग पुराण अ० १०१
४ स्कन्द पुराण माहेश्वर खण्ड अ० २१
५ पद्म पुराण सृष्टि खण्ड अ० ४५।२०५ २६६
६ भागवत पुराण अ० ८।१२

(४३) शिव के द्वारा अन्धकासुर का वध

'महाभारत'[1] मे शिव के द्वारा अधकासुर वध का एक श्लोक म उल्लेख मात्र मिलता है किन्तु 'हरिवश पुराण'[2] मे इसकी कथा विस्तार से दी हुई है। पहले अधकासुर की उत्पत्ति और कश्यप द्वारा उसको दिये हुए वरदान का उल्लेख है फिर उसके अत्याचारो और शिव द्वारा उसके वध का वणन। कथा इस प्रकार है—जब विष्णु द्वारा दत्य माता न्दिति के सब पुत्र मारे गय तब उन्होने अपने पति मुनि कश्यप की आराधना की। कश्यप के प्रसन्न होने पर दिति ने यह वर मागा कि उसक ऐसा पुत्र पदा हो जो दवताओ क लिए अवध्य हो। कश्यप ने यह वर दे दिया पर एक शत भी लगा दी कि देवाधिदेव रुद्र इस वरदान के प्रभाव से बाहर होगे[3] ऐसा कह कश्यप ने अपनी अगुली से दिति के उदर को स्पश कर दिया। दिति क गभ से एक ऐसा असुर पदा हुआ जिसकी एक हजार भुजाए उतने हो मस्तक दो सहस्र नेत्र और उतने ही चरण थे। वह अधा नही था पर अधे की तरह झूमता हुआ चलता था अत लोग उस अधक कहकर पुकारने लगे।[4]

अपने बल से मदान्मत्त हो अधकासुर ने देवताओ ऋषियो और ब्राह्मणो पर अत्याचार ढाना आरम्भ किया। पहले तो इन्द्र ने अपने पिता कश्यप से अपन मौसेरे भाई अधक के अत्याचारो की शिकायत की। कश्यप के मना करने पर अधक कुछ समय के लिए मान भी गया पर जब फिर उसक अत्याचार आरम्भ हुए तब बृहस्पति की सलाह पर नारदजी को भगवान रुद्र (शकर) के पास भजा गया।[5] नारद जी ने रुद्र से अधकासुर के अत्याचारो का वणन किया और उसका वध करन के लिए उन्हे तयार कर लिया। लौटते समय मदराचल पर स्थित शिव के मदारवन से व सन्तान पुष्पो की सुगन्धित माला भी पहनते आय और सीधे वहाँ पहुच जहा अधकासुर रहता था। अधकासुर ने माला के पुष्पो की सुगध स आकर्षित होकर नारद स उन पुष्पो की उत्पत्ति के स्थान का पता पूछा। नारद ने जान बूझकर मदराचल पर स्थित शिव के उपवन का पता बता दिया। अधकासुर वहा पहुचा। मन्दराचल देवता रूप म मूर्तिमान हो उसक सामने प्रकट हुआ। अधक ने अपना बल दिखाने के लिए मदराचल के एक शिखर का उखाडकर दूसरे शिखर पर दे मारा दोनो चूर चूर हो गये। किन्तु शिव की माया स तोड हुए पत्थर उसकी असुर सेना का ही विनाश करने लगे। स्वय शिव भी अपना त्रिशूल लेकर आये और उन्होने उस असुर का क्षण मात्र म अपने त्रिशूल

---

१ महाभारत अनशासन पर्व अ १४।२१४
२ हरिवश पुराण विष्णु पव अ ८५ ८६
३ वही विष्णु अ० ८५।६ ८
४ वही विष्णु अ० ८५।६ ११
५ वही विष्ण अ ८६।३८ ३६

से वध कर दिया।[1]

'पद्म पुराण'[2] की कथा मे केवल इतना ही उल्लेख है कि अन्धक पार्वती को अवसर पाकर हर ले जाने की इच्छा रखता था। यहाँ कथा का रूप यह है—अन्धकासुर के अत्याचार से इन्द्रादि देवता दुखी थे। इन्द्र ने उसके पर-स्त्री लोभी पुत्र कनककामी को मार डाला। अन्धकासुर और भी क्रुद्ध हो गया। इन्द्र ने शिव से उसे मारने की प्रार्थना की। शिव देवताओं को ले अन्धक को मारने पहुचे। युद्ध शुरू हुआ। अन्धक के प्रहार से पहले शिव मूर्च्छित हो गये। फिर उन्होंने त्रिशूल से आक्रमण किया। तब अन्धक के रक्त से अन्धकों की उत्पत्ति हुई। शिव ने मातृका, माहेश्वरी, ब्राह्मी, गौरी, वाडवी सौवर्णी आदि शक्तियाँ उत्पन्न की। उन्होंने अन्धक का सारा रक्त पी लिया। शिव के त्रिशूल पर टगा रहकर उसने कई वर्षों तक शिव की दिव्य स्तुति की। प्रसन्न होकर शिव ने उसे भृगीरिटी नामक गणेश बना दिया।

'शिव पुराण'[3] मे इस कथा मे कुछ नवीन तत्त्व जुड़े हैं (१) अन्धक को उसकी माता ने शिव की आराधना करने को कहा। अन्धक ने तपस्या की। शिव प्रसन्न हुए। वर माँगने को कहा। अन्धक ने वर माँगा कि मैं सिवा आपके किसी के हाथ से न मारा जाऊँ। शिव ने 'तथास्तु' कह दिया और कहा कि "जब तक तू कुकर्म करके मुझको अप्रसन्न न कर देगा, तब तक मैं तुझ पर क्रोध नही करूँगा।

(२) शिव से वरदान पाकर अन्धक अभय हो गया। उसने इन्द्र से माग की कि सभी अप्सराएँ ऐरावत उच्चैश्रवा आदि मेरे हवाले करो। इन्द्र ने उस पर वज्र का प्रहार किया किन्तु अन्धक ने अपने त्रिशूल तथा गदा से प्रहार कर इन्द्रादि देवताओं को इन्द्रलोक से भगा दिया। *अपनी माता दिति का वहीं ले जाकर वह वहाँ शासन* करने लगा।

(३) तब देवता विष्णु की शरण गये। विष्णु शिव के पास पहुँचे। शिव ने कहा कि जब तक अन्धक ब्राह्मणों का और मेरा कोई अनिष्ट नहीं करता, तब तक मैं उसका वध नही करूँगा। विष्णु शिव के पास से अन्धक के पास आये और उससे बोले कि हम तुम्हारी वीरता से बहुत प्रसन्न हैं, वर माँगो। अन्धक ने अहकार मे कहा कि हम वर मागते नही, वर देते है तब विष्णु ने उससे वर माँगा कि तुम शिव की भक्ति छोड़कर स्वय शिव बनकर विहार करो।

(४) अन्धक ने अपने को ही शिव प्रसिद्ध कर दिया। दिग्पालों की नियुक्तियाँ तक करने लगा। नारदजी ने शिव के पास जाकर अन्धक की इन करतूतो का समाचार दिया। शिव ने नारद से कहा कि तुम मदार-पुष्पों की माला पहनकर अन्धक के पास जाओ और ऐसा करो कि वह मेरे सामने क्रोधित होकर आ जाय।

---

१ हरिवंश पुराण विष्णु पर्व अ ८६।३२ ३३
२ पद्म पुराण सृष्टि खण्ड अ ४८
३ शिव पुराण पचम खण्ड अ० ४० ४७

(५) तब नारद अंधकासुर के पास पहुचे अंधकासुर ने मन्दार पुष्पों के विषय म जिज्ञासा की फिर मन्दराचल पर आकर विनाश लीला की। शिव के गणों से युद्ध होने आदि की घटनाए 'हरिवंश पुराण' के समान ही हैं।

(६) जब अंधक ने शिव के सब गणो को हराकर भगा दिया तब शिव स्वय त्रिशूल लेकर आये। अंधक ने शिव की छाती म मुक्का मारा। शिव मूच्छित हो गये। तब चामुण्डा प्रकट हुई। अंधक ने अपना त्रिशूल चामुण्डा पर भी ताना। उसकी इस धृष्टता पर शिव को क्रोध आया उन्होंने अपने त्रिशूल से अंधक को छेद दिया उसका सारा रक्त चू गया। अंधक ने स्तुति की और शिव ने प्रसन्न होकर उसे अपने गणो म मिला लिया।

वाराह पुराण'[1] की अंधक-वध-कथा म 'हरिवंश' और 'शिव पुराण' की कथा से कुछ भिन्नताएँ हैं। वे ये हैं—

(१) देवतागण अंधक के अत्याचार से सन्त्रस्त होकर ब्रह्मा के पास जाते हैं। ब्रह्मा कहते हैं कि मैंने उसे वर दे दिया है कि वह किसी के द्वारा स्पर्शित होकर पृथ्वी पर नहीं मरेगा। ब्रह्मा बताते हैं कि शिव के अतिरिक्त और कोई उसे नहीं मार सकता।

(२) देवतागण ब्रह्मा को आगे करके शिव के पास पहुँचे। अंधक के अत्याचारों का रोना रोया। संयोग से अंधक भी वहाँ पहुच गया। शिव के पास पार्वती को खड़ा देख उसने पार्वती को मारना चाहा। बस, लड़ाई छिड़ गयी। रुद्र (शिव) ने वासुकि तक्षक तथा वीरभद्र को आक्रमण करने के लिए प्रोत्साहित किया। नारद द्वारा समाचार पाकर विष्णु भी गये। किन्तु अंधक ने सब देवताओं को मार मार कर भगा दिया। अन्त म शिव से उसका युद्ध छिड़ा। शिव ने अपने त्रिशूल से अंधक को छेद दिया पर आश्चर्य कि जितने बूंद उसका खून गिरता था, उतने ही अंधक पैदा होते जाते थे। तब विष्णु ने अपने चक्र से अंधकों का संहार करना आरम्भ किया किन्तु उनका अन्त ही न होता था। फिर रुद्र ने क्रोध किया। उनके क्रोध से अष्टमातृकाओं की उत्पत्ति हुई। उन्होंने अंधक के गिरते रक्त को पीना आरम्भ किया। इस प्रकार अंधक का सारा रक्त उन्होंने चाट लिया। अंधक ने भी अपनी आसुरी माया त्याग दी और शिव ने उसे अपना गण बना लिया।

'स्कन्द पुराण'[2] म शिव द्वारा अंधकासुर को अवध्यता का वरदान प्राप्त होना अंधक का निर्भय और उच्छृंखल होकर स्वर्गलोक पर आक्रमण करना, इन्द्राणी (शची) का हरण करना शिव का अंधक से युद्ध करना अंधक के रक्त से अनेक अंधकों की उत्पत्ति होते देख शिव का चण्डी को स्मरण करना चण्डी का प्रत्यक्ष होकर अंधक का रक्तपान करना आदि घटनाओं का वर्णन हुआ है।

---

१ वाराह पुराण, अ० २७

२ स्कन्द पुराण अवन्ती खण्ड के अन्तर्गत रेवाखण्ड अ० ४५ ४६

'कूर्म पुराण'[1] में अंधकासुर उस समय मन्दराचल पर पहुँचता है जब वहाँ पार्वती अकेली होती है। शिव ने इसे जान लिया और काल रूप धरकर वहाँ आ गये। शिव और अंधक में युद्ध हुआ। बाद की कथा वाराह पुराण के अनुसार है।

'मत्स्य पुराण'[2] में अंधकासुर-वध की कथा में भी कुछ नवीन तत्त्व आ जुड़े हैं (१) इसमें अंधक जन्म की कथा नहीं दी गयी है (२) उसे किसी ने वरदान नहीं दिया है, वह स्वयं अपने तप के प्रभाव से ही किसी के लिए भी अवध्य बन गया है। (३) शिव पार्वती को क्रीडा-रत देखकर वह पार्वती को हरना चाहता है। महादेव जी और अंधक का घोर युद्ध होता है। (४) युद्ध मंदराचल पर नहीं हुआ, वरन् उज्जैन के पास महाकाल वन में। (५) महादेव के क्रोध करने पर दिव्य पाशुपतास्त्र उत्पन्न हुआ। शिव ने उससे अंधक को मारा। अंधक की रक्त बूंदों से सैकड़ों दैत्य उत्पन्न होते हैं। शिव ने उनका रुधिर पीने के लिए १९१ मातृकाओं की सृष्टि की। मातृकाओं ने उसका रुधिर पीना आरम्भ किया। जब मातृकाएं भी रक्त पीती पीती छक गयीं तब फिर उसके रुधिर से दैत्य बढ़ने लगे। तब शिव विष्णु की शरण गये। विष्णु ने क्रोध करके शुष्करेवती को उत्पन्न किया। उसने अंधक का सारा रुधिर पीकर उसे शुष्क कर दिया। तब शिव ने अपने त्रिशूल पर उसे चढ़ा लिया। अंधक ने शिव की स्तुति की। शिव ने उसे अपना लोक देकर गणों का अधिपति बना दिया।

'कथासरित्सागर'[3] में भी यह कथा संक्षेप में आयी है। वहाँ अंधक शिव की अनुपस्थिति में पार्वती को हरने के लिए आता है किन्तु शिव के गणों ने उसका सामना किया और उसे भगा दिया। शिव ने योग दृष्टि से उसकी कुचेष्टा को जानकर परवर्ती अंधकासुर का वध कर दिया और लौटकर पार्वती को सब हाल बता दिया।

(४४) शिव का त्रिनेत्र और योगीश्वर होना

'महाभारत'[4] में शिव के तीसरे नेत्र का उल्लेख इस प्रसंग में आता है—एक बार शिव हिमालय पर तपस्या कर रहे थे। जिस पर्वत शिखर पर शिव रहते थे, उसी के पार्श्ववर्ती दूसरे शिखर पर पार्वती भी उत्तम व्रतों का पालन करती हुई रहती थी। एक दिन पार्वती शिव से मिलने आयीं पर आयीं बहुत चुपके से। आते ही उन्होंने विनोद करने के लिए अपने अपने दोनों हाथों से शिव के दोनों नेत्र बन्द कर लिये। उनके दोनों नेत्रों के आच्छादित होते ही सारा जगत अंधकारमय और

१ कूर्म पुराण अ० १६।१३१ २२२

२ मत्स्य पुराण अ० १७८।२ ३६

३ कथासरित्सागर सोमदेव (अनु० गोपालकृष्ण कौल, प्रका० सस्ता साहित्य प्रकाशन नयी दिल्ली १९९६ सत्रहवें खण्ड में पद्मावती की कथा के अन्तर्गत)।

४ महाभारत अनुशासन पर्व अ० १४०

चेतनाशून्य हो गया[1] किन्तु तत्काल ही भगवान् शिव के ललाट से अत्यन्त दीप्तिशालिनी ज्वाला प्रकट हो गयी। उनके ललाट मे सूर्य समान तेजस्वी तीसरे नेत्र का आविर्भाव हो गया। वह नेत्र प्रलयाग्नि के समान देदीप्यमान हो रहा था। उस नेत्र से प्रकट हुई ज्वाला ने उस पर्वत को जलाकर मथ डाला। सारे हिमालय पर्वत पर प्रलयाग्नि धधक उठी।[2] यह दृश्य देखकर पार्वती घबरा गयीं और शिव की शरण गयीं। शिव ने प्रसन्न होकर पर्वत की ओर देखा। उनकी दृष्टि पड़ते ही हिमालय पर्वत फिर अपनी पूर्व स्थिति मे आ गया।[3]

पार्वती ने शिव के तृतीय नेत्र के प्रकट होने, हिमालय के दग्ध होने और पुनः उसके हरे भरे हो जाने का कारण पूछा। शिव ने बताया कि मेरी दोनो आखो के बंद होते ही समस्त जगत का प्रकाश नष्ट हो गया। ससार से जब सूर्य अदृश्य हो गया तब मैंने प्रजा की रक्षा के लिए तृतीय तेजस्वी नेत्र की सृष्टि की। उसके तेज से यह पर्वत जल उठा और अब पुनः तुम्हें प्रसन्न करने के लिए मैंने उसे प्रकृतिस्थ कर दिया है।

पुराणो मे काम दहन प्रसग मे शिव के त्रिनेत्र होने का परिचय मिलता है पर वे त्रिनेत्र क्या हुए इसकी कथा 'महाभारत' मे ही मिलती है।

'महाभारत के अनुशासन पर्व' मे ही शिव के योगी होने का परिचय स्वयं उन्हीं के मुख से दिलाया गया है। पार्वती के यह पूछने पर कि वे चतुर्मुख क्या हैं, शिव ने उन्हे बताया कि पूर्व काल मे ब्रह्मा ने एक सर्वोत्तम नारी तिलोत्तमा की सृष्टि की थी। उन्होंने सब रत्नो के तिल तिल भर सार को लेकर उस शुभलक्षणा सुन्दरी की रचना की थी। एक बार वही तिलोत्तमा शिव की परिक्रमा करने के लिए आयी। परिक्रमा करती हुई वह जिस जिस दिशा की ओर गयी उस-उस दिशा की ओर शिव का मुख प्रकट होता गया। शिव ने पार्वती से कहा कि तिलोत्तमा के रूप को देखने की इच्छा से मै योग बल से चतुर्मूर्ति एव चतुर्मुखी हो गया। इस प्रकार मैने लोगो को उत्तम योग शक्ति का दर्शन कराया।[6]

(४५) शिव की शरण मे आकर राम का रण जीतना

शिव पुराण[7] मे एक प्रसग उल्लिखित है कि अगस्त्य मुनि के सिखाने से रामचन्द्र ने भस्म लगाकर रुद्राक्ष पहनकर शिव का ध्यान करना आरम्भ किया। रामचन्द्र

---

१ महाभारत अनु० अ० १४ ।२६ २७
२ वही अनु० अ० १४ ।२८ ३
३ वही अनु० अ० १४ ।३२ ३४
४ वही अनु० अ० १४०।३७-३८
५ वही अनु० अ०१४१।१४
६ वही अनु० १४१।४
७ शिव पुराण अष्टम खण्ड अ० ४६

की भक्ति को देख शिव प्रसन्न होकर प्रकट हुए। रामचन्द्र को अपनी गोद मे बठाकर शिव ने उनसे वर मांगने को कहा। राम ने शिव से कहा कि मैं रावण का वध करना और सीता को उसके बन्धन से छुडाकर लाना चाहता हूँ। शिव ने इस शुभ काय की सिद्धि के लिए राम को अपना धनुष और बाण दे दिया। 'अध्यात्म रामायण' मे अगस्त्य मुनि द्वारा राम को एक धनुष तथा एक अक्षय तूणीर दिये जाने का उल्लेख आता है,[1] परन्तु वे शिव प्रदत्त नही थे, अपितु इन्द्र ने राम को दने के लिए उन्हें अगस्त्य मुनि को दिया था।

'शिव पुराण'[2] म ही अयत्र प्रासगिक कथा के रूप मे यह उल्लेख आता है कि विष्णु का शिव ने वर दिया था कि रावण आपके हाथ से ही मारा जायगा। रावण मरा भक्त है, परन्तु यदि वह मेरी सवा करना छोड दे और मरे ही विरुद्ध हो जाय, ता मैं भी उसके विपरीत जा सकता हूँ। विष्णु ने यह परिस्थिति उत्पन्न करने के लिए शिव का पूजा की। शिव ने विष्णु पर प्रसन्न होकर रावण की बुद्धि भ्रष्ट कर दी। रावण ब्राह्मणो को दुख देने लगा कैलाश को उठाने का भी उसन दुस्साहस किया। विष्णु ने राम का अवतार लेकर तप करके शिव से एक प्रलयकर बाण प्राप्त किया, और इसी बाण से रावण को मारकर उन्होंने सीता को पुन प्राप्त किया।

इस प्रकार 'शिव पुराण' म विष्णु पर शिव की श्रेष्ठता प्रतिपादित करने के लिए, रावण पर विजय पाने के निमित्त राम का शिव की शरण म जाना बताया गया है।

(४६) शिव के द्वारा त्रिपुर-सहार

'महाभारत' के कण पव[3] में और अनुशासन पव[4] मे शिव के द्वारा त्रिपुर दत्य के सहार का वणन आया है।

कण पव म त्रिपुर सहार का जो वणन आया है उसमे कथा-तत्त्व की प्रधानता न होकर सष्टि के प्राकृतिक उपादानो, शक्तियो एव मनोवृत्तियो के रूपक की एक विराट कल्पना है। यहाँ उस रूपक को स्पष्ट करने का प्रयास नही किया जायगा क्योकि वह अपने आपमे तत्त्व ज्ञान सापेक्ष है, यहाँ तो उसके केवल कथा रूप को निथार कर देने का प्रयास होगा।

देवताओ और असुरो म जो सवप्रथम तारकामय सग्राम (बहस्पति की पत्नी तारा के कारण हुआ देवासुर सग्राम) हुआ, उसमे असुरो की हार हो गयी। तदुपरान्त तारकासुर के तीन पुत्रो ताराक्ष कमलाक्ष और विद्युन्माली ने उग्र तपस्या आरम्भ

१ अध्यात्म रामायण अरण्य काण्ड ३।४५ ४६
२ शिवपुराण पूर्वार्द्ध पचम खण्ड (युद्ध खण्ड) अध्याय १
३ महाभारत कण पव अ ३३ ४
४ महाभारत अनु० पर्व अ० १६०

की। तपस्या से प्रसन्न होकर ब्रह्मा ने उनसे वर माँगने को कहा। पहले तो उन्होंने वर माँगा कि हम सब भूतों से अवध्य हों, किन्तु जब ब्रह्माजी ने कहा कि अमरत्व तो सबके लिए सम्भव नहीं है, तब उन असुरों ने कहा कि हम लोग सम्पूर्ण भौतिक सुख सुविधाओं से सम्पन्न इच्छानुसार चलनेवाले तीन नगराकार सुन्दर विमान बनाकर उनमें रहना चाहते हैं। आप हमें यह वर दीजिये कि हमारे ये पुर किसी भी यक्ष, राक्षस नाग या अन्य जातियों से विनष्ट न हो सकें और न ये शस्त्रों से छिन्न भिन्न हों तथा न ब्रह्मवादियों के शापों का ही इन पर प्रभाव हो।[1] ब्रह्मा ने इनको यह वर दे तो दिया किन्तु कहा कि अपने इन त्रिपुरों के संहार का कोई निमित्त भी बताओ। तब तीनों असुरों ने कहा कि एक हजार वर्ष पूर्ण होने पर हम लोग एक-दूसरे से मिलेंगे। जब ये तीनों पुर एकत्र होकर एकीभाव को प्राप्त हो जायें तब जो व्यक्ति एक ही बाण से इन तीनों पुरों को नष्ट कर सके वही देवेश्वर हमारी मृत्यु का कारण होगा।[2] प्रसिद्ध शिल्पी मय दानव ने उन तीन पुरों का निर्माण किया। उनमें से एक सोने का, दूसरा चाँदी का और तीसरा लोहे का बना हुआ था। सोने का पुर स्वर्गलोक में स्थित हुआ चाँदी का अन्तरिक्ष लोक में और लोहे का भूलोक में। ये तीनों पुर आज्ञा के अनुसार सर्वत्र विचरने वाले थे। प्रत्येक पुर की लम्बाई चौड़ाई सौ सौ योजन थी। तीनों पुरों के राजा भी अलग अलग थे। सुवर्णमय पुर तारकाक्ष के रजतमय पुर कमलाक्ष के और लौहमय पुर विद्युन्माली के अधिकार में था। उक्त तीनों पुरों में निवास करने वाला प्रत्येक असुर भोग की अपनी मनोवांछित वस्तुएं तत्काल पा सकता था। ऐसे थे ये आसुरी माया द्वारा निर्मित त्रिपुर। रही सही कसर पूरी कर दी तारकाक्ष के पुत्र हरि ने। उसने तप करके ब्रह्माजी से वर माँग लिया कि प्रत्येक नगर में एक एक बावड़ी ऐसी हो जिसमें डालते ही मृत या आहत दैत्य भी नवशक्ति सम्पन्न होकर उठ खड़ा हो। अब असुरों को किस बात का डर था? वे लगे मनमानी लूटपाट मचाने। देवतागण उनके अत्याचार और पापाचार से त्रस्त हो उठे।

जब देवराज इन्द्र किसी प्रकार भी उन त्रिपुरों का भेदन न कर सके तब वे भयभीत होकर ब्रह्मा के पास गये और असुरों के अत्याचार का कच्चा चिट्ठा उन्हें सुनाया। सुनकर ब्रह्मा को दुःख हुआ। उन्होंने बताया कि त्रिपुरों को एक ही बाण से भेदन करने की शक्ति शिव को छोड़कर और किसी में नहीं है। ब्रह्मा को आगे करके देवतागण शिव के पास गये। उनकी स्तुति की। शिव प्रसन्न हुए तो देवताओं ने उनको अपनी दुःख-गाथा सुनायी।[3]

शिव ने देवताओं से कहा कि मैं आप लोगों का कष्ट दूर करने के लिए तो प्रस्तुत हूँ परन्तु मुझ अकेले से यह काम नहीं सधेगा। आप लोगों को भी इस कार्य में

---

१ महाभारत कर्ण पर्व अ० ३३।३ ११
२ वही कर्ण पर्व अ० ३३।११
३ वही कर्ण पर्व अ० ३३

मेरी सहायता करनी होगी। शिव उन देवताओं का आधा बल लेकर त्रिपुर वध के लिए उद्यत हो गये।[1] उनकी इच्छा से देवताओं ने उनके लिए एक दिव्य रथ बनाकर दिया। वह रथ क्या था समस्त त्रिलोकी ही उसका एक रूपक बन गया था। पर्वतों सहित पृथ्वी ही रथ बनी थी सूर्य और चन्द्रमा उसके पहिये, चारों लोकपाल उसके उत्तम घोड़े मन्दराचल उस रथ का धुरा समस्त दिशा विदिशाएं रथ का आवरण धर्म, सत्य, तप और अर्थ घोड़ों के लगाम तथा सरस्वती देवी रथ के आगे बढ़ने का मार्ग बनी थीं। पूर्वकाल में जो महादेव के यज्ञ में निर्मित हुआ हुआ था वह संवत्सर ही शिव का धनुष बना, सावित्री उस धनुष की प्रत्यंचा बनी तथा विष्णु चन्द्रमा एवं अग्नि इन तीनों से बाण का निर्माण हुआ। बाण का शृंग (गाठ) अग्नि बने उसका भल्ल चन्द्रमा हुए और उसका अग्रभाग (फलक) विष्णु। फिर देवताओं ने ब्रह्मा से अनुनय विनय कर उन्हीं को उस रथ का सारथी बना दिया। अब दिव्यास्त्रों से सज्जित हो शिव त्रिपुर वध के लिए निकले।[2]

रथ पर आरूढ़ हो जब महादेव त्रिपुर की ओर बढ़े तब नन्दी वृषभ ने आर का नाद किया। उस नाद को सुनकर देव शत्रुओं के हौसले पस्त हो गये। शिव ने जब अपने धनुष का प्रत्यंचा खींची, तब रथ डगमगा गया। विष्णु ने बाण के एक भाग से निकलकर वृषभ का रूप धारण कर उस विशाल रथ को ऊपर उठाया। शिव ने भी घोर गर्जना की। अपने धनुष की प्रत्यंचा पर पूर्वोक्त दिव्य बाण रखकर उसे शिव ने पाशुपतास्त्र से संयुक्त किया और तीनों पुरों के एकत्र होने का चिन्तन किया। काल की प्रेरणा से वे तीनों पुर तभी मिलकर एक हो गये। शिव ने अपने दिव्य धनुष को खींचकर उस पर रखे त्रिलोकी के सारभूत बाण को उन त्रिपुरों के समुदाय पर छोड़ दिया। उस श्रेष्ठ बाण के छूटते ही वे तीनों पुर छिन्न भिन्न होकर आर्तनाद करते हुए भूतल की ओर गिर पड़े। भगवान् शिव ने उनको भस्म कर पश्चिमी समुद्र में डाल दिया। इस प्रकार तीनों पुरों और उनमें रहनेवाले दानवों को महेश्वर ने दग्ध कर दिया।[3]

'महाभारत' के अनुशासन पर्व में त्रिपुर वध की कथा बहुत संक्षिप्त है। तीनों पुर स्वर्ण, रजत और लौह द्वारा निर्मित थे। यहाँ देवतागण अकेले रुद्रदेव के पास जाते हैं ब्रह्मा को अगुआ बनाकर नहीं। इसमें धनुष और बाण के संयोजक तत्त्व कर्णपर्व की कथा से भिन्न हैं। यहाँ शिव ने विष्णु को उत्तम बाण अग्नि को उस बाण का शल्य, वैवस्वत यम को बाण का पंख, समस्त वेदों को धनुष गायत्री को प्रत्यंचा और ब्रह्मा को सारथी बनाया है। तीन पर्व और तीन शल्य वाले उस बाण से रुद्र ने त्रिपुर का वध कर दिया और तीनों पुरों सहित वहाँ के समस्त असुरों को भी भस्म

१ महाभारत कर्ण पर्व अ० ३४।१४
२ वही कर्ण पर्व अ ३४।४-६६
३ वही कर्ण पर्व अ ३४।६७-११५

कर किया।[1]

'हरिवंश पुराण'[2] में भी त्रिपुर वध की कथा वर्णित है। इसके अनुसार दैत्यों के आकाश में विचरने वाले बहुमूल्य धातुओं से निर्मित जो वृहद पुर थे उनका वध भगवान् शिव ने सीधे जाने वाले शरों द्वारा किया।[3] त्रिपुर वध का कारण यह था कि दर्पोन्मत्त होकर ये पितृयान मार्ग को नष्ट भ्रष्ट करने लगे थे। यहाँ भी देवतागण महादेव के पास अकेले ही जाते हैं ब्रह्मा के साथ नहीं। यहाँ महादेव इन्द्रादि देवताओं को लेकर युद्ध करने निकल पड़ते हैं। यहाँ भी विष्णु योग बल से वृषभ रूप धारण कर लेते हैं और रथ को ऊपर उठाते हैं। उस रथ को अपने दोनों सींगों से उठाये विष्णु भयंकर गर्जना करने लगते हैं। यहाँ शिव उस त्रिपुर संज्ञक दैत्य नगर पर एक नहीं, बल्कि तीन प्रज्वलित एवं वेगशाली बाण छोड़ते हैं। बाणों के आघात से वे तीनों पुर भस्म होकर बिखर जाते हैं।

और कोई विशेष बात इस कथा में नहीं है।

'पद्म पुराण' की कथा में 'महाभारत' की कथा की अपेक्षा ये विशेषताएं हैं—(१) तीनों पुर बाणासुर के हैं वे उसके तेज से घूमते हैं। (२) देवताओं को त्रिपुर-वध का आश्वासन देकर शिव नर्मदा तट पर आते हैं। उन्होंने मन्दराचल को धनुष वासुकि का प्रत्यंचा, वैशाख का स्थान और विष्णु का उत्तम बाण बनाकर, उसके आगे अग्नि स्थापित करके, मुख में वायु अर्पित करते हुए चारों वेदों को घोड़ा बनाकर सहस्र वर्ष तक त्रिपुरों के एक होने की प्रतीक्षा की। ज्यों ही तीनों पुर मिले, शिव ने तीक्ष्ण बाण छोड़ दिया। बाण लगते ही त्रिपुर में चीत्कार उठा। त्रिपुर जलता हुआ पृथ्वी पर गिरा। (३) इन तीनों पुरों में से एक त्रिपुरान्तक शैल पर, दूसरा अमरकण्टक पर्वत पर और तीसरा ज्वालेश्वर तीर्थ (अमरकण्टक) पर गिरा।

'शिव पुराण'[5] की कथा पूर्वोक्त कथा रूपों से कुछ भिन्न है। उसके विशेष स्थल ये हैं—(१) स्कन्द द्वारा तारकासुर वध के उपरान्त उसके तीनों पुत्रों विद्युन्माली तारकाक्ष और कमलाक्ष ने ब्रह्मा को प्रसन्न करने के लिए कठोर तपस्या की। प्रसन्न होकर जब ब्रह्मा ने वर माँगने को कहा तब वे बोले कि हम अवध्य हों। ब्रह्मा ने कहा कि यह वर छोड़ कोई दूसरा वर मांगो। तब तीनों दैत्यों ने हजार हजार कोस दूर स्थित तीन एक जैसे पुरों का जिनको केवल एक ही बाण से नष्ट किया जा सके, निर्मित करने को कहा। ब्रह्मा ने मय दानव को बुलाकर तीन सुन्दर नगर बनवा दिये। इनके सोने, चाँदी और लोह से निर्मित होने का उल्लेख नहीं है। (२) तीनों पुरों में धर्म कर्म चलने लगा। उनके धर्माचरण के तेज से देवतागण जलने लगे। देवतागण शिव के पास दुखड़ा

---

१ महाभारत कर्ण पर्व अ० १६ । २४-३१

२ हरिवंश पुराण भविष्य पर्व अ० १३३

३ वही भविष्य पर्व अ० १३३।२३

४ पद्म पुराण स्वर्ग खण्ड अ० १४-१५

५ शिव पुराण पूर्वार्द्ध पंचम खण्ड (युद्ध-खण्ड) अ० १

रोने गये। शिव ने अपने गणों को भेजा। वे त्रिपुर में जाते ही भस्म हो गये। (३) देवता विष्णु के पास गये। विष्णु ने अपने शरीर से एक मुंडित सिर, पचागुल वस्त्र से मुंह ढांपे मुण्डी को उपजाया और उसे त्रिपुर में भेजा। उसने त्रिपुर में जाकर लोगों को चेला बना लिया। वे लोग शिव पूजा से विरत हो गये। अब देवता और विष्णु शिव के पास गये तथा उनसे तीनों पुर नष्ट करने की प्रार्थना की। (४) फिर शिव के कहने से ब्रह्मा विष्णु ने बछड़ा के रूप में जाकर त्रिपुर का सारा अमृत पी लिया। अब विश्वकर्मा ने एक रथ बनाया। शिव गणपति की पूजा करके वे उस रथ में बैठे। शिव की माया से तीनों पुर एकत्र हो गये। शिव ने विष्णुपति बाण चलाकर तीनों पुरों को भस्म कर दिया।

'श्रीमद्भागवत पुराण'[1] की कथा के अनुसार देवताओं को छकाने के लिए मय दानव ने अपनी माया विद्या से सोने चाँदी और लोहे के तीन पुर बनाये जो इच्छानुसार कहीं भी जा सकते थे। उनसे दुःखित होकर देवतागण शिव की आराधना करते हैं। शिव के प्रस्तुत हो जाने पर देवता इस कार्य में उनकी सहायता भी करते हैं। वे उनके लिए एक दिव्य रथ का निर्माण करते हैं जो धर्म निर्मित होता है। उन्होंने ज्ञान से सारथि, वैराग्य से ध्वजा, ऐश्वर्य से अश्व, तपस्या से धनुष, विद्या से कवच, क्रिया से बाण तथा अपनी अन्यान्य शक्तियों से अन्य वस्तुओं का निर्माण किया। तब ऐसे दिव्य रथ पर सवार होकर शंकर ने तीनों विमान-रूपी पुरों पर बाण छोड़ा जिससे वे भस्म हो गये।[2]

'कूर्म पुराण'[3] में शेष कथा तो पूर्वोक्त है पर यहाँ त्रिपुर का स्वामी प्रख्यात शिवभक्त बाणासुर है न कि तारकासुर के पुत्र। बाणासुर ने इन्द्र की प्रभुता समाप्त कर दी। इन्द्र की प्रार्थना पर शिव ने अपने भक्त के इस त्रिपुर का नाश कर दिया।

'लिंग पुराण'[4] में देवतागणों ने रुद्र रथ का निर्माण विश्वकर्मा से कराया है। पहले भगवती युद्ध करने गयी हैं फिर शिव। शिव ने त्रिपुर के एकत्र होते ही उसे बाण से भस्म कर डाला। त्रिपुर दाह के बाद ब्रह्मा तथा अन्य देवताओं ने शिव की स्तुति की।

'स्कन्द पुराण'[5] में त्रिपुर निर्माण त्रिपुर ध्वंस के लिए रथ निर्माण और त्रिपुर-ध्वंस की कथा का 'पद्म पुराण' से मिलता जुलता वर्णन है।

(४७) शिव के द्वारा दक्ष-यज्ञ-विध्वंस

शिव और दक्ष द्रोह सती द्वारा देहत्याग और दक्ष-यज्ञ विध्वंस आदि सब कथाएँ पुराणों में परस्पर सम्बद्ध हैं।

---

१ भागवत पुराण अ० ७।१०
२ वही अ० ७।१।५४-६८
३ कूर्म पुराण अ० १८
४ लिंग पुराण अ० ७२-७३
५ स्कन्द पुराण अवन्ती खण्ड के अन्तर्गत रेवा खण्ड अ० २७-२८

दक्ष यज्ञ विध्वस की पूव पीठिका के रूप मे पुराणो मे सती के दक्ष यज्ञ म अनाहूत जाने, अपनी उपेक्षा और अपने पति शिव का अपमान देखकर योगाग्नि म अपने को भस्म कर लेने की कथा वर्णित है, 'ब्रह्म पुराण' (अ० ३४ ३६, १०६), 'पद्म पुराण' (सष्टि खड अ० ५), 'शिव पुराण' (रुद्र सहिता, सती खड, अ० १। २७ ४३), वाय वीय सहिता (अ० १८ २३) 'श्रीमदभागवत पुराण' (४।२।१ ३४) 'लिंग पुराण' (अ० १००), 'स्कन्द पुराण' (काशी खड, उत्तरार्द्ध, अ० ८७ ८६, माहेश्वर खड अ० १-५ प्रभास खड अ० १६६) 'कूर्म पुराण' (पूर्वार्द्ध १४ १५), 'ब्रह्मवैवर्त्त पुराण' (अ० ३८ और ४३) म सती के यज्ञ कुण्ड म कूदकर देह त्याग तथा दक्ष यज्ञ विध्वस का वर्णन आया है।

वदिक साहित्य म रुद्र और दक्ष का उल्लेख तो है [1] परन्तु उनके द्रोह का उल्लेख नही मिलता। वदिक साहित्य म रुद्र का व्यक्तित्व प्रबल नही है परन्तु पुराणो म उनकी गणना त्रिदेवों म होने लगती है। दक्ष-यज्ञ विध्वस की कथा उस समय की सूचक है जो शिव को यज्ञो मे विष्णु ब्रह्मा तथा अन्य दवताओ के साथ यज्ञ भाग प्राप्त करने के लिए करना पडा था।

'महाभारत' म दक्ष के दो जन्मो का उल्लेख है। पहले जन्म म वह ब्रह्मा का मानस-पुत्र था और दूसरे जन्म मे प्रचेता का पुत्र था।[2] दक्ष को मनुष्य रूप मे यह दूसरा जन्म शिव के शाप के कारण लेना पडा था। दोनो ही जन्मो म दक्ष ने कई यज्ञ किय और शिव ने उसके यज्ञ का विध्वस किया। 'महाभारत' के शान्ति पर्व[3] म दो अध्यायो म यह कथा वर्णित है। अध्याय २८३ म स्वय शिव ने दक्ष के यज्ञ का विध्वस किया है और अध्याय २८४ म उनके गण वीरभद्र ने।

अध्याय २८३ की कथा ब्रह्मा के मानस पुत्र दक्ष ने यज्ञ किया। दवताओ ने शिव को उस यज्ञ म भाग नही दिया, अत शिव उसमे सम्मिलित नही हुए। सती ने शिव को दक्ष यज्ञ विध्वस करने के लिए प्रेरित किया। शिव अपने गणो के साथ यज्ञ भूमि म गये। यज्ञ विध्वस किया। यज्ञ मृग रूप धारण कर भागा। शिव उसका वध करने दौड। दवता पराजित हुए। ब्रह्मा के कहने से दवताओ ने शिव को यज्ञ म भाग दिया।

अध्याय २८४ का कथा प्राचेतस दक्ष ने यज्ञ किया। दक्ष ने सब देवताओ को बुलाया पर शिव को नही। दधीचि इस बात स रुष्ट होकर और यज्ञ के ध्वस्त होने की भविष्यवाणी करके चल आये। सती ने अन्य दवताओ को कही जात दख शिव से इसका निमित्त पूछा। शिव न बताया। शिव और सती न अपने मुख से क्रमश वीरभद्र और महाकाली को उत्पन्न किया। इन दोनो ने जाकर दक्ष का यज्ञ विध्वस कर दिया। वीरभद्र ने मृग रूप धारण कर भागते हुए यज्ञ का सिर काट लिया। दक्ष न शिव की स्तुति की। शिव कृपा से यज्ञ पूर्ण हुआ।

---

१ ऋग्वेद ६।५ २ शतपथ ब्राह्मण २।४।४।१ और ६।८।१।१४
२ महाभारत आदि पर्व अ ६७।१
३ वही शान्ति पर्व अ २८३ २८४

'हरिवंश पुराण'¹ में प्राचेतस दक्ष के यज्ञ को रुद्र और गणों द्वारा विध्वंस करने की कथा आती है। नन्दी और रुद्र दोनों अपने गणों के साथ यज्ञ को नष्ट कर रहे थे। यज्ञ मगरूप में भागा। शिव ने पिनाक से एक बाण उस पर छोड़ा। यज्ञ मृग आर्तनाद करता ब्रह्मा के पास गया। ब्रह्मा ने बाण बिद्ध मृग को मृगशिरा नक्षत्र बना दिया। उनके शरीर से निकले रक्त से इन्द्रधनुष की रचना कर दी। यज्ञ-ध्वंस-लीला के समय शिव और विष्णु में युद्ध हुआ। अग्नि, आदित्य, वसुगण आदि ने विष्णु की सहायता की और मरुद्गणों तथा विश्वदेवों ने शिव की। विष्णु और शिव में परस्पर घात प्रतिघात हुआ। अनन्तर विष्णु ने शिव से क्षमा मांगी और उनके लिए यज्ञ भाग की व्यवस्था की। शिव (रुद्र) द्वारा भग्न किये गये यज्ञ को विष्णु ने फिर से जोड़ा और उसे विधिपूर्वक सम्पन्न किया। प्रजापति दक्ष को यज्ञ का पूरा फल प्राप्त हुआ।

'ब्रह्म पुराण' के तीन अध्यायों² में यह कथा आयी है। अध्याय ३४ में ब्रह्मा के मानस-पुत्र दक्ष को शिव ने देव सभा में यथोचित सम्मान नहीं दिया, अतः वह रुष्ट हो गया। उसने यज्ञ किया, शिव को नहीं बुलाया। शिव के मना करने पर भी सती अनाहूत अपने पिता के यज्ञ को देखने पहुँची। वहाँ किसी ने उसकी बात भी न पूछी। सती ने दक्ष से शिव को न बुलाने का कारण पूछा, तो दक्ष ने शिव की निन्दा की। पति निन्दा सुनने के पाप का प्रक्षालन करने के लिए सती ने दक्ष से उत्पन्न अपने शरीर का त्याग योग बल से कर दिया। शिव ने सुना तो कोप किया। दक्ष को मनुष्य जन्म लेने का शाप दिया। दक्ष ने भी शिव को यज्ञ में भाग न पाने का शाप दिया। इस अध्याय में शाप तक ही बात रह जाती है, यज्ञ का विध्वंस नहीं होता।

अध्याय ३९ में यज्ञ का विध्वंस वीरभद्र और काली द्वारा होता है। वीरभद्र ने अपने शरीर से एक सेना उत्पन्न की और गणेश ने अपने ललाट के स्वेद से अग्नि। देवता पराजित हुए। शिव को यज्ञ भाग दिया गया। दक्ष ने शिव की स्तुति की। शिव ने यज्ञ पूर्ण होने का वर दिया। 'ब्रह्म पुराण' के अध्याय १०९ की कथा अ० ३४ के अनुसार है। अन्तर केवल इतना है कि यहाँ वीरभद्र यज्ञ विध्वंस करता है।

'पद्म पुराण'³ में सती दक्ष यज्ञ में आती है, पति को आया न देख पिता से पूछती है। दक्ष ने कहा कि इस मांगलिक कार्य में नग्न घूमने, अस्थि-कपाल मालाधारी शिव को बुलाकर मैं लज्जित नहीं होना चाहता। यज्ञ समाप्त होने पर उन्हें बुलाकर मैं उनका उचित सम्मान करूँगा। पति का अपमान देख सती शरीर त्याग कर देती है। शिव वीरभद्र को भेजकर दक्ष-यज्ञ का विध्वंस करते हैं। दक्ष शिव की स्तुति करता है और शिव उसके यज्ञ के पूर्ण होने का वर देते हैं।

'वायु पुराण'⁴ की कथा 'ब्रह्म पुराण' के समान ही है। दक्ष के दोनों जन्मों की

---

१ हरिवंश भविष्य पर्व अ० ३२
२ ब्रह्म पुराण अ० ३४,३९,१०९
३ पद्मपुराण सृष्टि खण्ड अ० ५
४ वायु पुराण अ० ३०

वणन किया गया है।

'शिव पुराण'[1] के रुद्र सहिता अध्याय २ मे अनाहूता सती का पितगह गमन और शरीर त्याग का वत्त पूववत है। सती की मृत्यु का समाचार सुनकर शिव न क्रोधित हो अपनी एक जटा उखाडी। उसस विशालकाय वीरभद्र तथा अय गण उत्पन्न हुए। वीरभद्र ने गणा के साथ जाकर यज्ञ नष्ट किया। विष्णु से उसका युद्ध हुआ। उसन दक्ष का सिर काट लिया। दवताओ की प्राथना पर रुद्र ने दक्ष को जीवित कर दिया और यज्ञ पूण होन का आशीष दिया।

'शिव पुराण' रुद्रसहिता अध्याय २७ ४३ म दधीचि द्वारा शिव को न बुलाने के लिए दक्ष की निन्दा करने का उल्लख है। अनाहूत होकर सती पूववत शरीर त्याग करती है। शिव अपनी जटा से वीरभद्र महाकाली तथा ज्वरादिकों को उत्पन्न करते हैं। वीरभद्र विष्णु को पराजित करता है दक्ष का सिर काट लेता है। ब्रह्मा और विष्णु कलास जाकर शिव की स्तुति करत हैं। आशुतोष शिव दक्ष के सिर को उसके धड से जोडकर पुन जिला देते हैं। दक्ष का यज्ञ सकुशल पूण हो जाता है।

'शिव पुराण' की वायवीय सहिता अ० १८ २३ मे उल्लेख है कि एक बार सभी देवता शिव और सती के पास गय। दक्ष को अपनी पुत्री से कुछ विशेष आवभगत की आशा थी किन्तु सती न उनका विशेष सम्मान नही किया। इससे वे रुष्ट हो गय। यज्ञ क अवसर पर दक्ष न अपनी सब बेटिया को बुलाया पर सती को नही। सती बिना बुलाय ही चली आयी और वहा योगाग्नि मे जल मरी। शिव ने दक्ष और भगु को ववस्वत मन्वतर मे पुन उत्पन्न हान का शाप दिया और उस ज म म भी अपने द्वारा यज्ञ ध्वस करने की भविष्यवाणी की।

'श्रीमदभागवत पुराण'[2] म शिव पुराण की भाति ही कथा सक्षप म यह है—दक्ष कन्या सती शिव को ब्याही थी। एक बार प्रजापतियो के यज्ञ मे शिव ने उठकर दक्ष का स्वागत नही किया। दक्ष न कुपित होकर शिव को इन्द्र उपेन्द्र के साथ शिव का यज्ञ भाग प्राप्त न होने का शाप दिया। नन्दी ने दक्ष को तत्त्व ज्ञान स विमुख और इन्द्रिय लोलुप होने का शाप दिया। नन्दी के शाप के बदले मे भगु ने शिव को पाखण्डी और सुरासेवी होन का शाप दिया। कुछ काल क अन तर ब्रह्मा न दक्ष को प्रजापतियो का अधिपति बना दिया। दक्ष का सिर घूम गया। उसने एक बहस्पतिसव नामक यज्ञ किया। सब देवताओ को बुलाया पर शिव को नही। सती शिव स रुष्ट होकर बिना बुलाय ही पिता के यज्ञ म गयी। शिव न बहुत समझाया, पर न मानी। यज्ञ म पहुचकर सती न अपनी उपेक्षा और पति का अनादर अनुभव किया, अत योगाग्नि म अपनी देह को भस्म कर दिया। शिव के पाषदो ने दक्ष को मारना चाहा परन्तु भगु ने यज्ञ

---

१ शिव पुराण रुद्र सहिता सती खण्ड अ १ तथा अ० २७ ४३ और वायवीय सहिता पूव खण्ड अ० १८ २३

२ श्रीमद्भागवत पुराण अ ४।२।१ ३४

कुण्ड में 'ऋभु' नामक हजारों देवताओं को उत्पन्न कर उनसे उनको भगा दिया। शिव ने सुना, तो क्रोध में एक जटा को उखाड़ कर पृथ्वी पर पटका। तुरन्त एक काले रंग का विशालकाय गण उत्पन्न हुआ। शिव ने कहा कि तुम मेरे अंश हो तुम्हारा नाम वीरभद्र है जाकर दक्ष का यज्ञ ध्वंस करो। वीरभद्र त्रिशूल लेकर दौड़ा। वहाँ उसने यज्ञ मण्डप तोड़ डाला, कामदेव की आँखें फोड़ दी, भृगु की दाढ़ी-मूछें नोच ली, पूषा के दाँत उखाड़ लिये, दक्ष का सिर काटकर यज्ञ कुण्ड में फेंक दिया और लौटकर शिव को सब वृत्त सुना दिया। उधर ब्रह्मा ने आकर सब देवताओं को फटकारा और शिव को यज्ञ भाग न देना अन्यायपूर्ण कहा। देवताओं को साथ ले वे शिव के पास क्षमा माँगने गये। शिव से उन्होंने दक्ष-यज्ञ के पुनरुद्धार की प्रार्थना की। शिव ने प्रसन्न होकर दक्ष के धड़ पर बकरे का सिर जोड़कर उसे जिला दिया। भृगु को दाढ़ी-मूछ बकरे-जैसी निकल आयें यह वर दिया। दक्ष ने शिव की स्तुति की। यज्ञ पूरा हुआ।

'भागवत पुराण' के बाद यह कथा 'ब्रह्मवैवर्त पुराण'[1] में आती है किन्तु संक्षेप में। अनाहूता सती के पितृगृह गमन, दक्ष द्वारा शिव द्रोह के कारण उसके अपमान, उसके शरीर-त्याग आदि का उल्लेख है अन्य बातों का नहीं। इसी पुराण के अध्याय ४३ में वर्णित है कि शंकर का जब सती के देह-त्याग का संवाद मिला तब वे उसके शव को अपने वक्ष स्थल पर रखकर पागल की तरह चेष्टाएँ करने लगे। सती की भस्म को शिव ने अपने तन में रमा लिया और उसकी अवशिष्ट अस्थियों की कंठमाला बना ली। विष्णु ने शंकर को प्रकृति की स्तुति करने का परामर्श दिया जिससे उनका पत्नी विरह दूर हो सके। शिव ने प्रकृति की स्तुति की। प्रकृति ने प्रसन्न होकर कहा कि मैं हिमालय के घर जन्म लेकर पुनः आपकी पत्नी बनूंगी।

'लिंग पुराण'[2] के अध्याय ९९ में शिव और सती के पूर्वजन्म का वर्णन है। पूर्व जन्म में सती का अर्द्धनारीश्वर के संयोग से श्रद्धा नामक स्त्री होना उल्लिखित है। सती ने दक्ष-कन्या के रूप में प्राप्त देह को त्यागकर हिमालय की कन्या के रूप में जन्म ग्रहण किया। अध्याय १०० की कथा में दक्ष-यज्ञ विध्वंस का वर्णन है। वीरभद्र ने यज्ञ ध्वंस किया पूषा, चन्द्र इन्द्र अग्नि सबको उसने पराजित किया। यज्ञ भूमि में शिव और विष्णु का युद्ध हुआ। विष्णु ने शिव पर चक्र चलाया, पर वह चल न पाया। शिव ने अपने धनुष से विष्णु का सिर काट लिया। मृग रूपधारी यज्ञ का सिर वीरभद्र ने काट लिया। दक्ष का सिर भी उसी ने काटा। ब्रह्मा ने प्रकट होकर शिव को तुष्ट किया। शिव ने विष्णु, दक्ष आदि को जिला दिया।

'वाराह पुराण'[3] की कथा अन्य पुराणों से भिन्न है। यहाँ सती के भस्म होने के कारण कुपित होकर शिव ने दक्ष का यज्ञ ध्वंस नहीं किया है। इसकी कथा इस प्रकार

---

१ ब्रह्मवैवर्त पुराण कृष्ण-जन्म खण्ड अ० ३९ और ४३

२ लिंग पुराण पूर्वार्द्ध अ० ९९-१

३ वाराह पुराण अ० २१-२२

है—ब्रह्मा के कोप से रुद्र की उत्पत्ति हुई। ब्रह्मा ने उन्हें अपनी गौरी नामक कन्या देकर उससे सृष्टि उत्पन्न करने को कहा परन्तु रुद्र ने इसमे अपने को असमर्थ बताया और जल मे जा छिपे। तब ब्रह्मा ने अपने सात मानस पुत्र उत्पन्न किये जो प्रजापति कहलाये। इन प्रजापतियो ने सृष्टि उत्पन्न की। ब्रह्मा ने दक्ष को पुत्री रूप मे गौरी को दे दिया। कई वर्ष बाद तपस्या समाप्त कर जब रुद्र जल से बाहर निकले तब उन्होंने अपनी अनुपस्थिति मे विस्तारित सृष्टि को देखकर कोप किया। कोप के कारण उनके कान से एक ज्वाला निकली और बहुत से भूत प्रेतादि भी। सबने दक्ष के यज्ञ को ध्वस्त कर डाला। देवताओ ने भयभीत होकर रुद्र को यज्ञ मे भाग दिया। ब्रह्मा ने दक्ष से कहकर गौरी रुद्र को दिला दी। रुद्र ने दक्ष का यज्ञ पूरा हो जाने दिया और स्वयं गौरी को लेकर कैलास पर रहने लगे। एक बार गौरी ने शिव पर इसलिए रोष किया, क्योंकि उन्होंने उनके पिता के यज्ञ को नष्ट कर दिया था। वे लड झगड कर हिमालय पर तप करने चली गयी। वही उन्होंने अपना शरीर त्याग किया। दूसरे जन्म मे शैलजा 'पार्वती' बनी।

'स्कन्द पुराण' मे दक्ष के शिव द्रोह सती-देह त्याग और दक्ष यज्ञ विध्वस की कथा तीन स्थलों[1] पर आयी है। काशीखण्ड की कथा मे शिव द्वारा अपने घर पर आए दक्ष का उचित सम्मान न करने के कारण दक्ष के उन पर रुष्ट हो जाने का वर्णन है। यज्ञ मे शिव को न बुलाने के कारण दधीचि दक्ष की निन्दा करते हैं। नारद दक्ष यज्ञ का समाचार शिव तक पहुँचाते हैं। शिव के मना करने पर भी सती पीहर जाती है। शेष पूर्ववत् है। माहेश्वर खण्ड (केदार खण्ड) की कथा 'शिवपुराण' रुद्र सहिता (सती खण्ड अ० २७ ४३) के समान ही है। विशेष बात मात्र यह है कि नारद सती दाह का समाचार शिव को सुनाते हैं। दक्ष ने कनखल मे अपना यह यज्ञ किया था। प्रभास खण्ड की कथा मे कुछ भिन्नता मिलती है। वीरभद्र का विष्णु ने हरा दिया। वह शिव के पास आया। क्रोधित होकर शिव ने भद्रकाली और वीरभद्र के साथ स्वयं यज्ञ भूमि मे पदार्पण किया। विष्णु शिव को देखकर छिप गये। शिव ने पूषा के दांत तोड दिये, कामदेव की आँखें फोड दी अग्नि को भस्म किया यज्ञ रूप मृग का पीछा किया और यज्ञ का विध्वस कर दिया। दक्ष का सिर काटने का यहाँ उल्लेख नही है।

'वामन पुराण'[2] की कथा मे एक नवीन तत्त्व यह है कि गौतम पुत्री जया द्वारा दक्ष यज्ञ का समाचार पाकर और यह जानकर कि उसमे शिव को नही बुलाया गया है सती ने क्रोध मे आकर शरीर त्याग कर दिया। शिव ने वीरभद्र आदि गणो को भेजकर यज्ञ विध्वस करा दिया। सती का शरीरान्त पितृगृह मे न होकर पतिगृह मे हुआ यह नवीन तत्त्व है जो अन्यत्र नही मिलता।

---

१ स्कन्द पुराण काशी खण्ड उत्तरार्द्ध अ० ८७ ८९ माहेश्वर खण्ड (केदार खण्ड) अ १ ५ प्रभास खण्ड (प्रभास क्षेत्रमाहात्म्य) अ ११६

२ वामन पुराण अ ४५

'कूर्म पुराण'[1] म प्राचेतस दक्ष के यन विध्वस की कथा है। शिव से दक्ष बुरा मान गये हैं परन्तु देव सभा मे सम्मानित न होने के कारण नही, वरन् शिव के घर म यथोचित पजा न मिलने के कारण। शेष कथा 'ब्रह्म पुराण' अध्याय ३६ के समान है।

'मत्स्य पुराण'[2] म कथा अत्यन्त सक्षेप मे आयी है। यहाँ सती ने दक्ष को मनुष्य-योनि मे जन्म लेने और यन के नष्ट होने का शाप दिया है, शिव ने नही।

'गरुड पुराण'[3] की कथा 'ब्रह्म पुराण' के अ० ३६ के समान है। कोई नवीन बात नही है। 'ब्रह्माण्ड पुराण'[4] की कथा भी 'ब्रह्म पुराण' अ० ३४ के समान है। 'कथा सरित्सागर'[5] मे शिव ने पार्वती को उनके पूर्व जन्मो की कथा सुनाते हुए दक्ष यन विध्वस की सक्षेप मे चर्चा की है।

(४८) शिव के द्वारा सती का परित्याग ✓

'शिव पुराण'[6] म उस प्रसग का वर्णन हुआ है जिसम सीता का वेश धारण कर सती राम के विष्णुत्व की परीक्षा लेने जाती है और इस कारण वह शिव द्वारा त्याग दी जाती है। कथा इस प्रकार है—एक समय शिव सती सहित तीनो लोको का भ्रमण करने निकले। पृथ्वी पर घूमते हुए दण्डक वन म आये। उन्होने देखा कि राम और लक्ष्मण व्याकुल होकर अपहृत सीता को ढूढ रहे हैं। शिव ने राम को प्रणाम किया। सती ने कारण पूछा तब शिव ने बताया कि राम तो विष्णु हैं। सती को विश्वास न हुआ। उन्होने परीक्षा लेने की ठानी। सती ने सोचा कि मैं सीता के रूप मे इनके सामने जाती हूँ, यदि यह विष्णु होगे तो पहचान ही लेंगे। यह सोचकर सती शिव को बिना बताय, कुछ दूर गये हुए राम लक्ष्मण के सामने सीता रूप मे प्रकट हुई। राम लक्ष्मण ने जान लिया कि ये सती हैं। राम ने सती से कहा—माता आज आप अकेली वन म कसे? शिव महाराज कहाँ चले गये हैं? सती को काटो तो खून नही। उन्हें पूर्ण विश्वास हो गया कि राम विष्णु ही हैं। राम ने सती को प्रणाम किया और उनसे आशीर्वाद लेकर अपने मार्ग पर बढ गये।

इधर सती के मन मे भय हुआ कि मैंने शिव की अवना की है, वे पूछेंगे तो मैं क्या उत्तर दूगी। उन्हाने शिव को कुछ न बताना ही निश्चित किया। किन्तु, शिव से क्या छिपा था? ध्यान करके उन्होने सती का सारा चरित्र जान लिया। उन्हें क्रोध हुआ कि सती ने मातृ-स्वरूपा लक्ष्मी का रूप धारण किया अब वे भार्या कसे रह

---

१ कूर्म पुराण पूर्वार्द्ध अ० १४ १५
२ मत्स्य पुराण अ १३,१२ १५
३ गरुड पुराण अ० ५ ६
४ ब्रह्माण्ड पु पूर्वभाग अनषगपाद अ० १३
५ कथासरित्सागर प्रथम लम्बक प्रथम तरग
६ शिव पुराण वायवीय सहिता अ १८ १६

सकती थी ? शिव ने मन ही मन सती परित्याग का निश्चय कर लिया। कलास लौटने पर भी शिव गुमसुम ही रहे। सती ने बहुत कुछ पूछा पर कुछ बताया नही। सती भी मन म ग्लानि अनुभव कर रही थी। शिव सती की उपस्थिति भूलकर तपस्या म लीन हो गये। सत्तासी हजार वष बीतने पर शिव समाधि से जागे तो सती उनक सामने खडी हुई। शिव ने सती पर ऊपरी प्रेम भाव बनाये रखा और सती भी सब भूलकर प्रस न चित्त रहने लगी।

इसक उपरा त की कथा दक्ष यन, शिव द्वारा सती दाह और यन विध्वस की है जो अ० २० २३ म वर्णित है।

'रामचरित मानस'[1] म भी शिव द्वारा सती के परित्याग की कथा दी गयी है जो शिव पुराण क अनुसार ही है।

(४९) शिव का पार्वती के कहने से कैलास छोड देना

पावती के कहन से शिव द्वारा कलास छोड देने की कथा केवल 'वायु पुराण'[2] म मिलती है। यह कथा दिवोदास द्वारा काशी को खाली करने और शिव द्वारा काशी को पुन अपना धाम बना लेने के प्रसग म कही गयी है। कथा इस प्रकार है—

शिव पावती को प्रस न करने के लिए अपनी ससुराल हिमालय के घर कलास म ही रहने लगे। एक बार हिमालय की पत्नी मना ने पावती से अपने दामाद शिव के विषय मे कुछ बुरा भला कहा। पावती को उनकी बात बुरी लगी। उ होने शिव से कहा कि ससुराल म रहने स अपनी मान मर्यादा घट रही है इसलिए इस स्थान को छोड दीजिये। शिव ने अपने रहने योग्य स्थान का चुनाव करन के लिए पावती को त्रिलोक के सभी प्रसिद्ध स्थान दिखाय। पावती ने काशी को पस द किया। उन दिनो दिवोदास काशी का राजा था। वह अत्य त धर्मात्मा तथा दोष शू य व्यक्ति था। शिव ने उससे काशी खाली कराने के लिए अपने प्रमुख गण निकुम्भ को भेजा। निकुम्भ ने वहा पहुँच कर किसी मकन नामक नापित (नाई) को स्वप्न बताया। राजाज्ञा से निकुम्भ की प्रतिमा राजद्वार पर रख दी गयी। काशी का जो भी यक्ति जिस इच्छा को लेकर उस मूर्त्ति के पास जाता था उसकी वह इच्छा पूण हा जाती थी। धीरे धीरे उसकी ख्याति अ त पुर तक पहुची। दिवोदास के कोई पुत्र न था अत रानी न पुत्र प्राप्ति की इच्छा से निकुम्भ प्रतिमा की मनौती मानी, कि तु निकुम्भ ने रानी को पुत्र नही दिया। इस पर राजा ने निकुम्भ की प्रतिमा तुडवा दी। प्रतिमा भजन एक अधर्म था, जो राजा से हो गया। निकुम्भ ने काशी नगरी को जन शू य हो जाने का शाप दिया।

१ रामचरित मानस बालकाण्ड छद ४८ ५७
२ वायु पुराण अ ६२

पी नगरी को शिव ने पुन बसाया और पार्वती सहित वहाँ रहने लगे।

(५०) शुकदेव का दो घडी से अधिक कही न ठहरना

कृष्णद्वैपायन व्यास की तपस्या से प्रसन्न होकर शिव ने उन्हें एक ऐसे पुत्र का पिता बनने का वर दिया जो अग्नि, पृथ्वी जल, वायु और आकाश जैसा ही शुद्ध और महान होगा। इस वर प्राप्ति के अनन्तर महर्षि व्यास एक दिन अग्नि उत्पन्न करने के लिए दो अरणि काष्ठ लेकर उनका मन्थन कर रहे थे कि उन्होंने घृताची अप्सरा को देखा और उस पर काममोहित हो गये। उनका वीर्य स्खलित होकर अरणि काष्ठ पर ही गिर गया। उसी समय उससे शुकदेव प्रकट हो गये।[1] तभी गंगा मेरुपर्वत पर प्रकट हुई और उन्होंने शुकदेव को स्नान कराया। आकाश से उनके लिए दण्ड और काला मृगचर्म, ये दो वस्तुएँ गिरीं। व्यास ने उन्हें मोक्ष शास्त्र का अध्ययन करने के लिए मिथिलेश जनक के पास भेजा।[2] इन्होंने परीक्षित के मृत्यु काल में उनको भी दर्शन दिया था।[3] शुकदेव के विषय में यह प्रसिद्ध था कि वे गोदोहन काल तक भी (जितनी देर में गाय दुही जाय उतनी देर भी) किसी गृहस्थ के घर नहीं टिकते थे।[4]

'श्रीमदभागवत' की इसी उक्ति के आधार पर लोक में शुकदेव के विषय में यह प्रसिद्ध हो गया होगा कि वे दो घडी से अधिक कहीं नहीं ठहरते हैं।

'श्रीमदभागवत पुराण' के अतिरिक्त किसी अन्य पुराण में शुकदेव की इस प्रवृत्ति का उल्लेख नहीं मिलता। यों 'देवीभागवत पुराण' के भी छ अध्यायों में[5] उनके जन्म, गार्हस्थ्य के प्रति उनके वैराग्य जनक के पास जाकर मोक्ष ज्ञान प्राप्ति तथा उनके विवाह आदि का वर्णन हुआ है किन्तु गोदोहन में जितना समय लगे उतनी देर से अधिक उनके कहीं न ठहरने का उल्लेख वहाँ भी नहीं मिलता।

(५१) समुद्र-मन्थन की कथा

समुद्र मंथन की कथा सर्वप्रथम 'वाल्मीकि रामायण'[6] में उल्लिखित है। कथा संक्षेप में इस प्रकार है—

मरीच पुत्र कश्यप की दिति और अदिति नामक पत्नियों से क्रमश दैत्य और

---

१ महाभारत शान्ति पर्व अ० ३२४।१९
२ वही श्लोक १२ १३
३ श्रीमद्भागवत पुराण १।१९।२५
४ नून भगवतो ब्रह्मन् गृहेषु गृहमेधिनाम् । न लक्ष्यते ह्यवस्थानमपि गोदोहनं क्वचित् (वही १।१९।३९)
५ देवीभागवत पुराण अ० १४ १९
६ वाल्मीकि रामायण बालकाण्ड अ० ४५।१५ ४२

देवता उत्पन्न हुए। दैत्यों और देवताओं ने जरा मृत्यु के कष्टों से बचने के लिए कोई उपाय करना चाहा। अमृत प्राप्ति के लिए क्षीर समुद्र को मथने का निश्चय हुआ। वासुकि नाग को मथन की डोरी और मदराचल को रई (मथानी) बनाकर दोनों समुद्र मथन करने लगे। एक सहस्र वर्ष तक मथन क्रिया चली वासुकि विष उगलने लगे और मदराचल की शिलाओं को दाँतों से काटने लगे। उससे हालाहल नामक महाविष उत्पन्न हुआ। उसकी ज्वाला में देवता दानव मनुष्य सब जलने लगे। तभी विष्णु वहाँ प्रकट हुए। विष्णु के आग्रह से महादेव ने वह कालकूट पी डाला।[1] मथन फिर आरम्भ हुआ। किन्तु इस बार मदराचल ही धीरे धीरे पाताल की ओर खिसकने लगा। तब देवताओं और गंधर्वों ने विष्णु भगवान की स्तुति की। देवताओं के इस आड़े मौके पर विष्णु भगवान फिर काम आये। उन्होंने कच्छप का रूप धारण किया और जल में बैठकर मदराचल को अपनी पीठ पर ले लिया और उसके आगे के सिरे को अपने हाथ से थाम लिया। विष्णु की सहायता से समुद्र-मन्थन फिर आरम्भ हुआ। एक सहस्र वर्ष तक यह दौर भी चला, तब सर्वप्रथम धन्वन्तरि हाथों में दण्ड कमण्डलु लिये निकले। तदनन्तर सुन्दर अप्सराएं निकलीं। उनकी संख्या साठ हजार थी। इसके बाद वरुण देव की कन्या वारुणी उत्पन्न हुई जिसे अदिति के पुत्रों ने ग्रहण कर लिया। वारुणी या सुरा को ग्रहण करने वाले सुर कहलाये और न ग्रहण करने वाले असुर। तत्पश्चात् उच्चैःश्रवा अश्व निकला और फिर क्रम से कौस्तुभ मणि तथा अमृत। अमृत ही तो मथन का चरम फल था, अतः उसको लेने के लिए सुर और असुर आपस में झगड़ पड़े। दोनों पक्षों के बहुत से योद्धा मारे गये। अंत में विष्णु ने मोहिनी माया को फैला कर असुरों से अमृत छीन लिया। फिर असुरों को काफी संख्या में मारकर इन्द्र ने राज्य पाया।

इस कथा में क्षीर सागर से निकलने वाले चौदह रत्नों के पूरे नाम नहीं दिये गये। राहु का सिर काटे जाने की घटना का भी उल्लेख नहीं है।

'महाभारत' में भी समुद्र-मथन और अमृत प्राप्ति के लिए देवों और दानवों की होड़ का उल्लेख हुआ है।[2] वहाँ विष्णु भगवान् ने ब्रह्मा को सुझाव दिया है कि देवता और दैत्य मिलकर समुद्र-मथन करें। मथन के फलस्वरूप अमृत प्रकट होगा। रई (मथानी) का काम यहाँ भी मदराचल से लिया गया है परन्तु यहाँ विष्णु भगवान शेषनाग को मदराचल को उखाड़ने का आदेश देते हैं और शेषनाग जोर लगाकर मदराचल को उखाड़ लेते हैं। इनके उपरान्त देवता लोग समुद्र के पास मथन की अनुमति लेने जाते हैं और समुद्र इस शर्त पर, कि अमृत में उसका भी भाग रहे, मथन की पीड़ा को सहने के लिए प्रस्तुत हो जाता है। देव दानव समुद्र-तल में स्थित कच्छपराज से मदराचल का आधार बनने के लिए कहते हैं। 'वाल्मीकि रामायण' में विष्णु ने स्वयं

१ वाल्मीकि रामायण श्लोक २२ २६
२ महाभारत आदि पर्व अ १७ १६

कच्छप का रूप ग्रहण किया है, और सो भी प्रारम्भ मे नही, मथन का एक दौर समाप्त हो जाने पर और कालकूट के निकल आने पर। 'महाभारत' म यह भी उल्लख है कि असुरो ने नागराज वासुकि के मुखभाग को पकड रखा था और देवताओ ने पूँछ को। मथन करते-करते जब दवतागण थक गये, तब ब्रह्मा की प्राथना पर विष्णु ने उन्हें बल प्रदान किया। समुद्र का घोर मथन होने पर उसम से सवप्रथम श्वेतवण चन्द्रमा निकला तदनन्तर शुभ्रवस्त्रधारिणी लक्ष्मी का आविर्भाव हुआ और उसके बाद सुरा (वारुणी) देवी का। तत्पश्चात श्वेत अश्व (उच्चैःश्रवा), फिर कौस्तुभ मणि पारिजात वक्ष और सुरभि गौ उदभूत हुए। लक्ष्मी, सुरा चन्द्रमा तथा उच्चैःश्रवा अश्व ये सब देवलोक म चले गये। इन रत्नो के उपरान्त धन्वन्तरि प्रकट हुए। उनके हाथ मे एक श्वेत कलश था जिसम अमत भरा था। अमत को देखते ही दानव कोलाहल करने लगे। इनके बाद श्वेतवण का चार दाँतो वाला ऐरावत हाथी निकला। वज्रधारी इन्द्र ने इसे अपने अधिकार म कर लिया। मथन जारी था ही। अब कालकूट महाविष की उत्पत्ति हुई। ब्रह्मा की प्राथना पर त्रिलोकी की रक्षा के लिए शकर ने उसे पी लिया और उसे अपने कण्ठ मे ही धारण कर लिया जिसमे उनका कण्ठ नीला पड गया और वे नीलकण्ठ कहलाये।

अब अमत के वितरण का प्रश्न उपस्थित हुआ। विष्णु ने ही इस समस्या को भी सुलझाया। उन्होंने मोहिनी माया का आश्रय लेकर एक सुन्दर स्त्री का रूप बनाया। दत्या और दानवो को उस रूप ने मोहित कर लिया। उन्होने स्त्रीरूप धारी विष्णु को अमत कलश सौंप दिया। देवो और दानवो को दो पक्तियों मे बैठा लिया गया। मोहिनी ने अमत दवो को ही पिलाया दत्या और दानवो को नही दिया। इससे उन्होने बडा कोलाहल मचाया। राहु ने अमृतपान की चेष्टा की, तो भगवान ने उसका सिर काट लिया। देवताओ और दत्यो मे घोर सग्राम हुआ। विष्णु ने मोहिनी रूप त्याग दत्यो का सुदशन चक्र स सहार करना आरम्भ किया। दत्य डर कर खारे समुद्र मे जा घुसे। देवतागण विजय पाकर मदराचल को उसके पूव स्थान पर स्थापित कर आये और अमत घट को स्वग मे लाकर भगवान नर को सुरक्षित रखने के लिए सौंप दिया।

'महाभारत' म समुद्र से अप्सराओ के निकलने का उल्लेख नहीं आता। इसमे राहु के शिरच्छेद की घटना वर्णित है, पर 'वाल्मीकि रामायण' मे नही।

'हरिवंश पुराण'[1] म भी समुद्र-मथन की कथा आती है। 'महाभारत' की अपेक्षा इसम ये नवीन बातें हैं—(१) जब मथानी बनाने के निमित्त मदराचल को दानव किसी प्रकार न उखाड सके तब वे ब्रह्मा की शरण म गये ब्रह्मा ने बताया कि आदित्य वसु रुद्र मरुत गण देवता, यक्ष गधर्व और किन्नर ये सब यदि मिलकर प्रयास करें तो मदराचल को उठा सकते हैं। ऐसा ही हुआ और मन्दराचल को समुद्र मे डाल दिया गया, रस्सी

१ हरिवंश पुराण भविष्य पर्व अ० ३०

वासुकि ही बने।[१] (२) जो भी रत्न समुद्र मे से निकले, उनके निकलने का क्रम यह रहा —धन्वन्तरि, मद्य, श्री, कौस्तुभ, चन्द्रमा, उच्चै श्रवा तथा अत में अमत।[२] (३) दत्यो ने अमत पर पहल ही अधिकार कर लिया। अभी देवता और दत्यो म से कोई भी अमृत पान नही कर रहा था कि लोगो की दष्टि राहु पर गयी जो चुपके से अमृत पीने की चेष्टा कर रहा था। विष्णु ने राहु का सिर चक्र स काट लिया। (किसी की शिकायत पर नही)।[३] (४) पथ्वी देवी न ब्रह्मा की आज्ञा से इन्द्र क हाथ से अमत ले लिया और उसे लेकर वे चली गयी।

यहाँ यह स्पष्ट नही किया गया है कि दत्यो के अधिकार मे जो अमृत चला गया था, वह इन्द्र के हाथ मे कसे आ गया।

'ब्रह्म पुराण'[५] की कथा मे कुछ भिन्नता है। यहाँ समुद्र-मथन का कारण दूसरा ही है। दवता और दानव दवयोग से एक बार महानदी के सगम पर मिल। उन्होने सुमरु को पाकर आपस मे सलाह की कि समुद्र का मथन कर अमत निकाला जाय और आपसी वर भाव को दूरकर शान्ति से रहा जाय, युद्ध से कोई लाभ नही। समुद्र-मथन किया गया, उसमें स अमत निकला भी। दत्यो ने विश्वासपूवक अमत देवो का सौंप दिया और यह कहकर कि किसी शुभ घडी मे विभाजन करेंगे चले गये। देवताओं के के मन म कपट भाव आया। उन्होने ब्रह्मा की आज्ञा लेकर समुद्र की कन्दराओ म बठकर अमत पीना आरम्भ किया। विष्णु (गुहा द्वार) की रक्षा कर रहे थे। इसी समय कामरूप राहु मरुत रूप धारण कर आ गया और अमत पीने लगा। सूय तथा सोम ने विष्णु को राहु का रहस्य बताया। विष्ण ने अपने चक्र से राहु का सिर काट लिया। तब स चन्द्र और सूय के साथ राहु वैर भाव मानने लगा।

'पद्म पुराण' के सृष्टि खण्ड[६] मे भीष्म पुलस्त्य सवाद के रूप म इस कथा का वणन हुआ है। कथा की पूवपीठिका के रूप मे बताया गया है कि दुर्वासा मुनि ने एक विद्याधरी से सुगधित पुष्पो की एक माला ली जिसे उन्होने ऐरावत पर विराजमान इन्द्र को दे दिया। इन्द्र ने उपेक्षा भावना से उस माला को गजराज के मस्तक पर डाल दिया गजराज न उसे नीचे गिरा दिया। दुर्वासा न अपने द्वारा दिये पुष्प हार का यह तिरस्कार दख इन्द्र को श्री भ्रष्ट हो जान का शाप दिया।[७] तदनन्तर निश्रीक होकर इन्द्रादि देवता ब्रह्मा के पास गये और ब्रह्मा को साथ लकर विष्णु के पास। विष्णु ने उपाय बताया कि क्षीर समुद्र मे औषधियाँ डालकर मदराचल को मथन दण्ड एव वासुकि को रज्जु बनाकर समुद्र मथन करो मैं तुम्हारी सहायता करूँगा।[८] दत्यो को तो केवल

---

१ हरिवंश पुराण भविष्य पव अ० ३ ।१५ २७
२ वही भविष्य पव अ ३०।२८ २६
३ वही भविष्य अ० ३०।३० ३१
४ वही भविष्य अ ३ ।३२
५ ब्रह्मपुराण अ १०६
६ पद्म पुराण सृष्टि खण्ड अ ४
७ वही सृष्टि अ ४।४ २१
८ वही सृष्टि अ० ४।२२ ३१

कष्ट ही हाथ लगेगा, अमत तुम लोगो का मिलेगा जिसे पीकर तुम अमर हो जाओगे। फलस्वरूप विष्णु के आदेश से देवताओ और दैत्या ने उपयुक्त विधि से मथन किया। मथन करन से समुद्र से क्रमश ये रत्न निकले कामधेनु वारुणी, कल्प वक्ष, अप्सरा, चद्रमा विप अश्व (उच्च श्रवा), ऐरावत और लक्ष्मी आदि। शिव ने कालकूट पी लिया जिसस व नीलकठ हुए। अमृत-पान के लिए देवता दानवा मे विवाद हुआ। विष्णु ने मोहिनी रूप धारणकर दानवा को वचित करके देवताओ को अमृत-पान कराया।[1]

दुर्वासा क शाप के कारण इन्द्र का नि श्रीक हो जाना और उसके कारण अमत-प्राप्ति का विचार उठना एव विष्णु का मोहिनी रूप धारण करना—ये बातें इसस पूव इस कथा म नहीं जुड पायी थीं। यह नया विकास हुआ।

'पद्मपुराण' उत्तरखण्ड[2] मे कूर्मावतार के वणन प्रसग मे इस कथा का पुन उल्लेख हुआ है। कथा का पूर्वांश सृष्टि खड के अनुसार ही है। यहाँ विष्णु ने कच्छप रूप धारण कर मदराचल को अपनी पीठ पर साधा है। लक्ष्मी की प्राप्ति क लिए बडे जोर शोर स समुद्र-मथन आरम्भ हुआ। पहले कालकूट निकला जिसे महादेव स्वच्छा से पान कर गय। इसक अनन्तर समुद्र से निकलने वाले रत्ना का क्रम यह रहा—ज्येष्ठा देवी, वारुणी (इसको नागराज अनन्त ले गये), अप्सराएँ तथा गधव, श्वेत रग और चार दाता वाला ऐरावत उच्चै श्रवा, धन्वन्तरि पारिजात, सुरभि (इन सबका इन्द्र ले गय), लक्ष्मी, अमृत चन्द्रमा, तुलसी। लक्ष्मी विष्णु को मिली। लक्ष्मी ने देवताओं को समद्धि का वर दिया। यहा समुद्र-मथन का उद्देश्य अमत प्राप्ति नही, लक्ष्मी प्राप्ति बताया है। अमृत के बटवारे क समय सघष का इसीलिए यहा उल्लेख नही है।

'विष्णु पुराण'[3] मे भी समुद्र मथन की घटना का वणन आया है। यहा 'पद्मपुराण' क सष्टि खड और उत्तरखण्ड की कथा की पुनरावत्ति हुई है। यहाँ भी भगवान विष्णु कूर्म का रूप धारण कर मदराचल के टिकने का आधार बनत हैं। अपन चक्र-धारी और गदा-धर रूप म वे देवताओ के साथ मिलकर मथन म भी सहयोग देन हैं। एक अन्य अलक्ष्य रूप धारण कर उन्होंने मदराचल को ऊपर स दबा भी रखा था व नागराज वासुकि और देवताओ का बल-वद्धन भी कर रहे थे। इस प्रकार विष्णु बहुविध रूप मे समुद्र मथन के प्रयास मे अपनी सहायता पहुँचा रहे थे। समुद्र स निकलने वाले रत्ना का क्रम यहाँ यह है—कामधेनु, वारुणी देवी कल्पवक्ष (पारिजात) अप्सराएँ, चन्द्रमा (चन्द्रमा को महादेव न ग्रहण कर लिया), विष (इसे नागा ने ग्रहण किया, शिव न नहीं) अमत से भरा कमण्डलु लिये हुए धन्वन्तरि लक्ष्मी (लक्ष्मी विष्णु क वक्ष स्थल म विराजमान हुइ)।[5]

---

१ पद्म पुराण सृष्टि ४।३२ ९९
२ वही उत्तरखण्ड अ २३१ २३२
३ विष्णु पुराण अ० १।९।२४ ११२
४ वही १।९।८८ ९१
५ वही १।९।९२ १०५

दैत्यों ने धन्वन्तरि के हाथ से अमृत से भरा कमण्डलु छीन लिया, किन्तु विष्णु ने मोहिनी रूप धारण कर दैत्यों को मोह लिया और उनके हाथ से कमण्डलु लेकर देवताओं को दे दिया। इन्द्रादि देवताओं ने घट से उस अमृत को पी डाला। दैत्य उनपर टूट पड़े। किन्तु अमृत पान करने से देवता अब बली हो चुके थे, उन्होंने दैत्यों को परास्त कर दिया।[1]

'शिव पुराण' पूर्वार्द्ध पंचम खण्ड अ० १३ में शुक्राचार्य ने जलधर दैत्य को समुद्र-मन्थन की यह कथा सुनायी है। दैत्यों ने अपने राजा बलि के नेतृत्व में युद्ध करके देवताओं को परास्त कर दिया। विष्णु के परामर्श से देवताओं ने दैत्यों के साथ मिल कर समुद्र मथन किया। उद्देश्य अमृत पाकर अमर होना था। मन्दर मथानी, वासुकि रज्जु बने। विष्णु के कहने से देवता पहले वासुकि का सिर पकड़ने को हुए तब दैत्यों ने लपक कर स्वयं सिर पकड़ लिया। विष्णु यही चाहते थे। दैत्यों तथा दैत्यों ने प्रारम्भ में गणपति की पूजा नहीं की अतः मथन में पहले कालकूट निकला। शिव ने उसे पी लिया। मथन से जितने रत्न निकले उनमें से अच्छे अच्छे रत्न विष्णु ने पक्षपात करके देवों को दे दिये। अमृत का भी उन्हें पिलाने लगे। राहु ने देख लिया। वह पीने पहुँचा। विष्णु ने उसका सिर काट लिया। देव-दानव युद्ध हुआ। दानव पराजित हुए पाताल में जा छिपे। जलधर के प्रताप से वे पाताल से निकलने लगे।

श्रीमद्भागवत पुराण[2] में भी यह कथा आती है जो 'विष्णु पुराण' की कथा के समान है। यहाँ मथन करते समय सर्वप्रथम हालाहल निकलता है जिसे देवताओं की प्रार्थना पर शंकर पी जाते हैं।[3] उसके अनन्तर समुद्र में से निस्सृत रत्नों का क्रम यहाँ यों है कामधेनु, उच्चैःश्रवा ऐरावत कौस्तुभ नामक पद्मराग मणि कल्पवृक्ष अप्सराएँ भगवती लक्ष्मी वारुणी। सबसे अंत में धन्वन्तरि निकले। उनके हाथ में अमृत कलश और कंगन था जिन्हें असुरों ने छीन लिया।[4] विष्णु के मोहिनी अवतार और अमृत के वितरणोपरान्त देवासुर-संग्राम का यहाँ भी वर्णन है। उसमें दैत्यों की पराजय हुई।[5] शिव के मोहिनी हो जाने की कथा भी श्रीमद्भागवत में आती है।[6]

'स्कन्द पुराण' की कथा में विशेष बात इतनी ही है कि यहाँ आकाशवाणी से समुद्र मथन का सुझाव दिया गया है। मथन से सर्वप्रथम कालकूट उत्पन्न हुआ। गणेश की पूजा प्रारम्भ में नहीं की गयी थी इसलिए उन्होंने मथन में विघ्न उत्पन्न किया। मोहिनी अवतार और देव दानव युद्ध का वर्णन यथापूर्व है। वैष्णव खण्ड की कथा में

---

१ विष्णु पुराण अं० १।९।९ ६ ११२
२ भागवत पुराण अ० ८।६ १२
३ वही अ० ८।७।१२ ४२
४ वही अ० ८।८ १ ३७
५ वही अ० ८।९ ११
६ वही अ ८।१२
७ स्कन्द पुराण माहेश्वर खण्ड अ० ६ १३ तथा वैष्णव खण्ड अ० १० १४

भी कोई नवीनता नही है। वहा लक्ष्मी के साथ विष्णु का विवाह होना लिखा है।

'मत्स्यपुराण'[1] मे भी क्षीरोदधि के मथन की कथा आयी है। यहाँ समुद्र मथन का उद्देश्य लक्ष्मी प्राप्ति नहीं अमृत प्राप्ति है। शिव ने शुक्राचार्य को सजीवनी विद्या दे दी, इससे देवासुर सग्राम म मरे हुए दत्य भी जिलाये जाने लगे। दवताओ को भी अमरत्व की चिता हुई। एतदथ विष्णु के परामश स मदराचल का उपयोग करते हुए क्षीरसागर-मथन का उद्योग आरम्भ हुआ। पहले समुद्र म से क्रमश कालकूट, चद्रमा, लक्ष्मी वारुणी, उच्चश्रवा कौस्तुभ मणि तथा पारिजात की उत्पत्ति हुई, फिर अग्नि की। देवता और दानवों की प्रायना पर शिव न कालकूट पी लिया और कलास चले गये। कालकूट के बाद समुद्र म से धन्वन्तरि और अमृत का प्रादुर्भाव हुआ।

विष्णु का मोहिनी रूप धारण कर दत्यो से अमृत ले लेना देवताओ को उस पिलाना, राहु का चुपके-से पक्ति मे आ बठना चद्र सूय की शिकायत पर विष्णु का चक्र स उसका सिर काट लेना परन्तु कठ तक अमृत पहुच जान के कारण उसके सिर का अमर हो जाना आदि घटनाओ का वणन पूववत है। देवताओ ने दानवो से युद्ध म विजयी होकर अमत को विष्णु के पास धरोहर रख दिया।

इन पुराणो के अतिरिक्त यह कथा 'देवीभागवतपुराण',[2] 'अग्नि पुराण'[3] तथा 'ब्रह्मववत्त पुराण'[4] मे भी आयी है, परन्तु उनके कथा रूप म कोई नवीन उदभावना नही मिलती।

(५२) हनुमान का आकाश मे चढना

'वाल्मीकि रामायण'[5] मे अगस्त्य मुनि ने रामचद्र जी को हनुमान के बल विक्रम क विषय म बताते हुए उनकी बाल्यावस्था की कहानी सुनायी जिससे हनुमान के आकाश म बहुत ऊचे चढते जाने का वत्त स्पष्ट होता है। कथा इस प्रकार है पवन और अजना क सहयोग स हनुमान की उत्पत्ति सुमेरु पवत पर हुई वसे पिता का नाम केसरी था। एक दिन उनकी माँ कही गयी हुई थी। हनुमान को भूख लगी। उदयाचल से उदित होते हुए अरुणाभ सूय को कोई फल समझकर शिशु हनुमान उसकी ओर झपटे। वे आकाश म ऊँचे, और ऊँचे चढत जात थ और उनके पिता पवनदेव उनक स्नेहवश उनके पीछे जात हुए अपनी शीतलता स उनका बचाव सूय की उष्णता से कर रहे थे। हनुमान कई हजार योजन ऊपर आकाश म चढ गये। उधर राहु सूय को ग्रसने बढ़ा, तो हनुमान उसको भी फल समझ कर लपके। राहु की शिकायत पर इद्र न वज्र

---

१ मत्स्य पुराण अ० २४८ ५०
२ देवीभागवत पुराण अ ६।४० ४१
३ अग्नि पुराण अ० ३
४ ब्रह्मववत्त पुराण प्रकृति खण्ड अ ३६
५ वाल्मीकि रामायण उत्तर काण्ड सग ३५

प्रहार किया जिससे हनुमान की ठोढी कुछ टेढी हो गयी। 'हनु' वक्र हो जाने से इनका यह नाम पडा। बाद म हनुमान को इन्द्र कुबेर यम वरुण ब्रह्मा आदि ने अलग अलग वरदान दिय। वर पाकर चचल हनुमान ऋषियो को सतान लग। अगिरा और भृगुवशियो ने उन्हें अपनी शक्ति भूलन का शाप द दिया। बाद म शाप मोचन के लिए कहा कि यदि काई तुम्ह तुम्हारे बल का स्मरण करायगा तो तुम्ह पूव बल प्राप्त हो जायगा।

'शिव पुराण' म हनुमान-जन्म की कथा के वणन प्रसग म हनुमान द्वारा सूय को निगलन के लिए आकाश म ऊँचाई की ओर जान देवताओ द्वारा उन्ह अजर अमर बनाने और ऋषियो द्वारा उनको अपना बल भूलने का शाप दने आदि का उल्लेख 'वाल्मीकि रामायण' क समान ही है।

(५३) हनुमान द्वारा ऋषि-राक्षस (कालनेमि) को मारना

हनुमान द्वारा ऋषि राक्षस को मारने की घटना का सम्बन्ध वस्तुत उनके द्वारा कालनेमि राक्षस के वध से है जो ऋषि का कपट वेश धारण कर हनुमान के माग मे विघ्न उत्पन्न करना चाहता था।

'अध्यात्म रामायण'[1] म इस घटना का उल्लेख विस्तार से हुआ है। रावण न मयदानव द्वारा प्रदत्त शक्ति को विभीषण पर छोडा किन्तु उस शक्ति को लक्ष्मण ने आगे आकर अपनी छाती पर झेल लिया। इससे वे मूच्छित हो गये। राम को शका हुई कि लक्ष्मण अब नही बचेंगे। वे सामान्य ससारी पुरुष की भाँति विलाप करन लग। उन्होने हनुमान को आदेश दिया कि पहले की भाँति एक बार फिर वे द्रोण गिरि से महौषधि (सजीवनी) ले आवें। हनुमान यह आज्ञा पात ही चल दिये। उधर रावण के किसी गुप्तचर ने रावण के पास जाकर यह समाचार सुनाया। रावण ने सोचा कि यदि हनुमान क माग म कोई विघ्न खडा कर दिया जाय, तो वे समय पर महौषधि न ला पावेंगे और इस प्रकार लक्ष्मण की मत्यु निश्चय ही हो जायगी। अत वह अपने मित्र कालनेमि राक्षस के पास गया। कालनेमि असमय मे रावण को अपने घर आया देख अकचकाया। आन का कारण पूछा। रावण ने उससे कहा कि तुम्हें माया स मुनि का वेश बनाकर हनुमान को कुछ समय के लिए अटकाना होगा जिसस सजीवनी लाकर लक्ष्मण को जिलाने का समय निकल जाय।[2]

कालनेमि ने रावण को समझाया कि राम से द्रोह ठीक नही तुम भी मेरी तरह तपश्चर्या म समय बिताओ। किन्तु रावण ने जब उस पर क्रोध किया और आज्ञा न मानने पर उस तत्क्षण मार डालने पर तुल गया तब कालनेमि ने चुपचाप उसकी आज्ञा

---

१ अध्यात्म रामायण युद्ध काण्ड अ ६।३० ६३ और ७।१ ३३

२ वही युद्ध अ ६।३० ४१

स्वीकार की ओर चल दिया। वह हिमालय की तराई में पहुँचकर, जिस मार्ग से हनुमान जाने को थे, उस मार्ग पर माया के बल से एक आश्रम निर्मित कर स्वयं मुनिवेश धारण कर कपटी शिष्यवर्ग के साथ आ जमा।[1]

उस सुन्दर आश्रम और वहाँ के वृक्षों के सरस फलों को देखकर द्रोण गिरि की ओर आकाश मार्ग से जाते हुए हनुमान का मन लुभा गया। उन्हें प्यास भी लग आयी थी अतः उन्होंने कुछ क्षण वहाँ रुककर अपना श्रम परिहार कर लेना उचित समझा। उन्हें यह विश्वास तो था ही कि समय रहते वे द्रोण गिरि को लंका में पहुँचा सकेंगे। हनुमान ने उस आश्रम में मुनिवेशधारी कालनेमि का बड़े ध्यानपूर्वक महादेव का पूजन करते पाया। उसे नमस्कार कर उन्होंने 'राम दूत' कहकर अपना परिचय दिया और यह भी बता दिया कि उन्हीं के एक आवश्यक कार्य से मैं द्रोण गिरि को जा रहा हूँ। कालनेमि ने अपने कमण्डलु का जल पीने और अपने आश्रम के फलादि खाने का निमंत्रण हनुमान को दिया। उसने यह कहकर उन्हें बहकाया कि मैं इस समय अपने योग बल से देख रहा हूँ कि लक्ष्मण सहित सब घायल वानर उठ बैठे हैं और स्वस्थ हैं। हनुमान ने कोई वापिका दिखलाने के लिए कहा जहाँ वे इच्छा भर जल पी सकें। कालनेमि तो यही चाहता था। आश्रम में एक सुन्दर वापी थी उसी को उसने दिखला दिया। हनुमान ज्यों ही जल में घुसकर अपनी तृषा बुझाने लगे, त्योंही एक मायाविनी मकरी ने उनका एक पैर पकड़ लिया और उन्हें निगलने लगी। तब हनुमान ने उसका मुख फाड़ डाला। तुरन्त वह मकरी एक दिव्य अप्सरा बन गयी जिसका नाम धान्यमाली था। उसने बताया कि मैं एक मुनि के शाप के कारण मकरी हो गयी थी और आपके ही हाथों मेरा शाप मोचन पूर्वनिश्चित था। उसने ही बताया कि यह मुनि नहीं, कालनेमि राक्षस है और रावण ने इसे आपके मार्ग में विघ्न उत्पन्न करने के लिए भेजा है। इतना कहकर वह स्वर्गलोक को चली गयी।[2]

हनुमान पानी पीकर पुनः उस कपटी मुनि (ऋषि राक्षस) के पास आ गये। उसने उन्हें अपना शिष्य बनाने का ढोंग रचा तो हनुमान ने कसकर उसे मुक्का मारा और कहा—यह लो अपनी अग्रिम 'गुरु-दक्षिणा'। उनका घूसा लगते ही कालनेमि अपना माया-कृत रूप त्याग कर हनुमान से लड़ने लगा। हनुमान ने उसके सिर पर एक घूसा और मारा और उसी से उसका काम तमाम कर दिया।[3]

तुलसीकृत 'रामचरितमानस'[4] में भी ऋषि-राक्षस कालनेमि के हनुमान द्वारा वध किये जाने की घटना का संक्षेप में उल्लेख हुआ है किन्तु उसमें 'अध्यात्म रामायण' की उपर्युक्त कथा की आवृत्ति मात्र है। मकरी कौन सी अप्सरा थी, यह भी नहीं दिया है

१ अध्यात्म रामायण युद्ध० अ० ७।१५

२ वही युद्धकाण्ड अ ७।२१ २८

३ वही युद्ध अ० २६।३२ १/२

४ 'रामचरित-मानस' गोस्वामी तुलसीदास गीता प्रेस गोरखपुर चतुर्थ सं० [illegible], काण्ड ६ ५६ ५८

और यहाँ कालनेमि को हनुमान घूसे से नही मारते, अपितु पूछ मे लपटकर पछाड देते हैं। मरते समय कालनमि राम नाम का उच्चारण करता है जिससे राम भक्त हनुमान का मन हर्षित हो उठता है।

(५४) हनुमान का भीम से युद्ध और अर्जुन की ध्वजा पर बैठना

'महाभारत'[1] म इस घटना का उल्लेख मिलता है किन्तु अत्यन्त सक्षेप म। प्रसग यह है अर्जुन के अकल इन्द्रलोक चल जाने पर शष पाण्डव द्रौपदी के साथ जब बदरिकाश्रम की यात्रा पर गय थ तब एक दिन वायु के झोके से ईशानकोण की ओर स एक दिव्य सहस्रदल कमल आकर द्रौपदी के सामने गिरा। द्रौपदी न उस दिव्य सुगन्ध वाले कमल को भीम को दिखाकर कहा कि अगर तुम मुझ विशेष प्रम करत हो तो ऐसे ही कमल ढर सारे ले आओ। भीम अपनी प्रिया की इच्छा पूर्ति करने के लिए उधर ही चल दिये जिधर स वह सौगधिक कमल आया था। जब भीमसन कदली वन मे पहुचे तब उन्होंने हनुमान को विशाल शरीर धारण किये माग म लटे हुए पाया। हनुमान और भीम दोनो ही वायु पुत्र थ, अत हनुमान अपने भाई की रक्षा की नीयत स ही वहाँ अडे थ ताकि उस दिव्य सरोवर म जाने पर कोई उन्हें शाप न दे। सौगधिक पुष्प लान की भीम की उत्कट इच्छा जानकर हनुमान ने अपना शरीर छोटा कर लिया और भीम स वर मांगन को कहा। जब भीम ने कोई वर नही मांगा और केवल यही कहा कि आप मुझ पर प्रसन्न रहिये, तब हनुमान जी ने प्रसन्न होकर स्वयमेव भीम को यह वर दिया— जब तुम बाण और शक्ति के आघात से व्याकुल हुई शत्रुओ की सना म घुसकर सिंहनाद करोगे उस समय मैं अपनी गजना से तुम्हारे उस सिंहनाद को और बढ़ा दूगा। इसके अतिरिक्त मैं अर्जुन की ध्वजा पर बैठकर ऐसी भीषण गजना करूगा जो शत्रुओ के प्राणो को हरने वाली होगी जिससे तुम लोग उन्हे सुगमता से मार सकोग।[2] यह कहकर हनुमान ने भीम को दिव्य सरोवर का जिसमे सौगन्धिक कमल खिलत है माग बता दिया और अन्तर्धान हो गये।

(५५) हरिश्चन्द्र की सत्यप्रियता एव दानशीलता

हरिश्चन्द्र इक्ष्वाकुवशी राजा त्रिशकु के पुत्र थे। इनकी माता का नाम सत्यवती था।[3] इन्होने राजसूय यज्ञ का अनुष्ठान किया था। य याचको के मागने पर उनकी मांग से पाच गुना अधिक धन दान करते थे। ब्राह्मणो को अपने दान धम स सदा सन्तुष्ट करते

---

१ महाभारत वनपर्व अ०१५१।१६ १९

२ व ही वनपव अ १५१।१७ १७ १/२

३ महाभारत सभा पव अ १२।१ के बाद दाक्षिणात्य पाठ और भागवत पुराण ९।७

ये इसी कारण स इन्द्र सभा म सम्मानपूर्वक विराजते हैं। इनकी सम्पत्ति को देखकर चकित हो स्वर्गीय राजा पाण्डु ने नारद के द्वारा युधिष्ठिर के पास राजसूय यज्ञ करने का सदेश भेजा था।[1]

हरिश्चन्द्र लोक मे अपनी सत्यवादिता और दानशीलता तथा उनके कारण नाना प्रकार के कष्ट सहने के लिए ही आदरणीय और प्रसिद्ध हैं। वैदिक साहित्य मे हरिश्चन्द्र का उल्लेख तो मिलता है, किन्तु उनकी सत्यवादिता का रूप वहाँ नहीं उभर पाया है। इसके विपरीत, उनकी मिथ्यावादिता का आख्यान ही शुन शेप की कथा म हुआ है। वदिक साहित्य मे ऐसी कथा आती है कि हरिश्च द्र पहले निस्सतान थे। सतान के लिए उन्होने वरुण की आराधना की और उनको अपनी पहली सतान भेंट चढाने के लिए प्रतिश्रुत हुए। तब रोहिताश्व की उत्पत्ति हुई। परन्तु हरिश्चन्द्र पुत्र मोह के कारण रोहित को वरुण को भेंट न चढा पाये। तब वरुण ने उन्हे कष्ट पहुँचाया। वरुण के प्रीत्यर्थ हरिश्चन्द्र ने अजीगत के पुत्र शुन शेप को खरीदकर मँगवाया, परन्तु विश्वामित्र न आकर उसे बचाया। 'ऋग्वेद'[2] में शुन शेप द्वारा अपनी बधन मुक्ति के लिए वरुण स की गयी प्रार्थना का उल्लेख हुआ है। इस प्रसग को 'ऐतरेय ब्राह्मण'[3], 'तैत्तिरीय सहिता'[4], 'काठक सहिता'[5] 'मैत्रेयोपनिषद'[6] तथा 'सांख्यायन श्रौत सूत्र'[7] म विस्तार प्राप्त हुआ है।

हरिश्चन्द्र की सत्यवादी प्रतिमा पौराणिक साहित्य म उत्कीर्ण की गयी है। महाभारत मे तो उनका दानी रूप ही सामने आता है। परवर्ती साहित्य म ही इनकी सत्य निष्ठा से सम्बधित चरित्र का विकास हुआ है।

'श्रीमदभागवत'[8] मे हरिश्चद्र के चरित्र के मिथ्याचारी और सत्याचारी—दोनो रूप एक साथ दिये हैं। पहले शुन शेप की कथा देकर बताया है कि किस प्रकार अपने पुत्र रोहित को बचाने के लिए हरिश्चद्र बार बार वरुणदेव से झूठ बोलते रहे और पुत्र बलि देने मे टालमटोल करते रहे। कि तु आगे उनके विषय मे यह कहा गया है कि हरिश्चद्र को अपनी पत्नी के साथ सत्य मे दृढतापूर्वक स्थित देखकर ऋषि विश्वामित्र बहुत प्रसन्न हुए। उन्होंने उन्हे ज्ञान का उपदेश किया।[9]

'देवीभागवत पुराण'[10] मे इनकी सत्यवादिता और दानप्रियता का परिचय विस्तार

---

१ महाभारत सभा पव अ० १२।११ २६
२ ऋग्वेद १।२४।१
३ ऐतरेय ब्राह्मण ७।१८ १८
४ तैत्तिरीय सहिता ५।२।१।३
५ काठक सहिता १९ ११
६ मत्रयोपनिषद् १।४
७ सांख्यायन श्रौत सूत्र १५।१७ २
८ श्रीमदभागवत पुराण ९।७
९ वही ९।७।२४
१० देवीभागवत पुराण स्कन्ध ७ अ० १७ २७

स दिया गया है। कथा इस प्रकार है अयोध्या के राजा हरिश्चद्र ने राजसूय यज्ञ किया। उसमे उन्होंने वसिष्ठ ऋषि का खूब सम्मान किया। वसिष्ठ का एक दिन इन्द्रसभा म जाना हुआ। वहाँ उनकी भेंट विश्वामित्र स हुई। वसिष्ठ ने बढा चढाकर हरिश्चद्र की प्रशसा की। यहाँ तक कह डाला कि हरिश्चद्र के समान राजा न तो आज तक हुआ न आगे होगा।[1] वसिष्ठ और विश्वामित्र म इस बात को लेकर काफी तक वितर्क हुआ। परिणाम यह हुआ कि विश्वामित्र ने हरिश्चद्र को असत्यवादी सिद्ध करने का बीडा उठा लिया।

एक बार हरिश्चन्द्र आखेट करते हुए एक गहन वन म जा पहुँचे। वहाँ उन्होंने एक रोती हुई स्त्री देखी। वह स्त्री विश्वामित्र की घोर तपस्या को देखकर दुखी थी। राजा न उसे सान्त्वना और अभय दिया। विश्वामित्र इसस और भी चिढ गय। फिर विश्वामित्र ने एक राक्षस को शूकर वेश म भजा। उसने राजा का उपवन उजाड डाला। हरिश्चन्द्र उसका पीछा करते हुए वन म पहुँचे। वहाँ विश्वामित्र एक ब्राह्मण का वेश धारण किये हुए मिले। उन्होंने माया द्वारा एक लडका और लडकी की रचना कर राजा हरिश्चन्द्र को दिखाया और कहा कि उन्ह उनके विवाह की चिन्ता सता रही है। ब्राह्मण न उनके विवाह के लिए राजा स दान का सकल्प ले लिया। फिर राजधानी म पहुँचकर लडकी के दहेज मे उनका सारा राज्य ले लिया और दान की दक्षिणा के रूप म उन्ह पत्नी और पुत्र सहित वाराणसी म बिकने को बाध्य किया। विश्वामित्र ने ब्राह्मण का रूप धारण कर हरिश्चद्र की पत्नी और पुत्र रोहित को खरीद लिया। यम ने चाण्डाल का रूप धारणकर हरिश्चन्द्र को खरीद लिया। चाण्डाल ने हरिश्चन्द्र को अपने श्मशान-घाट पर अत्येष्टि सस्कार के इच्छुक लोगो से कर वसूल करने के काम पर तैनात किया।

जिस ब्राह्मण ने हरिश्चन्द्र की पत्नी शय्या को खरीदा था उसका व्यवहार उसके साथ हृदयहीनतापूर्ण होता था। एक दिन रोहित उस ब्राह्मण के अग्निहोत्र कर्म के लिए समिधा एकत्र करने के लिए वन म गया था कि विश्वामित्र प्रेरित काले नाग ने उसे डँस लिया और वह तत्क्षण मर गया। उसके साथियो से समाचार पाकर शय्या वन म पहुची और रोती-पीटती उसे ले आयी। किन्तु, उसके स्वामी ब्राह्मण न घर का सारा कार्य निपटाये बिना पुत्र का दाह कर्म करने के लिए जाने की छुट्टी नही दी। आधी रात होने पर शय्या मृत पुत्र को हाथो पर उठाये श्मशानघाट पहुँची। निशीथ म उसके करुण विलाप को सुनकर लोगो ने उसे पिशाचिनी समझा और उसको पीटा और उसे चाण्डाल-राज के सिपुर्द कर दिया। चाण्डाल ने हरिश्चन्द्र को उस स्त्री का वध करने की आज्ञा दी। स्त्री ने कहा कि पुत्र का दाह कर्म कर लेने के बाद ही उसका वध किया जाय। श्मशान मे पहुच कर रानी शय्या राजा हरिश्चन्द्र का नाम लेकर विलाप करने लगी तब हरिश्चन्द्र ने अपनी स्त्री और मृत पुत्र को पहचाना। उन्हें बडा शोक हुआ। उन्होंने और शय्या ने अपने पुत्र के साथ ही चिता पर जल मरने का निश्चय किया। तभी इन्द्रादि

1 देवीभागवत पुराण ७।१७।५३

देवताओं ने प्रकट होकर अमृत से रोहित को जिला दिया। इन्द्र ने हरिश्चन्द्र और शैव्या को स्वर्ग ले जाने की इच्छा प्रकट की, किंतु हरिश्चन्द्र ने अपने स्वामी चाण्डाल की अनुमति पाये बिना स्वर्ग जाना भी स्वीकार नहीं किया। तभी धर्म ने जो अब तक चाण्डाल बना हुआ था, प्रकट होकर सारा रहस्योद्‌घाटन किया। राजा हरिश्चन्द्र अपनी सत्यवादिता की परीक्षा में उत्तीर्ण हुए। राजा ने अपना पुण्य अयोध्यावासियों में बाँटा और रोहित को राज्य सौंपकर अयोध्या के वृद्ध नागरिकों तथा अपनी पत्नी को साथ लेकर स्वर्गारोहण किया।

'मार्कण्डेय पुराण'[1] में इस कथा का रूप अधिकांशतः 'देवीभागवत पुराण' की उपरिलिखित कथा से मिलता जुलता है केवल कुछ बातों में भिन्नता है। इसमें वसिष्ठ-विश्वामित्र में हरिश्चन्द्र की श्रेष्ठता को लेकर विवाद नहीं होता और न विश्वामित्र हरिश्चन्द्र को मिथ्याचारी सिद्ध करने का बीड़ा ही उठाते हैं। यहाँ विश्वामित्र अपने को दान प्राप्त करने योग्य ब्राह्मण सिद्ध कर राजा हरिश्चन्द्र से उनका समुद्र-पर्यन्त समस्त राज्य, समस्त राज्य कोष प्रासाद सेना आदि सब-कुछ दान में माँग लेते हैं। उनके पास केवल उनके पुत्र रोहिताश्व और पत्नी शैव्या को छोड़ते हैं। हरिश्चन्द्र ने जो राजसूय यज्ञ किया था, उसकी दक्षिणा भी विश्वामित्र ने मांगी। राजा ने एक माह के भीतर वह दक्षिणा चुकाने का वचन दिया। विश्वामित्र ने हरिश्चन्द्र का सारा राज्य लेकर उसे अपना बनाकर अपने राज्य से निकल जाने की आज्ञा दी। राजा ने शंकर भगवान द्वारा बसायी काशी नगरी को त्रिलोक से न्यारी मान कर वहां जाने का निश्चय किया। पर मार्ग में ही एक महीना का समय व्यतीत हो गया। अन्तिम दिन भी आधा बचा था, तब वे लोग काशी में पहुँचे। सामने विश्वामित्र मिले। विश्वामित्र ने सूर्यास्त के पूर्व दक्षिणा न मिलने पर शाप देने का डर दिखाया। शैव्या और रोहिताश्व को एक वृद्ध ब्राह्मण खरीद ले गया और हरिश्चन्द्र को एक चाण्डाल। इसके आगे की कथा 'देवीभागवत पुराण' के अनुसार ही है। एक स्थल पर अंतर है कि शैव्या जब अपने मृत पुत्र को लेकर विलाप करती हुई आती है उसके कुछ क्षण पूर्व ही हरिश्चन्द्र श्मशान में रात्रि के अंधकार में खड़े-खड़े स्वप्न भी देखते हैं कि उनके पुत्र को साँप ने काट खाया है और उनकी स्त्री विलाप कर रही है। आँखें खोलते ही सामने शैव्या मृत पुत्र को हाथों पर लिये मिलती है। जब इन्द्रादि देवता उपस्थित होते हैं तब उनके साथ विश्वामित्र भी आते हैं। रोहिताश्व को इन्द्र यहाँ भी अमृत से जिला देते हैं। हरिश्चन्द्र अपने पुरवासियों के साथ सदेह स्वर्ग चले जाते हैं।

●●●

---

१ मार्कण्डेय पुराण अ० ७-८

परिशिष्ट

सहायक पुस्तक-सूची

हिन्दी

१ अपभ्रंश-साहित्य — डॉ० हरिवंश कोछड, प्रका० भारती साहित्य मंदिर दिल्ली, प्र० सं०, १९५६ ई०।

२ अष्टादश पुराण-दर्पण — पं० ज्वालाप्रसाद मिश्र प्रका० श्री वेंकटेश्वर प्रेस, बम्बई।

३ जैन साहित्य और इतिहास — नाथूराम प्रेमी प्रका० हिन्दी ग्रन्थ रत्नाकर कार्यालय, बम्बई, द्वि० सं०, अक्तूबर, १९५६ ई०।

४ पद्मावत मूल और संजीवनी व्याख्या — संपा० डॉ० वासुदेवशरण अग्रवाल, साहित्य सदन, चिरगाँव (झाँसी) प्र० सं० सं० २०१२ वि०।

५ पुराण दिग्दर्शन — पं० माधवाचार्य शास्त्री (श्री विद्याविवर्द्धन पुस्तकालय नवलगढ से प्राप्त)।

६ पुराण-कथा-कौमुदी — पं० रघुनाथदत्त बधु नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली प्र० सं०, १९६२ ई०।

७ पुराण वर्म — कालूराम शास्त्री, प्रका० श्रीकृष्ण प्रेस, अमरोधा, कानपुर, द्वि० सं०, सं० १९८६ वि०।

८ पौराणिकता का हिन्दी साहित्य पर प्रभाव — डॉ० इन्द्रावती सिनहा, (शोध प्रबंध टंकित प्रति) आगरा विश्वविद्यालय पुस्तकालय में सुरक्षित।

९ ब्रज लोक-साहित्य का अध्ययन — डा० सत्येन्द्र प्रका० साहित्य रत्न भण्डार आगरा, तृ० सं०, १९६१ ई०।

१० भारतीय आर्यभाषा और हिन्दी — डा० सुनीतिकुमार चाटुर्ज्या, राजकमल प्रकाशन दिल्ली, प्र० सं०, १९५४ ई०।

११ मध्ययुगीन हिन्दी साहित्य का लोकतात्विक अध्ययन — डॉ० सत्येन्द्र, प्रका० विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा, प्र० सं०, १९६२ ई०।

१२ मानस की राम-कथा — आचार्य परशुराम चतुर्वेदी प्रका० किताब महल, इलाहाबाद, प्र० सं० १९५३ ई०।

१३ मानस माधुरी — डा० बल्देव प्रसाद मिश्र, प्रका० साहित्य रत्न भण्डार, आगरा, प्र० सं०, दिसम्बर १९५८ ई०।

१४	मार्कण्डेय पुराण एक सांस्कृतिक अध्ययन	डा० वासुदेवशरण अग्रवाल, हिन्दुस्तानी एकेडेमी इलाहाबाद प्र० सं०, १९६१ ई०।
१५	राम-कथा उत्पत्ति और विकास	डॉ० कामिल बुल्के।
१६	रामचन्द्रिका (भाग १ २)	आचार्य केशवदास सपादक लाला भगवानदीन, प्रका० रामनारायण लाल १९५० ई०।
१७	रामचरितमानस	गोस्वामी तुलसीदास गीता प्रेस गोरखपुर।
१८	रामचरितमानस की अन्तकथाओ का आलोचनात्मक अध्ययन	डा० वागीशदत्त पाण्डेय शोध प्रबन्ध की टंकित प्रति आगरा विश्वविद्यालय पुस्तकालय मे सुरक्षित।
१९	रामावतार शर्मा निबन्धावली	महामहोपाध्याय प० रामावतार शर्मा, प्रका० बिहार राष्ट्रभाषा परिषद् पटना ३ प्रथम सस्करण।
२०	लोकसाहित्य विज्ञान	डा० सत्येन्द्र प्रका० शिवलाल अग्रवाल एण्ड क० आगरा प्र० स०, १९६२ ई०।
२१	वैदिक देव शास्त्र (वैदिक माइथालाजी मैक्डॉनेल)	सपा० डा० सूर्यकान्त प्रका० भारत भारती प्रा० लि० दिल्ली ६ प्र० स० १९६१ ई०।
२२	वैदिक माइथालाजी	श्री मैक्डानेल अनु० रामकुमारराय प्रका० चौखम्बा विद्याभवन वाराणसी प्र० सं० २०१८ वि०।
२३	सस्कृत साहित्य का सक्षिप्त इतिहास	वाचस्पति गैरोला प्रका० चौखम्बा विद्याभवन वाराणसी प्र० स०, १९६० ई०।
२४	हरिवंश पुराण का सास्कृतिक विवेचन	श्रीमती वीणापाणि पाण्डे प्रकाशन शाखा सूचना विभाग उत्तर प्रदेश प्र० स० १९६० ई०।
२५	हिन्दी के पौराणिक नाटकों का अध्ययन	डा० देवर्षि सनाढ्य, शोध प्रबन्ध की टंकित प्रति अलीगढ़ विश्वविद्यालय पुस्तकालय मे सुरक्षित।
२६	हिन्दी महाकाव्य का स्वरूप विकास	डा० शम्भूनाथसिंह, प्रका० हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय वाराणसी प्रथमावृत्ति नवम्बर १९५६ ई०।
२७	हिन्दी साहित्य का बृहत इतिहास (प्रथम भाग) —हिन्दी साहित्य की पीठिका	सपा० डा० राजबली पाण्डेय प्रका० नागरी प्रचारिणी सभा काशी प्र० स० स० २०१५ वि०।
२८	हिन्दी साहित्य का बृहत इतिहास (षोडश भाग)	सपा० महापडित राहुल साकृत्यायन और डा० कृष्णदेव उपाध्याय, प्रका० ना० प्र० स०, काशी, प्र० स०।
२९	हिन्दी विश्वकोश	नागेन्द्रनाथ वसु।
३०	हिन्दुत्व	रामदास गौड प्रका० बाबू शिवप्रसाद गुप्त, सेवा उपवन काशी।

संस्कृत/पालि/प्राकृत/अपभ्रंश

१ अग्नि पुराणम	प्रका० मनसुख राय मोर ५ क्लाइव रो कलकत्ता १ प्र० स०, १९५७ (२०१४ वि०)।
२ अथववेद	श्री विद्याविवद्धन पुस्तकालय, नवलगढ (राज०) से प्राप्त।
३ अदभुत रामायण (भापा टीका)	प० ज्वाला प्रसाद मिश्र।
४ अध्यात्म रामायण (हिन्दी अनुवाद सहित)	अनु० मुनिलाल प्रका० गीता प्रेस गोरखपुर द्वि० स०, १९९१ वि०।
५ अनामक जातक-जातक	सपा० भदन्त आनन्द कौसल्यायन।
६ आनन्द रामायण	काशी पण्डित पुस्तकालय, काशी।
७ ऋग्वद भाष्यम्	स्वामी दयानन्द सरस्वती, श्री विद्याविवद्धन पुस्तकालय नवलगढ स प्राप्त।
८ उत्तर पुराण	गुणभद्र कृत।
९ कथा सरित्सागर (सामदेव)	सपा० गापीकृष्ण कौल, प्रका० सस्ता साहित्य मडल नयी दिल्ली, प्र० स० १९५९ ई०।
१० कथा-सरित्सागर (प्रथम खड) का भूमिका भाग	म० डा वासुदेवशरण अग्रवाल प्रका० विहार राष्टभापा, परिपद पटना
११ कथा-सारित्सागर (मामदव)	अनु० स्व० प० केदारनाथ शर्मा सारस्वत विहार राष्टभापा परिपद पटना प्रथम सस्करण १९६० ई०।
१२ कल्कि पुराण (भापानुवाद)	प्रका० श्री भारत धम महामण्डल काशी, स० १९९३वि०।
१३ कल्कि-पुराण (भापानुवाद)	अनु० प बलदेव प्रसाद मिश्र, प्रका०-श्री वेंकटेश्वर प्रेस वम्वई माग शीप स० १९५९ वि०।
१४ कालिदास-ग्रथावली	सपा०-प० सीताराम चतुर्वेदी प्रका० अखिल भारतीय विक्रम परिपद काशी, प्र० स० स० २००१ वि०।
१५ कूम्म-पुराणम्	प्रका० मनसुखराय मोर ५ क्लाइव रो कलकत्ता, प्र० स०, १९६२ ई०।
६ कूम्म पुराण (मूल)	सपा० नीलमणि मुखोपाध्याय, प्रका० एशियाटिक, सासायटी ५७, पाकस्टीट कलकत्ता, १८८६ ई०।
गरुड़ पुराण	नवलकिशोर प्रेस लखनऊ।
·ादोग्य उपनिपद टीका)	गीता प्रस गोरखपुर।

१९	जमिनीयाश्वमेध (सटीक) (महाभारत पत्रिका के अन्तगत)	प्रका० गीता प्रेस गोरखपुर, वर्ष ४, संख्या ६ से ११ तक।
२०	देवी भागवतांक ('कल्याण' का विशेषांक वर्ष ३४ संख्या १)	गीता प्रेस गोरखपुर।
२१	देवी भागवत पुराणम (पूर्वार्द्ध और उत्तरार्द्ध)	प्रका० मनसुखराय मोर, ५ क्लाइव रो कलकत्ता १९६० ई०।
२२	नल चम्पू	त्रिविक्रम भट्ट निर्णय सागर प्रेस बम्बई, तृ० सं०, १९३१ ई०।
२३	नलोत्य काव्यम्	प्रका० वेंकटेश्वर प्रेस बम्बई ४।
२४	नारद पुराणम्	अनु० रामचन्द्र शर्मा, सनातन धर्म प्रेस मुरादाबाद।
२५	निरुक्त	मुनि यास्क गुरुग्रन्थमाला प्रकाशन ५ क्लाइव रो कलकत्ता १
२६	नैषधीय चरितम	श्री हर्ष टीकाकार पं० शिवदत्त शर्मा, निर्णय सागर प्रेस बम्बई सप्तम सं० १९३३ ई०।
२७	पउम चरिय	विमल सूरि सम्पा० डा० जकोबी जैन धर्म प्रचारक सभा, भावनगर, १९१४ ई०।
२८	पदम पुराण (भाषा)	स्वर्ग खण्ड लखनऊ १८९५ ई०।
		तृतीय खण्ड , १९०६ ई०।
		चतुर्थ (पाताल) खण्ड १९०८ ई०।
		(ब्रह्म) , १९२४ ई०।
		सप्तम खण्ड १९२४ ई०।
२९	पदमपुराण (पाँच भाग)	मनसुखराय मोर ५ क्लाइव रो कलकत्ता १ १९५७ ई०।
३०	पुराण विषयानुक्रमणी (प्रथम भाग)	डा० राजबली पाण्डेय काशी विश्वविद्यालय, काशी।
३१	ब्रह्माण्ड पुराण	अनु० दुर्गाप्रसाद, नवलकिशोर प्रेस लखनऊ सं० १८८६ वि०।
३२	ब्रह्म पुराण भाग (१ २)	प्रका० मनसुखराय मोर ५ क्लाइव रो कलकत्ता, प्र० सं०, १९५४ ई०।
३३	ब्रह्मववर्त्त पुराण (भाग १ २)	प्रका० राधाकृष्ण मोर ५ क्लाइव रो कलकत्ता १, प्र० सं० १९५५ ई० (सं० २०१२ वि०)।
३४	संक्षिप्त ब्रह्मवैवर्त पुराणांक (कल्याण)	गीता प्रेस, गोरखपुर वर्ष ३७ अंक १।

३५ बृहदारण्यक उपनिषद्	गीता प्रेस, गोरखपुर।
३६ भविष्य पुराण (भाषा)	अनु० श्री दुर्गाप्रसाद प्रका० नवलकिशोर प्रेस लखनऊ, सन १८९१ ई०।
३७ भागवत पुराण (दो खण्ड)	गीता प्रेस, गोरखपुर, तृतीय स०, स० २०१३ वि०।
३८ मत्स्य पुराण (सटीक)	अनु० प० वस्तीराम तथा कालीचरण, अवध अखबार, लखनऊ मुद्रक नवलकिशोर प्रेस जुलाई, सन् १८९२ ई०।
३९ मत्स्य महापुराण	अनु० रामप्रताप त्रिपाठी शास्त्री, हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग प्रथम सस्करण, स० २००३ वि०।
४० मत्स्य पुराण	नन्दलाल मोर ५ क्लाइवरो कलकत्ता १ प्र० सस्करण १९५४ ई० (स० २०११)।
४१ मार्कण्डेय पुराण (भाषा तीन खण्ड)	सम्पा० गोविन्द शास्त्री, आर्य महिला हितकारिणी महापरिषद बनारस द्वितीय सस्करण १९३१ ई०।
४२ मार्कण्डेय पुराण (भाषा)	अनु० प० कन्हैयालाल मिश्र, प्रका० वेंकटश्वर प्रेस, बम्बई सन १९५९ ई०।
४३ लिंग पुराण	मनसुखराय मोर, ५ क्लाइव रो, कलकत्ता १, प्र० सस्करण १९६० ई० (स० २०१७ वि०)।
४४ वामन पुराण	नवलकिशोर प्रेस लखनऊ।
४५ वायु पुराण	अनु० रामप्रताप त्रिपाठी शास्त्री हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग स० २००८ वि०।
४६ वायु पुराण	अनु० मनसुखराय मोर ५ क्लाइव रो कलकत्ता १, १९५९ ई० (स० २०१६)।
४७ वाराह पुराण	अनु० श्री ऋषिकेश शास्त्री, बगाल एशियाटिक सोसाइटी, स० १८९३ वि०।
४८ वाल्मीकि रामायण	(हिन्दी भाषानुवाद सहित) अनु० चतुर्वेदी द्वारका प्रसाद शर्मा, रामनारायण लाल, पब्लिशर्स और बुक्सेलर्स इलाहाबाद, प्र० स०, १९२७ ई०।
४९ विष्णु पुराण	अनु० श्री मुनिलाल गुप्त गीता प्रेस, गोरखपुर स० २००९
५० शतपथ ब्राह्मण	भाष्य श्री वासुदेव ब्रह्म भागवत।
५१ शिव पुराण (भाषा)	अनु० प्यारेलाल, प्रका० तेजकुमार बुक डिपो त्रयोदश स०, १९५६ ई०।
५२ स्कन्द महापुराण (पांच भाग)	मनसुखराय मोर ५ क्लाइव रो, कलकत्ता सस्करण क्रमश: सन् १९५९ १९६०, १९६१ १९६२।

५३ स्कन्द पुराण (काशी खण्ड—भाषा) — अनु० नारायण पति, वेंकटेश्वर स्टीम प्रेस, बम्बई, संवत १९६५ वि०।

५४ संस्कृत वाङमय — डा० बलदेव उपाध्याय।

५५ हरिवंश पुराण (भाषानुवाद) — अनु० पं० ज्वाला प्रसाद मिश्र, प्रका० श्री वेंकटेश्वर स्टीम प्रेस बम्बई, सन १९५४ ई०, तदनुसार सम्वत २०११ वि०।

५६ हरिवंश पुराण (सटीक) — (महाभारत पत्रिका के अंतर्गत) गीता प्रेस गोरखपुर वर्ष ४ संख्या १ से ८ तक।

अंग्रेजी

१ ए हिस्ट्री आफ इण्डियन लिटरेचर (खण्ड १) — डा० विंटरनित्ज कलकत्ता विश्वविद्यालय १९२७ ई०।
खण्ड २ — „ „ १९२७ ई०।

२ ए हिस्ट्री आफ संस्कृत लिटरेचर — डा० ए० बी० कीथ, आक्सफर्ड १९२८ ई०।

३ एन्श्येन्ट इण्डियन हिस्टारिकल ट्रेडिशन — एफ० ई० पार्जिटर आक्सफर्ड १९२२ ई०।

४ चम्बर्स काम्पैक्ट डिक्शनरी — डब्ल्यू० एण्ड आर० चम्बर्स लि० लन्दन एण्ड एडिनबरा

५ गुजरात एण्ड इट्स लिटरेचर — के० एम० मुंशी लांगमन्स १९३५ ई०।

६ डाइनेस्टीज आफ द कलि एज — एफ० ई० पार्जिटर आक्सफर्ड १९१३ ई०।

७ डिक्शनरी आफ फोक्लोर (भाग २) — मेरिया लीच।

८ डिक्शनरी आफ दि वर्ल्ड लिटरेचर — शिप्ले।

९ दि ओसन आफ स्टोरी — पेंजर।

१० दि गरुड पुराण — सम्पादक पं० मन्मथनाथ दत्त शास्त्री कलकत्ता सोसाइटी फार रिससीटेशन आफ इण्डियन लिटरेचर ३ फुरियारपुकुर स्ट्रीट पो० आ० शामबाजार कलकत्ता संस्करण १९०८ ई०।

११ दि पुराण इंडेक्स (जिल्द १ २ और ३) — सम्पादक डा० के० आर० रामचन्द्र दीक्षितार, प्रका० मद्रास विश्वविद्यालय १९५१, १९५२ ई०।

१२ दि ब्रह्मवैवर्त्त पुराण — अनु० राजेन्द्रनाथ सेन दि दाणिनि आफिस भुवनेश्वरी

ि ब्रह्माण्ड व प्रकृति खण्ड) आश्रम बहादुर गज, इलाहाबाद।

१३ दि हिस्ट्री एण्ड कल्चर आफ दि इण्डियन पीपुल दि क्लासिकल एज जिल्द २ — सम्पा० आर० सी० मजूमदार प्रका० भारतीय विद्या भवन बम्बई प्रथम सस्करण १९५४ ई०।

१४ फाक टेल — स्टिथ थामसन।

१५ माइथॉलाजी — एडिथ हैमिल्टन ए मेन्टर बुक दि न्यू अमेरिकन लाइब्रेरी न्यूयार्क अष्टम सस्करण, नवम्बर १९५७ ई०।

१६ रशियन फोकटेल — सोलोकोव।

१७ वेदिक इडेक्स — मैक्डॉनेल आगरा विश्वविद्यालय पुस्तकालय म प्राप्त।

१८ स्टन्डर्ड डिक्शनरी आफ फोक्लोर माईथालाजी एण्ड लीजेण्ड [भाग १ २ — सम्पा० मेरिया लीच, न्यूयार्क प्र० म० १९५६ ई०।

१९ स्टोरी आफ नल — सम्पा० एम० मोनियर विलियमस आक्सफर्ड प्रिफेस द्वितीय सस्करण।

२० हिन्दूइज्म — एम० मोनियर विलियमस, सुशील गुप्त (इण्डिया) लि०, कलकत्ता द्वितीय सस्करण, १९५१ ई०।

सहायक लेख सूची

१ आख्यानक काव्य — सत्यजीवन वर्मा नागरी प्रचारिणी पत्रिका काशी, भाग ६, अक ३ स० १९८२ वि० पृ० २८७।

२ नरपति व्यास कृत 'नल दमयती कथा — डा० शिवगोपाल मिश्र नागरी प्रचारिणी पत्रिका, काशी भाग २०, अक २, अप्रल जून १९५९ ई०।

३ भारत की स्वर्णयुगीन सस्कृति का परिचायक— मार्कण्डेय पुराण — डा० वासुदेवशरण अग्रवाल साप्ताहिक हिन्दुस्तान, नयी दिल्ली।

५३	स्कन्द पुराण, (काशी खण्ड—भाषा)	अनु० नारायण पति, वेंकटेश्वर स्टीम प्रेस बम्बई, सवत १९६५ वि० ।
५४	संस्कृत वाङमय	डा० बलदेव उपाध्याय ।
५५	हरिवंश पुराण (भाषा नुवाद)	अनु० प० ज्वाला प्रसाद मिश्र प्रका० श्री वेंकटेश्वर स्टीम प्रेस बम्बई, सन १९५४ ई०, तदनुसार सम्वत २०११ वि० ।
५६	हरिवंश पुराण(सटीक)	(महाभारत पत्रिका के अंतर्गत) गीता प्रेस गोरखपुर वर्ष ४ संख्या १ से ८ तक ।

अंग्रेजी

१	ए हिस्ट्री आफ इण्डियन लिटरेचर (खण्ड १)	डा० विंटरनित्ज कलकत्ता विश्वविद्यालय १९२७ ई० ।
	,, खण्ड २	,, ,, ,, १९२७ ई० ।
२	ए हिस्ट्री आफ संस्कृत लिटरेचर	डा० ए० बी० कीथ, आक्सफर्ड १९२८ ई० ।
३	एन्श्यन्ट इण्डियन हिस्टारिकल ट्रेडिशन	एफ० ई० पार्जिटर आक्सफर्ड १९२२ ई० ।
४	चैम्बर्स काम्पैक्ट डिक्शनरी	डब्ल्यू० एण्ड आर० चैम्बर्स लि० लन्दन एण्ड एडिनबर्ग
५	गुजरात एण्ड इट्स लिटरेचर	के० एम० मुंशी लांगमन्स १९३५ ई० ।
६	डाइनेस्टीज आफ् द कलि एज	एफ० ई० पार्जिटर आक्सफर्ड १९१३ ई० ।
७	डिक्शनरी आफ फोकलोर (भाग २)	मेरिया लीच ।
८	डिक्शनरी आफ दि वर्ल्ड लिटरेचर	शिप्ले ।
९	दि ओसेन आफ स्टोरी	पेंजर ।
१०	दि गरुड पुराण	सपादक प० मन्मथनाथदत्त शास्त्री कलकत्ता सोसाइटी फार रिसीटेशन आफ इण्डियन लिटरेचर, ३ फुरियार पुकुर स्ट्रीट पो० आ० शामबाजार कलकत्ता, संस्करण १९०८ ई० ।
११	दि पुराण इडेक्स (जिल्द १ २ और ३)	सपादक डा० के० आर० रामचन्द्र दीक्षितार, प्रका० मद्रास विश्वविद्यालय १९५१, १९५२ ई० ।
१२	दि ब्रह्मवैवर्त्त पुराण	अनु० राजेन्द्रनाथ सेन दि पाणिनि आफिस, भुवनेश्वरी

५३ स्कन्द पुराण (काशी खण्ड—भाषा) अनु० नारायण पति वेंकटेश्वर स्टीम प्रेस बम्बई, सवत १९६५ वि०।

५४ सस्कृत वाङमय डा० बलदेव उपाध्याय।

५५ हरिवंश पुराण (भाषानुवाद) अनु० प० ज्वाला प्रसाद मिश्र, प्रका० श्री वेंकटेश्वर स्टीम प्रेस बम्बई, सन १९५४ ई०, तदनुसार सम्वत २०११ वि०।

५६ हरिवंश पुराण (सटीक) (महाभारत पत्रिका के अतगत) गीता प्रेस गोरखपुर वर्ष ४ सख्या १ से ८ तक।

अंग्रेजी

१ ए हिस्ट्री आफ इण्डियन लिटरेचर (खण्ड १) डा० विंटरनित्ज, कलकत्ता विश्वविद्यालय, १९२७ ई०।
खण्ड २ , , , १९२७ ई०।

२ ए हिस्ट्री आफ सस्कृत लिटरेचर डा० ए० बी० कीथ, आक्सफर्ड १९२८ ई०।

३ एन्शियन्ट इण्डियन हिस्टारिकल ट्रेडिशन एफ० ई० पार्जिटर आक्सफर्ड १९२२ ई०।

४ चम्बर्स काम्पैक्ट डिक्शनरी डब्ल्यू० एण्ड आर० चम्बर्स लि० लन्दन एण्ड एडिनबरा

५ गुजरात एण्ड इटस लिटरेचर के० एम० मुशी लॉगमन्स १९३५ ई०।

६ डाइनेस्टीज आफ द कलि एज एफ० ई० पार्जिटर आक्सफर्ड १९१३ ई०।

७ डिक्शनरी आफ फोक्लोर (भाग २) मेरिया लीच।

८ डिक्शनरी आफ दि वर्ल्ड लिटरेचर शिप्ले।

९ दि ओसेन आफ स्टोरी पेंजर।

१० दि गरुड पुराण सपादक प० मन्मथनाथदत्त शास्त्री कलकत्ता सोसाइटी फार रिससीटेशन आफ इण्डियन लिटरेचर ३, फरियार-पुकुर स्ट्रीट पो० आ० शामबाजार कलकत्ता, सस्करण १९०८ ई०।

११ दि पुराण इडक्स (जिल्द १ २ और ३) सपादक डा० वी० आर० रामचन्द्र दीक्षितार, प्रका०, मद्रास विश्वविद्यालय १९५१, १९५२ ई०।

१२ दि ब्रह्मवैवर्त पुराण अनु० राजेन्द्रनाथ सेन दि पाणिनि आफिस भुवनेश्वरी

दि ब्रह्माण्ड द प्रकृति खण्ड) आश्रम, बहादुर-गज, इलाहाबाद।

१३ *दि हिस्ट्री एण्ड कल्चर आफ दि इण्डियन पीपुल दि क्लासिकल एज जिल्द २* — *सम्पा० आर० सी० मजूमदार प्रका० भारतीय विद्या* भवन बम्बई प्रथम सस्करण १६५४ ई०।

१४ फोक टेल — स्टिथ थामसन।

१५ माइथालाजी — एडिथ हैमिल्टन ए मेण्टर बुक दि न्यू अमेरिकन लाइब्रेरी यूयाक अष्टम सस्करण, नवम्बर १६५७ ई०।

१६ रशियन फाक्टेल — सोलोकाव।

१७ वेदिक इडक्स — मैक्डॉनेल आगरा विश्वविद्यालय पुस्तकालय स प्राप्त।

१८ स्टण्डड डिक्शनरी आफ फोकलार माईथालाजी एण्ड लीजेण्ड [भाग १ २ — सम्पा० मेरिया लीच, न्यूयाक, प्र० स० १६५६ ई०।

१६ स्टारी आफ नल — सम्पा० एम० मोनियर विलियमस आक्सफड प्रिफेस द्वितीय सस्करण।

२० हिन्दूइज्म — एम० मानियर विलियमस, सुशील गुप्त (इण्डिया) लि०, कलकत्ता, द्वितीय सस्करण १६५१ ई०।

सहायक लेख-सूची

१ आख्यानक काव्य — सत्यजीवन वमा नागरी प्रचारिणी पत्रिका काशी भाग ६ अक ३ स० १६८२ वि० पृ० २८७।

२ नरपति व्यास कृत 'नल दमयती कथा — डा० शिवगोपाल मिश्र नागरी प्रचारिणी पत्रिका, काशी भाग २०, अक २, अप्रल जून, १६६६ ई०।

३ भारत की स्वणयुगीन सस्कृति का परिचायक— माकण्डेय पुराण — डा० वासुदेवशरण अग्रवाल साप्ताहिक हिन्दुस्तान नयी दिल्ली।